Index No ......

संतबानी संग्रह

भाग २

(शब्द)

जिस में

३४ संतो, साधों और परम भक्तों के चुने हुए शब्द मय टिप्पनी और संक्षिप्त जीवन-चरित्र उन महात्माओं के जिन की साखी भाग १ में नहीं दी है छापे गये हैं

"न भूतो न भविष्यति"—सुधाकर

—— * ——

इलाहाबाद

बेलवेडियर प्रिंटिंग वर्क्स में प्रकाशित हुआ।

सन् १९७२ ई०

द्वितीय संस्करण] [दाम ?॥)

Printed at The Belvedere Printing Wor , Allahabad by .. Hall

संतबानी

संतबानी पुस्तक माला के छापने का अभिप्राय जक्त प्रसिद्ध महात्माओं की बानी और उपदेश को जिन का लोप होता जाता है बचा लेने का है। जितनी बानियाँ हमने छापी हैं उन में से विशेष तो पहिले छपी ही नहीं थीं और जो छपी थीं सो प्राय. ऐसे छिन्न भिन्न और बेजोड रूप में या क्षेपक और त्रुटि से भरी हुई कि उन से पूरा लाभ नहीं उठ सकता था।

हमने देश देशान्तर से बड़े परिश्रम और व्यय के साथ हस्तलिखित दुर्लभ ग्रंथ या फुटकल शब्द जहाँ तक मिल सके असल या नकल कराके मँगवाये। भर सक तो पूरे ग्रंथ छापे गये हैं और फुटकल शब्दों की हालत में सर्व साधारन के उपकारक पद चुन लिये हैं, प्राय' कोई पुस्तक बिना दो लिपियों का मुकाबला किये और ठीक रीति से शोधे नहीं छापी गई है और कठिन और अनूठे शब्दों के अर्थ और संकेत फुट नोट में दे दिये हैं। जिन महात्मा की बानी है उन का जीवन-चरित्र भी साथ ही छापा गया है और जिन भक्तों और महापुरुषों के नाम किसी बानी में आये हैं उन के वृत्तांत और कौतुक संक्षेप से फुट-नोट में लिख दिये गये हैं।

दो अंतिम पुस्तकें इस पुस्तक माला की अर्थात् "संतबानी संग्रह" भाग १ [साखी] और भाग २ [शब्द] छप चुकीं जिन का नमूना देख कर महामहोपाध्याय श्री पंडित सुधाकर द्विवेदी वैकुंठ-वासी ने गद्गद होकर कहा था—"न भूतो न भविष्यति"।

एक अनूठी और अद्वितीय पुस्तक, महात्माओं और बुद्धिमानों के बचनों की "लोक परलोक हितकारी" नाम की गद्य में सन् १९१९ में छपी है जिसके विषय में श्रीमान महाराजा काशी नरेश ने लिखा है—"वह उपकारी शिक्षाओं का अचरजी संग्रह है जो सोने के तोल सस्ता है"।

पाठक महाशयों की सेवा में प्रार्थना है कि इस पुस्तक-माला के जो दोष उन की दृष्टि में आवें उन्हें हम को कृपा करके लिख भेजें जिस से वह दूसरे छापे में दूर कर दिये जावें।

हिन्दी में और भी अनूठी पुस्तकें छपी हैं जिन में प्रेम कहानियों के द्वारा शिक्षा बतलाई गई है—उनके नाम और दाम इस पुस्तक के अन्त वाले पृष्ठ में देखिये।

मनेजर, बेलवेडियर छापाखाना,
इलाहाबाद

मई सन् १९२२ ई०

प्रथम संस्करण

की

सूचना

यह संग्रह प्राचीन संतों और महात्माओं की बानी का जिन में से बहुतों के पंथ भारतवर्ष में प्रचलित हैं हमारे बैकुंठबासी मित्र, संतबानी के रसिक, ज्योतिष विद्या के सूर्य महामहोपाध्याय पंडित सुधाकर द्विवेदी के आग्रह से छः बरस हुए आरंभ किया गया था और थोड़े से महात्माओं की साखियाँ और पद जो उनके जीवन समय में चुने जा चुके थे उन को दिखलाये गये जिन को पढ़ कर वह गद्गद होकर बोले "न भूतो न भविष्यति"। इस पर महंत गुरुप्रसाद जी जो पास बैठे थे बोले कि पंडित जी आपने इस नमूने के विषय में जो "न भूतो" कहा वह तो ठीक है पर "न भविष्यति" कैसे कहा, क्या आगे इस से बढ़कर संग्रह संतबानी का नहीं रचा जा सकता? पंडित जी ने जवाब दिया कि हाँ यदि इन संतों से बढ़कर महात्मा औतार धरें या यही संत फिर देह धर कर इस से उत्तम बानी कथैं तो हो सकता है क्योंकि इन महात्माओं की बानी का हीर संग्रहकर्त्ता ने काढ़ कर धर दिया है।

पंडित जी के चोला छोड़ने पर इस संग्रह के पूरा करने का उत्साह भी सम्पादक का ढीला हो गया परन्तु अब कि संतबानी पुस्तक माला के जितने ग्रंथ छापने को थे छप चुके अपने मित्र की इच्छानुसार इस ग्रन्थ के पूरा करने की ओर ध्यान गया और यथा शक्ति ठीक करके वह अब छापा जाता है।

इस ग्रन्थ के दो भाग रक्खे गये हैं—पहिला साखी संग्रह और दूसरा शब्द संग्रह। पहिले भाग में कुल ऐसे महात्मा जिनकी साखियाँ हम को मिलीं छापी गई हैं और उनका संक्षिप्त जीवन चरित्र हर एक की बानी के सिरे पर दे दिया गया है। ऐसे महात्मा जिन के केवल पद मिले उनका संक्षिप्त जीवन वृत्तान्त दूसरे भाग में इसी प्रकार से दिया गया है। सब मिला कर ३९ महात्माओं की चुनी हुई बानी इस ग्रन्थ के दोनों भागों में छपी हैं जिन में से २४ महात्मा वह हैं जिन के ग्रन्थ सन्तबानी पुस्तक माला में छप चुके हैं—उन में ऐसी रोचक साखियाँ और पद बढ़ा दिये गये हैं जो पीछे से मिले।

इन के सिवाय १० ऐसे महात्मा जिनकी बानी पहिले इस कारन से नहीं छपी कि या तो वह बहुत जगह छप चुकी है या उसके थोडे ही पद मिले उनकी चुनी हुई साखी और शब्द भी इस संग्रह में छाप दिये गये हैं चाहे वह एक ही पद हो। इन महात्माओं के नाम नीचे दिये हैं:—

संतबानी पुस्तक-माला वाले महात्मा

१ कबीर साहिब	९ धरनीदासजी	१७ चरनदासजी
२ रैदास जी	१० जगजीवन साहिब	१८ सहजो बाई
३ धनी धर्म्मदासजी	११ यारी साहिब	१९ दया बाई
४ गुरु नानक	१२ दरिया साहिब (बिहार)	२० गरीबदासजी
५ मीरा बाई	१३ दरिया साहिब (मारवाड)	२१ गुलाल साहिब
६ दादू दयाल	१४ दूलनदासजी	२२ भीखा साहिब
७ बाबा मलूक दास	१५ बुल्ला साहिब	२३ पलटू साहिब
८ सुन्दरदासजी	१६ केशवदासजी	२४ तुलसी साहिब

[गुरु नानक साहिब के पद और सुंदरदासजी व पलटू साहिब की साखियाँ पहिले नहीं छपी थीं अब मिली हैं]

दूसरे महात्मा

१ पीपाजी	६ नरसी मेहता
२ नामदेवजी	७ गुसाईं तुलसीदासजी
३ सदनाजी	८ नाभाजी
४ सूरदासजी	९ बुल्लेशाह
५ स्वामी हरिदास	१० काष्ठ जिह्वा स्वामी

बानियाँ महात्माओं की उनके जीवन समय के क्रम में रक्खी गई हैं जिस से समय समय की परमार्थी उन्नति, बिबेक, बिचार और भाषा की दशा दरस जाय।

शब्दों की अक्षर-रचना और मात्रा प्रत्येक देश की बोली और लेख के अनुसार रक्खी गई है जिस में मूल न बदले, सब को भाषा के एक ही साँचे में नहीं डाला गया है—जैसे पंजाबी भाषा में "कुछ" को "कुज", "बैठा" को "बहु" कहते हैं, राजपूताना में "ठाँव" को "ठाँव", "दीया" को "दप्या" "सुना" को "सुएया", इत्यादि।

अन्य भाषाओं के पदों और शब्दों के अर्थ, और सकेतों या किस्सा तलब बातों की कथा या भेद फुट नोट में थोडे में जता दिये गये हैं।

भूल और अशुद्धियाँ जो संतबानी पुस्तक-माला के मूल पाठ या नई लिपियों में पाई गईं यह भर सक सुधार दी गई हैं और छापे की त्रुटियाँ जो आँख की चूक से रह गईं और विशेष कर प्रेस के दबाव से मात्राओं के टूट जाने से पैदा हो गईं एक शुद्धि पत्र में दिखला दी गई हैं।

अंत में हम अपने उन सहायकों को हृदय से धन्यवाद देते हैं जिन्होंने नये पद या साखियाँ भेज कर या पदों और साखियों के क्रम से बैठालने और मूल या छापे की त्रुटियों के शोधने में इस काम मे सहायता की। संत सम्पूरनसिंह जी ने तरनतारन जिला अमृतसर से गुरु नानक साहिब और बुल्ले शाह की साखियाँ भेजीं, पंडित हरिनारायण जी पुरोहित बी० ए० (जयपुर राज के अकौन्टन्ट जेनरल) ने महात्मा सुन्दरदासजी की उत्तम साखियाँ, और ठाकुर गंगाबख्श सिंह (जमींदार मौजा टेंडवा जिला फैजाबाद) ने पलटू साहिब और दूलनदासजी की बहुत सी साखियाँ और पद भेजे, और लाला गिरधारी लाल साहिब (रईस धौलपुर) ने कबीर साहिब की साखियों की तर्तीब और नई साखियों के भेजने में सहायता की। बाबा अचिन्त राम साधू राधास्वामी मत (इलाहाबाद) ने मूल पाठ के शोधने और सकेतों का भेद लिखने में असली और पूरी मदद दी, और बाबू वैष्णवदास साहिब बी० ए० (अकौन्टन्ट जेनरल रियासत इन्दौर) और बाबू तेजसिंहजी बी० ए०, एल० एल० बी० (राव बख्शी खुमानसिंह साहिब सी० एस० आई० इन्दौरवाले के पोते) से पदों को क्रम से स्थापन करने और प्रूफ के शोधने में सहायता मिली। राय बहादुर लाला श्याम सुन्दर लाल साहिब, बी० ए०, सी० आई० ई० (मुरार, ग्वालियर) जो इस परोपकार के काम में जीवन-चरित्र आदि का मसाला भेजने में मददगार रहे उनकी सहायता किसी से कम नहीं रही। इन सब महाशयों को हम पुन पुन धन्यवाद देते हैं॥

सब मिला कर २५५० चुनी हुई साखियाँ भाग १ में और ६०३ पद भाग २ में छपे हैं। यदि कोई प्रेमी और रसिक जन इस सूचना के पृष्ठ २ वाले महात्माओं की उत्तम और मनोहर साखियाँ या पद जो संतबानी पुस्तक माला के किसी ग्रंथ में नहीं छपे हैं कृपा पूर्वक चुन कर भेज देंगे वह धन्यवाद सहित दूसरे छापे में शामिल किये जायँगे।

अब सब लिपियाँ संतबानी की जो सम्पादक ने अनुमान बीस बरस के उद्योग से इकट्ठा करके यथा शक्ति उन की त्रुटियों को ठीक किया था छप चुकीं सिवाय पलटू साहिब की थोड़ी सी मनोहर साखियों और बहुत से उत्तम पदों के जो उन महात्मा की बानी छापने के पीछे हम को मिले। यह पुराने पदों के साथ तीन भागों में इस क्रम से रक्खे गये हैं कि पहिले भाग में केवल कुंडलियाँ दूसरे भाग में रेख्ते, झूलने, अरिल, छंद और कवित और तीसरे भाग में रागों के पद या भजन और साखियाँ और कवित अनेक त्रुटियाँ भी जो पुराने छापे में रह गई थीं नई लिपि से मिलान करके सुधार दी गई हैं और नई टिप्पनियाँ फुट नोट में रख दी गई हैं ॥

इलाहाबाद,
मई सन् १९१५

अधम,
संतबानी पुस्तक-माला सम्पादक।

दूसरे छापे की सूचना

यह हर्ष का विषय है कि संतबानी के प्रेमी जनों ने संतबानी पुस्तक माला को अपना कर मुझे पूरी सहायता दी। उसी का फलस्वरूप संतबानी-संग्रह भाग २ का द्वितीय संस्करण उनकी सेवा में उपस्थित करता हूँ। गुरु नानक साहिब के पद सुन्दरदास जी और पलटू साहिब की साखियां भी छप कर तैयार हैं।

इलाहाबाद
जून सन १९२२

प्रकाशक

कबीर साहिब

—— ❀ ——

[संक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये देखो पृष्ठ १ भाग १ संतबानी संग्रह]

॥ गुरुदेव ॥

(१)

चल सतगुरु की हाट, ज्ञान बुधि लाइये ।
कीजे साहिब से हेत, परम पद पाइये ॥१॥
सतगुरु सब कछु दीन्ह, देत कछु ना रह्यो ।
हमहिं अभागिनि नारि, सुक्ख तजि दुख लह्यो ॥२॥
गई पिया के महल, पिया सँग ना रची ।
हृदे कपट रह्यो छाय, मान लज्जा भरी ॥३॥
जहवाँ गैल सिलहली, चढ़ौं गिरि गिरि पड़ौं ।
उठौं सम्हारि सम्हारि, चरन आगे धरौं ॥४॥
जो पिय मिलन की चाह, कौन तेरे लाज हो ।
अधर मिलो ना जाय, भला दिन आज हो ॥५॥
भला बना सजोग, प्रेम का चोलना ।
तन मन अरपौ सीस, साहिब हँस बोलना ॥६॥
जो गुरु रूठे होयँ, तो तुरत मनाइये ।
हुइये दीन अधीन, चूक बकसाइये ॥७॥
जो गुरु होयँ दयाल, दया दिल हेरिहैं ।
कोटि करम कटि जायँ, पलक छिन फेरिहैं ॥८॥
कहै कबीर समुझाय, समुझ हिरदे धरो ।
जुगन जुगन करो राज, ऐसी दुर्मति परिहरो ॥९॥

पानी पवन की गम नहीं, वोहि लोक मँझारा ।
ताही बिच इक रूप है, वोहि ध्यान लगावो ॥३॥
जिमीं असमान उहाँ नहीं, वो अजर कहावै ।
कहै कबीर सोइ साध जन, वा लोक मँझावै ॥४॥

(२)

हंसा करो नाम नौकरी ॥ टेक ॥
नाम बिदेही निसि दिन सुमिरै, नहिं भूलै छिन घरी ॥१॥
नाम बिदेही जो जन पावै, कभुँ न सुरति बिसरी ॥२॥
ऐसो सबद सतगुरु से पावै, आवा गवन हरी ॥३॥
कहै कबीर सुनो भइ साधो, पावै अमर नगरी ॥४॥

(३)

जो जन लेहिं खसम का नाउँ, तिन के सद बलिहारी जाउँ॥१
जो गुरु के निर्मल गुन गावै, सो भाई मेरे मन भावै ॥२॥
जेहि घट नाम रह्यो भरपूर, तिन की पग पंकज हम धूर॥३
जाति जुलाहा मति का धीर, सहज सहज गुन रमे कबीर॥४

॥ चितावनी ॥

(१)

मन फूला फूला फिरै, जक्त में कैसा नाता रे ॥टेक॥
माता कहै यह पुत्र हमारा, बहिन कहै बिर[1] मेरा ।
भाई कहै यह भुजा हमारी, नारि कहै नर मेरा ॥१॥
पेट पकरि के माता रोवै, बाँहि पकरि के भाई ।
लपटि झपटि के तिरिया रोवै, हंस अकेला जाई ॥२॥

---

(१) बीर=भाई।

जब लगि जीवै माता रोवै, बहिन रोवै दस मासा ।
तेरह दिन तक तिरिया रोवै, फेर करै घर बासा ॥३॥
चार गजी चरगजी मंगाया, चढ़ा काठ की घोड़ी ।
चारो कोने आग लगाया, फूंक दियो जस होरी ।४।
हाड जरै जस लाह कड़ी को, केस जरै जस घासा ।
सोना ऐसी काया जरि गइ, कोई न आयो पासा ॥५॥
घर की तिरिया ढूँढन लागी, ढूँढ़ि फिरी चहुँ देसा ।
कहै कबीर सुनो भइ साधो, छाडौ जग की आसा ॥६॥

(२)

सुगवा पिंजरवा छोरि करि भागा ॥ टेक ॥
इस पिंजरे मैं दस दरवाजा,
दसो दरवाजे किवरवा लागा ॥१॥
अँखियन सेती नीर बहन लग्यो,
अब कस नाहिं तू बोलत अभागा ॥२॥
कहत कबीर सुनो भइ साधो,
उड़ि गे हंस टूटि गयो तागा ॥३॥

(३)

कौनो ठगवा नगरिया लूटल हो ॥ टेक ॥
चंदन काठ कै बनल खटोलना, ता पर दुलहिन सूतल हो ॥१॥
उठो री सखी मोरी माँग सँवारो, दुलहा मोसे रूसल हो ॥२॥
आये जमराज पलँग चढ़ि बैठे, नैनन आँसू टूटल हो ॥३॥
चारि जने मिलि खाट उठाइन, चहुँ दिसि धू धू ऊठल हो ॥४॥
कहत कबीर सुनो भइ साधो, जग से नाता छूटल हो ॥५॥

(४)

बीती बहुत रही थोरी सी ॥ टेक ॥

खाट पड़े नर झाँखन लागे, निकसि प्रान गयो चोरी सी ॥१॥
भाई बंद कुटुंब सब आये, फूँक दियो मानो होरी सी ॥२॥
कहै कबीर सुनो भइ साधो, सिर पर देत हैं भौंरी सी ॥३॥

(५)

तोरी गठरी मैं लागे चोर, बटोहिया का रे सोवै ॥ टेक ॥

पाँच पचीस तीन हैं चुरवा, यह सब कीन्हा सोर—
बटोहिया का रे सोवै ॥ १ ॥
जागु सवेरा बाट अनेडा, फिर नहिं लागै जोर—
बटोहिया का रे सोवै ॥ २ ॥
भवसागर इक नदी बहतु है, बिन उतरे जाव बोर[1]—
बटोहिया का रे सोवै ॥ ३ ॥
कहै कबीर सुनो भइ साधो, जागत कीजे भोर—
बटोहिया का रे सोवै ॥ ४ ॥

(६)

करम गति टारे नाहिं टरी ॥ टेक ॥

मुनि बसिस्ट से पंडित ज्ञानी, सोधि के लगन धरी ।
सीता हरन मरन दसरथ को, बन मैं बिपति परी[2] ॥१॥
कहँ वह फंद कहाँ वह पारधि,[3] कहँ वह मिरग चरी[2] ।
सीता को हरि लेगयो रावन, सोने की लंक जरी[2] ॥२॥

---

(१) बुड, डूब । (२) रामचन्द्र जी का बनबास, उनके पिता दसरथ का उनके वियोग में प्रान तजना, मारीच को मृगा बना कर रावन का सीताजी को चुरा ले जाना, और फिर रामचन्द्र का रावन को मारना और लंका को जलाना यह कथा प्राय. सब लोग जानते हैं। (३) शिकारी ।

नीच हाथ हरिचन्द[1] बिकाने, बलि[2] पाताल धरी।
कोटि गाय नित पुन्न करत नृग, गिरगिट जोनि परी[3] ॥३॥
पाँडव जिन के आपु सारथी, तिन पर बिपति परी।
दुरजोधन को गर्ब घटायो, जदु कुल नास करी[4] ॥४॥
राहु केतु औ भानु चन्द्रमा, बिधि संजोग परी।
कहत कबीर सुनो भइ साधो, होनी हो के रही ॥५॥

---

(१) राजा हरिश्चन्द्र भारी दानी और सत्यवादी थे जिन्हों ने विश्वामित्रजी को अपना सब राज पाट यज्ञ की दक्षिणा में दे दिया इस पर मुनिजी ने तीन भार सोना दान प्रतिष्ठा का अपना और निकाला। राजा हरिश्चन्द्र ने उसके लिये काशी में जाकर अपने को एक डोमडे के हाथ और अपनी स्त्री और पुत्र को एक ब्राह्मण के हाथ बेच कर मुनि जी को संतुष्ट किया।

(२) राजा बलि बडे प्रतापी और दानी थे जिन के द्वारे पर आप भगवान बौना का भेष धर कर तीन परग पृथ्वी माँगने गये। जब राजा बलि ने संकल्प कर दिया तब भगवान ने बैराट रूप धारन करके एक परग में स्वर्गादिक और एक में सारी पृथ्वी नाप ली और कहा कि अब बाकी तीसरा परग देव। राजा ने अपना शरीर भेंट किया जिसे तीसरे परग से नाप कर भगवान ने उन्हें अमर करके पाताल का राज्य दिया।

(३) राजा नृग रोज एक लाख गऊ दान दिया करते थे। एक बार कोई गऊ जो पहिले दिन दान हो चुकी थी नई गउवों में आ मिली और राजा ने उसे अनजान में दूसरे ब्राह्मण को संकल्प कर दिया। इस पर पहिले और दूसरे दिन के दान पानेवाले ब्राह्मणों में झगडा मचा और दोनों राजा के पास न्याव को गये। दोनों वही गऊ लेने पर हठ करते थे इस लिये राजा की बुद्धि चकराई और सोच में पड कर दोनों की दलील पर सिर हिला देते। इस पर उन ब्राह्मणों ने सराप दिया कि तुम गिरगिट की तरह सिर हिलाते हो यही बन जावगे। इस लिये राजा नृग मरने पर गिरगिट की जोनी पाकर एक अंधे कुए में पडे हुए थे जब कृष्णावतार हुआ तब श्रीकृष्ण ने उनको तारा।

(४) पांडवों के रथ पर श्रीकृष्ण महाभारत की लडाई मे आप सारथी बने और दुरजोधन का घमंड तोडा और कौरवों के कुल का और (परम धाम सिधारने के पहिले) अपने जदु कुल का नाश किया। पांडवों पर यह बिपति पडी थी कि अपना सब राज पाट अपनी स्त्री द्रोपदी सहित कौरवों के हाथ जुए में हार गये और मुद्दत तक बनोबास में कष्ट उठाया।

(७)

और मुए का सोग करीजै, तै। कीजै जो आपन जीजै ॥१॥
मैं नहिं मरौं मरै संसारा, अब मोहिं मिला जियावनहारा २
या देही परिमल महकंदा, ता सुख बिसरे परमानन्दा ॥३॥
कुअटा[1] एक पंच पनिहारी, टूटी लेजुरि[2] भरैं मतिहारी[3] ॥४॥
कह कबीर इक बुद्धि बिचारी, नावह कुअटाना पनिहारी॥५

(८)

टुक जिंदगी बंदगी कर लेना, क्या माया मद मस्ताना ॥ टेक
रथ घोड़े सुखपाल पालकी, हाथी औ बाहन नाना।
तेरा ठाठ काठ की टाटी, यह चढ चलना समसाना[4] ॥१॥
कम पाट[5] पाटम्बर अम्बर, ज़री बक़ का बाना।
तेरे काज गजी गज चारिक[6], भरा रहै तोसाखाना ॥२॥
खर्चे की तदबीर करो तुम, मंजिल लंबी जाना।
पहिचन्ते का गाँव न मग में, चैाकी न हाट दुकाना ॥३॥
जीते जी ले जीति जनम को, यही गोय यहि मैदाना।
कहै कबीर सुनो भइ साधो, नहिं कलि तरन जतन आना ॥४

(९)

काया बैारी चलत प्रान काहे रोई ॥ टेक ॥
काया पाय बहुत सुख कीन्हो, नित उठि मलि मलि धोई।
सो तन छिया छार ह्वै जैहै, नाम न लैहै कोई ॥१॥
कहत प्रान सुनु काया बैारी, मोर तोर संग न होई।
तोहि अस मित्र बहुत हम त्यागा, संग न लीन्हा कोई ॥२॥

---

(१) छोटा कुआँ। (२) रस्सी। (३) मतिहीन, अज्ञान। (४) स्मसान=मुर्दा जलाने का घाट। (५) ऊनी कपड़ा। (६) चार एक।

ऊसर खेत कै कुसा मँगाये, चाँचर चवर[१] कै पानी।
जीवत ब्रह्म को कोई न पूजै, मुरदा कै मिहमानी ॥३॥
सिव सनकादि आदि ब्रह्मादिक, सेस सहस मुख होई।
जो जो जन्म लियो बसुधा[२] मेँ, थिर न रह्यो है कोई ॥४॥
पाप पुन्य हैँ जन्म सँघाती, समुझि देख नर लोई।
कहत कबीर अभि अंतर की गति, जानत बिरला कोई ॥५॥

(१०)

उपजै निपजै निपजि समाई, नैनन देखि चल्यो जग जाई ॥१
लाज न मरो कहो घर मेरा, अंत की बार नहीं कछु तेरा ॥२॥
अनेक जतन करि काया पाली, मरती बेर अगिन सँग जाली ३
चोवा चंदन मरदन अंगा, सो तन जरै काठ के संगा ।४॥
कहत कबीर सुनो रे गुनिया, बिनसै रूप देखैगी दुनियाँ ॥५॥

(११)

यही घड़ी यह वेला साधो ॥ टेक ॥
लाख खरच फिर हाथ न आवै, मानुष जनम सुहेला ॥१॥
ना कोइ संगी ना कोइ साथी, जाता हंस अकेला ॥२॥
क्योँ सोया उठि जागु सवेरे, काल मारैदा सेला[३] ॥३॥
कहत कबीर गुरू गुन गावो, झूठा है सब मेला ॥४॥

(१)

हटरी छोड़ि चला बनिजारा ॥ टेक ॥
इस हटरी बिच मानिक मोती, कोइ बिरला परखनहारा ॥१
इस हटरी के नौ दरवाजे, दसवाँ ठाकुरद्वारा ॥२॥
निकसि गइ थंभो ढहि परा मन्दिर, रलि गया चिक्कड़ गारा ३
कहत कबीर सुनो भइ साधो, झूठा जगत पसारा ॥४॥

(१) परती जमीन की छिछली तलैया। (२) पृथ्वी। (३) तलवार।

(१३)

होली

आई गवनवाँ की सारी, उमिरि अबहीं मोरी बारी ॥टेक॥
साज समाज पिया लै आये, और कहरिया चारी।
बम्हना बेदरदी अचरा पकरि कै, जोरत गँठिया हमारी।
सखी सब पारत गारी ॥ १ ॥
बिधि[1] गति बाम कछु समझ परत ना, बैरी भई महतारी।
रोय रोय अँखियाँ मोर पोंछत, घरवाँ से देत निकारी।
भई सब को हम भारी ॥ २ ॥
गवन कराय पिया लै चाले, इत उत बाट निहारी।
छूटत गाँव नगर से नाता, छूटै महल अटारी।
करम गति टरै न टारी ॥ ३ ॥
नदिया किनारे बलम मोर रसिया, दीन्ह घुँघट पट टारी।
थरथराय तन काँपन लागे, काहू न देख हमारी।
पिया लै आये गोहारी ॥ ४ ॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो, यह पद लेहु बिचारी।
अब के गौना बहुरि नहिं औना, करिले भेंट अँकवारी।
एक बेर मिलि ले प्यारी ॥ ५ ॥

॥ लव ॥

जो कोइ या विधि मन को लगावै, मन के लगाये प्रभु पावै॥१
जैसे नटवा चढ़त बाँस पर, ढोलिया ढोल बजावै।
अपना बोझ धरै सिर ऊपर, सुरति बरत[2] पर लावै ॥२॥
जैसे भुवगम[3] चरत बनहिं में, ओस चाटने आवै।
कभी चाटै कभी मनि तन चितवै, मनि तजि प्रान गँवावै ॥३

(१) ब्रह्मा। (२) डोरी। (३) साँप।

जैसे कामिनि भरे कूप जल, कर छोड़े बतरावै[1]।
अपना रँग सखियन सँग राचै, सुरति गगर पर लावै ॥४॥
जैसे सती चढ़ी सर[2] ऊपर, अपनी काया जरावै।
मातु पिता सब कुटुंब तियागै, सुरति पिया पर लावै ॥५॥
धूप दीप नैवेद अरगजा, ज्ञान की आरत लावै।
कहै कबीर सुनो भाई साधो, फेर जनम नहिं पावै ॥६॥

॥ बिरह ॥

(१)

बालम आओ हमारे गेह रे, तुम बिन दुखिया देह रे ॥टेक॥
सब कोइ कहै तुम्हारी नारी, मो को यह संदेह रे।
एकमेक ह्वै सेज न सोवै, तब लगि कैसो सनेह रे ॥१॥
अन्न न भावै नींद न आवै, गृह बन धरै न धीर रे।
ज्यौं कामी को कामिनि प्यारी, ज्यौं प्यासे को नीर रे ॥२॥
है कोइ ऐसा परउपकारी, पिय से कहै सुनाय रे।
अब तो बेहाल कबीर भयो है, बिन देखे जिव जाय रे ॥३

(२)

प्रीति लगी तुम नाम की, पल बिसरै नाहीं।
नजर करो अब मिहर की, मोहिं मिलो गुसाईं ॥१॥
बिरह सतावै मोहिं को, जिव तड़पै मेरा।
तुम देखन की चाव है, प्रभु मिलो सवेरा ॥२॥
नैना तरसै दरस को, पल पलक न लागै।
दर्दवंद दीदार का, निसि बासर जागै ॥३॥
जो अब के प्रीतम मिलैं, करूँ निमिख[3] न न्यारा।
अब कबीर गुरु पाइया, मिला प्रान पियारा ॥४॥

(१) बात करती है। (२) आग, चिता। (३) छिन भर।

(३)

मिलना कठिन है, कैसे मिलैंगी पिय जाय ॥टेक॥
समझि सोचि पग धरौं जतन से, बार बार डिग जाय।
ऊंची गैल राह रपटीली, पाँव नहीं ठहराय ॥१॥
लोक लाज कुल की मरजादा, देखत मन सकुचाय।
नैहर बास बसौं पीहर में, लाज तजी नहिं जाय ॥२॥
अधर भूमि जहँ महल पिया का, हम पै चढ़ो न जाय।
धन भइ बारी पुरुष भये भोला, सुरत झकोला खाय ॥३॥
दूती सतगुरु मिले बीच में, दीन्हो भेद बताय।
दास कबीर पिया से भैंटे, सीतल कंठ लगाय ॥४॥

(४)

कैान मिलावै मोहिं जोगिया हो, जोगिया बिन रह्यो न जाय ॥टेक॥
हैाँ[1] हिरनी पिय पारधी[2] हो, मारे सबद के बान।
जाहि लगी सो जानही हो, और दरद नहिं जान ॥१॥
मैं प्यासी हैाँ पीव की हो, रटत सदा पिव पीव।
पिया मिलै तो जीव है, ना तो सहजे त्यागैाँ जीव ॥२॥
पिय कारन पियरी भई हो, लोग कहैं तन रोग।
छः छः लंघन मैं करौं रे, पिया मिलन के जोग ॥३॥
कह कबीर सुन जोगिनी हो, तन में मनहिं मिलाय।
तुम्हरी प्रीति के कारने हो, बहुरि मिलैंगे आय ॥४॥

(५)

होली

ये अँखियाँ अलसानी हो, पिय सेज चलो ॥ टेक ॥
खभ पकरि पतंग अस डोलै, बोलै मधुरी बानी ॥१॥
फूलन सेज बिछाय जो राख्यो, पिया बिना कुम्हिलानी ॥२॥

---

(१) मैं। (२) शिकारी।

धीरे पाँव धरौ पलँगा पर, जागत ननद जिठानी ॥३॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो, लोक लाज बिलछानी[1] ॥४॥

(६)

होली

नैहरवा हम काँ नहिं भावै ॥ टेक ॥
साईं की नगरी परम अति सुन्दर, जहँ कोइ जाय न आवै।
चाँद सुरज जहँ पवन न पानी, को संदेस पहुँचावै,
दरद यह साईं को सुनावै ॥ १ ॥
आगे चलौं पथ नहिं सूझै, पीछे दोष लगावै।
केहि बिधि ससुरे जावँ मोरी सजनी, बिरहा जोर जनावै,
बिषै रस नाच नचावै ॥ २ ॥
बिन सतगुरु अपनो नहिं कोई, जो यह राह बतावै।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, सुपने न प्रीतम पावै,
तपन यह जिय की बुझावै ॥ ३ ॥

॥ प्रेम ॥

(१)

बहुत दिनन मैं प्रीतम आये, भाग भले घर बैठे पाये ॥१॥
मंगलचार महा मन राखो, नाम रसायन रसना[2] चाखो ॥२॥
मंदिर महा भयो उँजियारा, लै सूती अपने पिय प्यारा ॥३
मैं निरास जो नौनिधि पाई, कहा करौं पिय तुम्हरी बड़ाई ४
कहत कबीर मैं कछु नहिं कीन्हा, सहज सुहाग पिया मोहि दीन्हा ॥५॥

(२)

घूँघट का पट खोल रे, तो को पीव मिलैंगे ॥टेक॥
घट घट मैं वोहि साईं रमता, कटुक बचन मत बोल रे (तो को०)
धन जोबन का गर्ब न कीजै, झूठा पचरँग चोल रे (तो को०) ॥२॥

(१) छोड़ी। (२) जीभ।

सुन्न महल मैं दिया ना बारिले, आसा से मत डोल रे (तो को०) ३
जोग जुगत से रंग महल मैं, पिय पाये अनमोल रे (तो को०) ॥४॥
कह कबीर आनद भयो है, बाजत अनहद ढोल रे (तो को०) ॥५॥

(३)

मैं तो वा दिन फग मचैहौं, जा दिन पिया मोरे द्वारे ऐहैं ॥टेक॥
रंग वही रँगरेजवा वाही, सुरँग चुनरिया रँगैहौं ॥१॥
जोगिन होइ के बन बन ढूँढौं, वाही नगर मैं रहिहौं ॥२॥
बालपना गल सेलिह बनैहौं, अग भभूत लगैहौं ॥३॥
कह कबीर पिय द्वारे ऐहैं, केसर माथ रँगैहौं ॥४॥

(४)

पिया मेरा जागै मैं कैसे सोई री ॥ टेक ॥
पाँच सखी मेरे सँग की सहेली,
उन रँग रँगी पिया रँग न मिली री ॥ १ ॥
सास सयानी ननद बौरानी,
उन डर डरी पिय सार न जानी री ॥ २ ॥
द्वादस ऊपर सेज बिछानी,
चढ़ न सकौं मारी लाज लजानी री ॥ ३ ॥
रात दिवस मोहिं कूका मारै,
मैं न सुना रचि रहि सँग जार री ॥ ४ ॥
कह कबीर सुनु सखी सयानी,
बिन सतगुरु पिय मिले न मिलानी री ॥ ५ ॥

(५)

मोरे लगि गये बान सुरंगी हो ॥ टेक ॥
धन सतगुरु उपदेस दियो है, होइ गयो चित्त भिरंगी हो ॥१॥
ध्यान पुरुष की बनी है तिरिया, घायल पाँचो संगी हो ॥२॥

घायल की गति घायल जानै, क्या जानै जाति पतंगी हो ॥३॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो, निसि दिन प्रेम उमंगी हो ॥४॥

(६)

हमन हैं इश्क मस्ताना, हमन को होसियारी क्या।
रहैं आजाद या जग से, हमन दुनिया से यारी क्या ॥१॥
जो बिछुड़े हैं पियारे से, भटकते दर बदर फिरते।
हमारा यार है हम मैं, हमन को इन्तिजारी क्या ॥२॥
खलक सब नाम अपने को, बहुत कर सिर पटकता है।
हमन गुरु नाम साचा है, हमन दुनिया से यारी क्या ॥३॥
न पल बिछुड़ै पिया हम से, न हम बिछुड़ैं पियारे से।
उन्हीं से नेह लागी है, हमन को बेकरारी क्या ॥४॥
कबीरा इश्क का माता, दुई को दूर कर दिल से।
जो चलना राह नाजुक है, हमन सिर बोझ भारी क्या ॥५॥

(७)

मन लागो मेरो यार फकीरी मैं ॥ टेक ॥
जो सुख पावो नाम भजन मैं, सो सुख नाहिं अमीरी मैं ॥१॥
भला बुरा सब को सुनि लीजै, कर गुजरान गरीबी मैं ॥२॥
प्रेम नगर मैं रहनि हमारी, भलि बनि आई सबूरी मैं ॥३॥
हाथ मैं कूँड़ी बगल मैं सोंटा, चारो दिसि जागीरी मैं ॥४॥
आखिर यह तन खाक मिलैगा, कहा फिरत मगरूरी मैं ॥५॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो, साहिब मिलै सबूरी मैं ॥६॥

(८)

साधो सहज समाधि भली।
गुरु प्रताप जा दिन से जागी, दिन दिन अधिक चली ॥१॥
जहँ जहँ डोलौं सो परिकरमा, जो कछु करौं सो सेवा।
जब सोवौं तब करौं दंडवत, पूजौं और न देवा ॥२॥

कहौँ तो नाम सुनौँ सो सुमिरन, खावँ पियौँ सो पूजा।
गिरह उजाड एक सम लेखौँ, भाव मिटावौँ दूजा ॥३॥
आँख न मूँदौँ कान न रूँधौँ, तनिक कष्ट नहिँ धारौँ।
खुले नैन पहिचानौँ हँसि हँसि, सुंदर रूप निहारौँ ॥४॥
सबद निरन्तर से मन लागा, मलिन वासना त्यागी।
ऊठत बैठत कबहुँ न छूटै, ऐसी तारी लागी ॥५॥
कह कबीर यह उनमुनि रहनी, सो परगट करि गाई।
दुख सुख से कोइ परे परम पद, तेहि पद रहा समाई ॥६॥

(९)

गुरू ने मोहिँ दीन्ही अजब जडी ॥ टेक ॥
सोई जडी मोहिँ प्यारी लगतु है, अमृत रसन भरी ॥१॥
काया नगर अजब इक बँगला, ता में गुप्त धरी ॥२॥
पाँचो नाग पचीसो नागिन, सूँघत तुरत मरी ॥३॥
या कारे ने सब जग खायो, सतगुरु देख डरी ॥४॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो, लै परिवार तरी ॥५॥

(१०)

होली

ऋतु फागुन नियरानी, कोइ पिया से मिलावै ॥टेक॥
सोइ तो सुंदर जाको पिय को ध्यान है, सोइ पिय के मन मानी।
खेलत फाग अंग नहिँ मोडै, सतगुरु से लिपटानी ॥१॥
इक इक सखियाँ खेल घर पहुँचीं, इक इक कुल अरुझानी।
इक इक नाम बिना बहकानी, हो रहि ऐंचा तानी ॥२॥
पिय को रूप कहाँ लग बरनौँ, रूपहि माहिँ समानी।
जो रँग रँगे सकल छवि छाके, तन मन सभी भुलानी ॥३॥
यों मत जाने यहि रे फाग है, यह कछु अकथ कहानी।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, यह गति बिरले जानी ॥४॥

(१)
॥ विनय ॥
(चौपाई)

दरसन दीजे नाम सनेही। तुम बिन दुख पावै मेरी देही॥

(छंद)

दुखित तुम बिन रटत निसि दिन, प्रगट दरसन दीजिये।
बिनती सुन प्रिय स्वामियाँ, बलि जाऊँ बिलँब न कीजिये॥१

(चौपाई)

अन्न न भावै नींद न आवै। बार बार मोहिं बिरह सतावै॥

(छंद)

बिबिध बिधि हम भई ब्याकुल, बिन देखे जिव न रहै।
तपत तन जिव उठत झाला, कठिन दुख अब को सहै॥२॥

(चौपाई)

नैनन चलत सजल जल धारा। निसि दिन पंथ निहारौं तुम्हारा॥

(छंद)

गुन औगुन अपराध छिमा करि, औगन कछु न बिचारिये।
पतित-पावन राखु परमति[१], अपना पन न बिसारिये॥३॥

(चौपाई)

गृह, आँगन मोहिं कछुन सुहाई, बज्र भई और फिरयो न जाई॥

(छंद)

नैन भरि भरि रहे निरखत, निमिख नेह न तुड़ाइये।
बाँह दीजे बंदी-छोड़ा, अब के बंद छुड़ाइये॥४॥

(चौपाई)

मीन मरै जैसे बिन नीरा। ऐसे तुम बिन दुखित सरीरा॥

(छंद)

दास कबीर यह करत बिनती, महा पुरुष अब मानिये।
दया कीजे दरस दीजे, अपना करि मोहिं जानिये॥५॥

---

(१) उच्च मत या भाव।

(७)

दरमाँदे ठाढ़े दरबार ॥ टेक ॥
तुम बिन सुरत करै को मेरी, दरसन दीजै खोलि किवार ॥१॥
तुम हो धनी उदार दयालू, स्रवनन सुनियत सुजस तुम्हार ॥२॥
माँगों कौन रंक सब देखौं, तुमहीं तें मेरो निस्तार ॥३॥
जैदेव नामा बिप्र सुदामा[1], तिन पर किरपा भई अपार ॥४॥
कह कबीर तुम समरथ दाता, चार पदारथ देत न बार ॥५॥

॥ साधु ॥

नारद साध से अंतर नाहीं ।
जो कोइ साध से अंतर राखै, सो नर नरकै जाहीं ॥१॥
जागै साध तो मैं हूँ जागूँ, सोवै साध तो सोऊँ ।
जो कोइ मेरे साध दुखावै, जरा मूल से खोऊँ ॥२॥
जहाँ साध मेरो जस गावै, तहाँ करूँ मैं बासा ।
साध चलै आगे उठ धाऊँ, मोहिं साध की आसा ॥३॥
माया मेरी अर्ध-सरीरी, औ भक्तन की दासी ।
अठसठ तीरथ साध के चरनन, कोटि गया औ कासी ॥४॥
अंतर ध्यान नाम निज केरा, जिन भजिया तिन पाई ।
कहत कबीर साध की महिमा, हरि अपने मुख गाई ॥५॥

॥ सार गहनी ॥

मन मस्त हुआ तब क्यों बोलै ॥ टेक ॥
हीरा पायो गाँठ गठियायो, बार बार वा को क्यों खोलै ॥१॥
हलकी थी जब चढ़ी तराजू, पूरी भई तब क्यों तोलै ॥२॥
सुरत कलारी भइ मतवारी, मदवा पी गइ बिन तोले ॥३॥
हंसा पाये मानसरोवर, ताल तलैया क्यों डोलै ॥४॥

(१) जैदेव और नामदेव परम भक्त और सुदामा श्रीकृष्ण के सहपाठी महा दरिद्र थे, जिन की गाढ़ में भारी सहायता हुई ।

तेरा साहिब है घट माहीं, बाहर नैना क्यौं खोलै ॥५॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो, साहिब मिल गये तिल ओले[1] ॥६॥

॥ सतसग ॥

मैं तो आन पड़ी चोरन के नगर, सतसंग बिना जिय तरसे॥१॥
इस सतसँग मैं लाभ बहुत है, तुरत मिलावै गुरु से ॥२॥
मूरख जन कोइ सार न जानै, सतसँग मैं अमृत बरसे ॥३॥
सबद सा हीरा पटकि हाथ से, मुट्ठी भरी कंकर से ॥४॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो, सुरत करो वहि घर से ॥५॥

॥ भेद बानी ॥

(१)

सार सबद गहि बाचिहो[2], मानौ इतबारा ॥१॥
सत्त पुरुष अच्छै बिरिछ, निरंजन डारा ॥२॥
तीन देव साखा भये, पाती संसारा ॥३॥
ब्रह्मा बेद सही किया, सिव जोग पसारा ॥४॥
बिस्नु माया परगट किया, उरले[3] ब्योहारा ॥५॥
तिरदेवा ब्याधा[4] भये, लिये बिष का चारा ॥६॥
कर्म की बंसी डारि के, फाँसा संसारा ॥७॥
जोति सरूपी हाकिमा, जिन अमल पसारा ॥८॥
तीन लोक दसहूँ दिसा, जम रोके द्वारा ॥९॥
अमल मिटावौं ताहि का, पठवौं भव पारा ॥१०॥
कह कबीर अम्मर करौं, जो होय हमारा ॥११॥

(२)

महरम होय सो जानै साधो, ऐसा देस हमारा ॥टेक॥
बेद कतेब पार नहिं पावत, कहन सुनन से न्यारा।
जाति बरन कुल किरिया नाहीं, संध्या नेम अचारा ॥१॥

---

(१) ओट। (२) बचोगे। (३) इधर का अर्थात पिंड देश का। (४) चिड़ीमार।

विन जल बूँद परत जहँ भारी, नहिं मीठा नहिं खारा ।
सुन्न महल में नौवत बाजै, किंगरी बीन सितारा ॥२॥
विन बादर जहँ विजुरी चमकै, विन सूरज उँजियारा ।
विना सीप जहँ मोती उपजै, विन सुर सबद उचारा ॥३॥
जोति लजाय ब्रह्म जहँ दरसै, आगे अगम अपारा ।
कह कबीर वहँ रहनि हमारो, बूझै गुरुमुख प्यारा ॥४॥

(३)

रेखता

गंग औ जमुन के घाट को खोजि ले,
भँवर गुंजार तहँ करत भाई ।
सरसुती नीर तहँ देखु निर्मल बहै,
तासु के नीर पिये प्यास जाई ॥१॥
पाँच की प्यास तहँ देखि पूरी भई,
तीन की ताप तहँ लगै नाहीं ।
कहै कब्बीर यह अगम का खेल है,
गैब का चाँदना देख माहीं ॥२॥

(४)

रेखता

करत कलोल दरियाव के बीच में,
ब्रह्म की छौल में हंस झूलै ।
अर्ध औ उर्ध की पैंग बाढी तहाँ,
पलटि मन पवन को कँवल फूलै ॥१॥
गगन गरजै तहाँ सदा पावस झरै,
होत झनकार नित बजत तूरा ।
वेद कत्तेब की गम्म नाहीं तहाँ,
कहै कब्बीर कोइ रमै सूरा ॥२॥

॥ उपदेश ॥

(१)

छाड़ि दे मन बौरा डगमग ॥ टेक ॥
अब तो जरे मरे बनि आवै, लीन्हो हाथ सिंधोरा।
प्रीत प्रतीत करो दृढ़ गुरु की, सुनो सबद घनघोरा॥१॥
होइ निसंक मगन ह्वै नाचै, लोभ मोह भ्रम छाडै।
सूरा कहा मरन से डरपै, सती न संचय भाँडे[1]॥२॥
लोक लाज कुल की मरजादा, यही गले मैं फाँसी।
आगे ह्वै पग पाछे धरिहो, होय जक्त मैं हाँसी॥३॥
अगिन जरे ना सती कहावै, रन जूझे नहिं सूरा।
बिरह अगिन अंतर मैं जारै, तब पावै पद पूरा॥४॥
यह संसार सकल जग मैला, नाम गहे तेहि सूचा।
कहै कबीर भक्ति मत छाड़ो, गिरत परत चढु ऊँचा॥५॥

(२)

अवधू भूले को घर लावै, सो जन हम को भावै ॥टेक॥
घर मैं जोग भोग घर ही मैं, घर तजि बन नहिं जावै।
बन के गये कलपना उपजे, तब धौं कहाँ समावै॥१॥
घर मैं जुक्ति मुक्ति घर ही मैं, जो गुरु अलख लखावै।
सहज सुन्न मैं रहै समाना, सहज समाधि लगावै॥२॥
उनमुनि रहै ब्रह्म को चीन्है, परम तत्त को ध्यावै।
सुरत निरत से मेला करिके, अनहद नाद बजावै॥३॥
घर मैं बसत बस्तु भी घर है, घर ही बस्तु मिलावै।
कहै कबीर सुनो हो अवधू, ज्यौं का त्यों ठहरावै॥४॥

(३)

भजि ले सिरजनहार, सुघर तन पाय के ॥ टेक ॥
काहे रहो अचेत, कहाँ यह औसर पैहो।
फिर नहिं ऐसी देह, बहुरि पाछे पछितैहो॥

---

(१) बरतन।

लख चौरासी जोनि मैं, मानुप जन्म अनूप।
ताहि पाय नर चेतत नाहीं, कहा रंक कहा भूप ॥१॥
गर्भ वास मैं रह्यो, कह्यो मैं भजिहौं तोहीं।
निस दिन सुमिरौं नाम, कष्ट से काढ़ौ मोहीं ॥
चरनन ध्यान लगाइ के, रहौं नाम लौ लाय।
तनिक न तोहि बिसारिहौं, यह तन रहै कि जाय ॥२॥
इतना कियो करार, काढि गुरु बाहर कीन्हा।
भूलि गयो वह बात, भयो माया आधीना ॥
भूली बातैं उद्र की, आन पड़ी सुधि एत।
बारह बरस बीति गे या बिधि, खेलत फिरत अचेत ॥३॥
बिषया बान समान, देह जोबन मद माती।
चलत निहारत छाँह, तमक के बोलत बाती ॥
चोवा चंदन लाइ के, पहिरे बसन रँगाय।
गलियाँ गलियाँ झाँकी मारै, पर तिरिया लख मुसकाय ॥४॥
तरुनापन गइ बीत, बुढ़ापा आनि तुलाने।
काँपन लागे सीस, चलत दोउ चरन पिराने ॥
नैन नासिका चूवन लागे, मुख तैं आवत बास।
कफ पित कंठै घेर लियो है, छुटि गइ घर की आस ॥५॥
मातु पिता सुत नारि, कहो का के सँग जाई।
तन धन घर औ काम धाम, सबही छुटि जाई ॥
आखिर काल घसीटिहै, पड़िहैा जम के फन्द।
बिन सतगुरु नहि बाचिहैा, समुझ देख मति मन्द ॥६॥
सुफल होत यह देह, नेह सतगुरु से कीजै।
मुक्ती मारग जानि, चरन सतगुरु चित दीजै ॥

नाम गहौ निरभय रहौ, तनिक न व्यापै पीर ।
यह लीला है मुक्ति की, गावत दास कबीर ॥७॥

(८)

करो जतन सखि साइँ मिलन की ॥टेक॥
गुड़िया गुड़वा सूप सुपलिया ।
तजि दे बुधि लरिकैयाँ खेलन की ॥१॥
देवता पित्तर भुइयाँ भवानी ।
यह मारग चौरासी चलन की ॥२॥
ऊँचा महल अजब रँग बँगला ।
साईं की सेज जहाँ लगी फूलन की ॥३॥
तन मन धन सब अर्पन करि वहाँ ।
सुरत सम्हार परु पइयाँ सजन की ॥४॥
कहै कबीर निर्भय होय हंसा ।
कुंजी बता दौं ताला खुलन की ॥५॥

(९)

जाग पियारी अब का सोवै ।
रैन गई दिन काहे को खोवै ॥१॥
जिन जागा तिन मानिक पाया ।
तैं बौरी सब सोय गँवाया ॥२॥
पिय तेरे चतुर तू मूरख नारी ।
कबहुँ न पिय की सेज सँवारी ॥३॥
तैं बौरी बौरापन कीन्हो ।
भर जोबन पिय अपन न चीन्हो ॥४॥
जाग देख पिय सेज न तेरे ।
तोहि छाड़ि उठि गये सवेरे ॥५॥

कहै कबीर सोई धन जागे।
सबद बान उर अन्तर लागे ॥६॥

(६)

अँधियरवा मैं ठाढ़ि गोरी का करलू ॥ टेक ॥
जब लगि तेल दिया मैं बाती, येहि अँजोरवा बिछाय धलतू।
मन का पलँग सँतोष बिछौना, ज्ञान कै तकिया लगाय रखतू
जरि गया तेल बुझाय गइ बाती, सुरत मैं सुरत समाय रखतू
कहै कबीर सुनो भाई साधो, जोतिया मैं जोतिया मिलाय रखतू

(७)

उठे सोहंगम नारि, प्रीति पिय से करो।
यह उरले ब्योहार, दूर दुरमति धरो ॥१॥
पाँच चोर बड जोर, संगि एते घने।
इन ठगियन के साथ, मुसै घर निसु दिने ॥२॥
सोवत जागत चोर, करै चोरी घनी।
आपु भये कुतवाल, भली बिधि लूटहीं ॥३॥
द्वादस नगर मँझार, पुरुष इक देखिये।
सोभा अगम अपार, सुरति छबि पेखिये ॥४॥
होत सबद घनघोर, सख धुनि अति घनी।
ततन की झनकार, बाजत झीनी झिनी ॥५॥
है कोइ महरम साध, भले पहिचानिये।
सतगुरु कहैं कबीर, सत की बानि ये ॥६॥

(८)
राग जँतसार

सुरत मकरिया गाडहु हे सजनी—अहे सजनी।
दूनौं रे नयनवाँ जोतिया लावहु रे की ॥१॥

मन धरु मने धरु मन धरु हे सजनी—अहे सजनी।
अइसन समइया फिरि नहिं पावहु रे की ॥२॥
दिन दस रजनी सुख करु हे सजनी—अहे सजनी।
इक दिन चाँद छपाइल रे की ॥३॥
सँगहिं अछत पिया भरम भुलइली हे सजनी—अहे सजनी।
मोरे लेखे पिया परदेसहिं रे की ॥४॥
नव दस नदिया अगम बहे सोतिया हे सजनी—अहे सजनी।
बिचहिं पुरइनि दह[१] लागल रे की ॥५॥
फुल इक फुलले अनुप फुल सजनी—अहे सजनी।
तेहि फुल भँवरा लुभाइल रे की ॥६॥
सब सखि हिलि मिलि निज घर जाइब हे सजनी—अहे सजनी।
समुँद लहरिया समाइब रे की ॥७॥
दास कबीर यह गवलैं लगनियाँ हे सजनी—अहे सजनी।
अब तो पिया घर जाइब रे की ॥८॥

(६)

रेखता

सुख सिंध की सैर का स्वाद तब पाइहै,
चाह का चौतरा भूलि जावै।
बीज के माहिं ज्यों वृच्छ बिस्तार,
यों चाह के माहिं सब रोग आवै ॥१॥
दृढ बैराग में होय आरूढ मन,
चाह के चौतरे आग दीजै।
कहै कब्बीर यों होय निरबासना,
तत्त से रत्त ह्वै काज कीजै ॥२॥

---

(१) कोई का तलाव।

॥ मिश्रित ॥

तन मन धन बाजी लागी हो ॥ टेक ॥

चौपड खेलूँ पीव से रे, तन मन बाजी लगाय।
हारी तो पिय की भई रे, जीती तो पिय मोर हो ॥१॥
चौसरिया के खेल में रे, जुग्ग मिलन की आस।
नर्द अकेली रहि गई रे, नहिं जीवन की आस हो ॥२॥
चार बरन घर एक है रे, भाँति भाँति के लोग।
मनसा बाचा कर्मना, कोइ प्रीति निबाहै ओर हो ॥३॥
लख चौरासी भरमत भरमत, पौ पै अटकी आय।
जो अब के पौ ना पडी रे, फिर चौरासी जाय हो ॥४॥
कह कबीर धर्मदास से रे, जीती बाजी मत हार।
अब के सुरत चढ़ाइ दे रे, सोई सुहागिन नारि हो ॥५॥

(२)

या जग अंधा मैं केहि समुझावोँ ॥ टेक ॥

इक दुइ होयँ उन्हैं समझावोँ।
सबहि भुलाना पेट के धन्धा, मैं केहि० ॥१॥
पानी के घोडा पवन असवरवा।
ढरकि परै जस ओस के बुन्दा, मैं केहि० ॥२॥
गहिरी नदिया अगम बहै धरवा।
खेवनहारा पडिगा फन्दा, मैं केहि० ॥३॥
घर की वस्तु निकट नहिं आवत।
दियना बारि के ढूँढत अंधा, मैं केहि० ॥४॥
लागी आग सकल बन जरिगा।
बिन गुरुज्ञान भटकिगा बन्दा, मैं केहि० ॥५॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो।
इक दिन जाय लँगोटी झार बन्दा, मैं केहि० ॥६॥

(३)

पिया मिलन की आस, रहौँ कब लौँ खड़ी।
ऊँचे चढ़ि नहिं जाय, मनैं लज्जा भरी ॥१॥
पाँव नहीं ठहराय, चढ़ूँ गिरि गिरि पड़ूँ।
फिरि फिरि चढहुँ सम्हारि, तो पग आगे धरूँ ॥२॥
अंग अंग थहराय, तो बहु बिधि डरि रहूँ।
कर्म कपट मग घेरि, तो भ्रम मैं भुलि रहूँ ॥३॥
निपट अनारी बारि, तो झीनी गैल है।
अटपट चाल तुम्हारि, मिलन कस होइ है ॥४॥
तेजो[1] कुमति बिकार, सुमति गहि लीजिये।
सतगुरु सबद सम्हारि, चरन चित दीजिये ॥५॥
अंतर पट दे खोलि, सबद उर लाव री।
दिल बिच दास कबीर, मिलैं तोहि बावरी ॥६॥

(४)

ऐसो है रे भाई हरि रस ऐसो है रे भाई, जा के पिये अमर है जाई ॥१॥
ध्रुव पीया प्रहलादहु पीया, पीया मीराबाई।
बलख बुखारे के मीयाँ पीया, छोडी है बादसाही ॥२॥
हरि रस महँगा मोल का रे, पीयै बिरला कोय।
हरि रस महँगा सो पिये, जा के घर पै सीस न होय ॥३॥
आगे आगे दौँ जलै रे, पीछे हरिया होय।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, हरि भज निर्मल होय ॥४॥

(५)

जहँ सतगुरु खेलत ऋतु बसंत। परम जोत जहँ साध संत ॥१
तीन लोक से भिन्न राज। जहँ अनहद बाजा बजै बाज ॥२
चहुँ दिसि जोति की बहै धार। बिरला जन कोइ उतरै पार ॥३

(१) तजो।

...कुस्त जहँ जोरैं हाथ। कोटि बिरनु जहँ नवैं माथ ॥४॥
...ब्रह्मा पढ़ैं पुरान। कोटि महेस जहँ धरैं ध्यान ॥५॥
...सरस्वति धारैं राग। कोटि इन्द्र जहँ गगन लाग ॥६॥
...न्धर्व मुनि गने न जायँ। जहँ साहिब प्रगटे आप आय ७
...चदन औ अबीर। पुहुप बास रस रह्यो गंभीर ॥८॥
...त हिये निवास लीन्ह। सो यहि लोक से रहत भिन्न ॥९
...सत गहि राग लीन्ह। सतगुरु सबद उचार कीन्ह ॥१०
...कबीर मन हृदय लाय। नरक-उबारन नाम आहि ॥११

(६)
रेखता

सूर सग्राम को देखि भागै नहीं,
देखि भागै सोई सूर नाहीं।
काम औ क्रोध मद लोभ से जूझना,
मँडा घमसान तहँ खेत माहीं ॥
सील औ साच सतोष साही भये,
नाम समसेर तहँ खूब बाजै।
कहैं कबीर कोइ जूझिहै सूरमा,
कायराँ भीड तहँ तुरत भाजै ॥

(७)
रेखता

बिना बैराग कहु ज्ञान केहि काम का,
पुरुष बिनु नारि नहिं सोभ पावै।
स्वाँग तो साहु का काम है चोर का,
कपट की झपट मैं बहुत धावै ॥
बात बहुते कहे झूठ छूटै नहीं,
मुख के कहे कहा खाँड़ खावै।

कहै कबीर जब काल गढ़ घेरि है,
बात बहु बकै सब भूलि जावै ॥

— ३ —

पीपाजी

जीवन समय—पंद्रहवाँ शतक । जनम स्थान—गागरोनगढ़ । आश्रम—भेष । गुरू—स्वामी रामानंद ।

यह गागरोनगढ़ के राजा और आदि में दुर्गा उपासक थे फिर स्वामी रामानंद के चेले हुए और राजपाट छोड़ कर साधु भेष में अपनी छोटी रानी सीता सहित गुरू के साथ द्वारिका गये । भक्तमाल की कथा के अनुसार श्रीकृष्ण का साक्षात दर्शन पाने की अभिलाषा में पीपाजी समुद्र में कूद पड़े और सात दिन तक भगवत चरणों मे रहकर बाहर निकले और वहाँ से जो छाप लाये थे वह यह कह कर पुजारियों के सपुर्द की कि जो इस छाप को लगावैगा उसे भगवान मिलैंगे । द्वारिका से लौटते हुए रास्ते में पठानों ने पीपाजी की स्त्री को सुंदर देख कर छीन लेना चाहा परंतु भगवान ने आप रक्षा की ।

॥ घट मठ ॥

काया देवा काया देवल, काया जंगम जाती ।
काया धूप दीप नैवेद्य, काया पूजों पाती ॥१॥
काया बहु खंड खोजते, नव निद्धी पाई ।
ना कछु आइबो ना कछु जाइबो, राम की दुहाई ॥२॥
जो ब्रह्मंडे सोई पिंडे, जो खोजै सो पावै ।
पीपा प्रनवै परम तत्त्व ही, सतगुरु होय लखावै ॥३॥

——o *o——

नामदेवजी

जीवन समय—पंद्रहवें शतक का दूसरा हिस्सा । कविता काल—१४८० । जन्म और सतसंग स्थान—पांडरपुर । जाति और आश्रम—छीपी, गृहस्थ । गुरू—ज्ञानदेवजी ।

* भक्तमाल में इन का जन्म एक बाल विधवा के गर्भ से बिना पुरुष प्रसंग के ईश्वरेच्छा से होना लिखा है जैसा कि हजरत ईसा का क्वारी कन्या के उदर से हुआ था । इन की प्रचंड भक्ति और बाल अवस्था ही से दृढ विश्वास की

बहुत सी कथाओं मे तीन दिन उपास करके, ठाकुर जी को दूध पिलाने की कथा प्रसिद्ध है।

॥ नाम महिमा ॥

तत्त गहन को नाम है, भजि लीजै सोई।
लीला सिंध अगाध है, गति लखै न कोई ॥१॥
कंचन मेरु सुमेरु, हय गज[1] दीजै दाना।
कोटि गऊ जो दान दे, नहिं नाम समाना ॥२॥
जोग जग्य तैं कहा सरै, तीरथ व्रत दाना।
ओसै प्यास न भागिहै, भजिये भगवाना ॥३॥
पूजा करि साधू जनहिं, हरि को प्रन धारी।
उन तैं गोविंद पाइये, वे परउपकारी ॥४॥
एकै मन एकै दसा, एकै व्रत धरिये।
नामदेव नाम जहाज है, भवसागर तरिये ॥५॥

॥ समरथ ॥

बदौ क्यौं ना होड[2] माधो मो सौं।
ठाकुर तैं जन जन तैं ठाकुर, खेल पर्यो है तो सौं ॥१॥
आपन देव देहरा आपन, आप लगावै पूजा।
जल तैं तरँग तरँग तैं है जल, कहन सुनन को दूजा ॥२॥
आपहिं गावै आपहिं नाचै, आप बजावै तूरा।
कहत नामदेव तूँ मेरो ठाकुर, जन ऊरा[3] तूँ पूरा ॥३॥

॥ लव ॥

अस मन लाव राम रसना। तेरो बहुरि न होइ जरा मरना ॥१
जैसे मृगा नाद लव लावै। बान लगे वहि ध्यान लगावै ॥२॥
जैसे कीट भृंग मन दीन्ह। आपु सरीखे वा को कीन्ह ॥३॥
नामदेव भन[4] दासनदास। अब न तजौं हरि चरन निवास॥४॥

---

(१) घोड़ा और हाथी। (२) शर्त। (३) अधूरा। (४) कहता है।

माया कारन स्रम अति करै। सो माया लै गाड़ै धरै ॥६॥
अति सचै समझै नहिं मूढ। धन धरती तन ह्वै गयो धूड़[1]॥७
काम क्रोध त्रिस्ना अति जरै। साधु संगत कबहूँ नहिं करै॥८
कहत नामदेव ता चीआन[2], निरभय ह्वै भजिये भगवान ॥९॥

रैदासजी

[संक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये देखो पृष्ठ ६५ संतबानी संग्रह भाग १]

॥ चितावनी ॥

कहु मन राम नाम सँभारि।
माया के भ्रम कहाँ भूल्यो, जाहुगे कर झारि ॥ टेक ॥
देखि धौं इहाँ कौन तेरो, सगा सुत नहिं नारि।
तोर उतंग सब दूरि करिहैं, देहिंगे तन जारि ॥१॥
प्रान गये कहो कौन तेरा, देखि सोच बिचारि।
बहुरि येहि कलि काल नाहीं, जीति भावै हारि ॥२॥
यहु माया सब थोथरी रे, भगति दिस प्रतिहारि।
कह रैदास सत बचन गुरु के, सो जिव तैं न विसारि ॥३

॥ विनय ॥

(१)

नरहरि[3] चंचल है मति मेरी, कैसे भगति करूँ मैं तेरी ॥टेक
तूँ मोहिं देखै हौं तोहि देखूँ, प्रीति परस्पर होई।
तूँ मोहिं देखै तोहि न देखूँ, यह मति सब बुधि खोई ॥१॥
सब घट अंतर रमसि निरंतर, मैं देखन नहिं जाना।
गुन सब तोर मोर सब औगुन, कृत उपकार न माना ॥२॥
मैं तैं तोरि मोरि असमझि सौं, कैसे करि निस्तारा।
कह रैदास कृष्ण करुनामय, जै जै जगत अधारा ॥३॥

---

(१) धूल। (२) चिल्ला कर, पुकार कर। (३) नरसिंह ईश्वर का एक अवतार।

(७)

रामा हो जग-जीवन मोरा ।
तूँ न बिसारी मैं जन तोरा ॥ टेक ॥
संकट-सोच पोच दिन राती ।
करम कठिन मोरि जाति कुजाती ॥१॥
हरहु बिपति भावै करहु सो भाव ।
चरन न छाडौँ जाव सो जाव ॥२॥
कह रैदास कछु देहु अलवन ।
बेगि मिलो जनि करो बिलंबन ॥३॥

॥ प्रेम ॥

(१)

देहु कलाली एक पियाला, ऐसा अवधू है मतवाला ॥टेक
हे रे कलाली तैं क्या किया, सिरका सा तैं प्याला दिया॥१॥
कहै कलाली प्याला देऊँ, पीवनहारे का सिर लेऊँ ॥२॥
चंद सूर दोउ सनमुख होई, पीवै प्याला मरै न कोई ॥३॥
सहज सुन्न में भाठी सरवै, पीवै रैदास गुरुमुख दरवै ॥४॥

(२)

जो तुम तोरो राम मैं नहिं तोरूँ ।
तुम सों तोरि कवन सों जोरूँ ॥ टेक ॥
तीरथ बरत न करूँ अँदेसा ।
तुम्हरे चरन कमल क भरोसा ॥१॥
जहँ जहँ जाऊँ तुम्हरी पूजा ।
तुम सा देव और नहिं दूजा ॥२॥
मैं अपनो मन हरि सों जोर्‌यौं ।
हरि सों जोरि सबन से तोर्‌यौं ॥३॥
सबही पहर तुम्हारी आसा ।
मन क्रम बचन कहै रैदासा ॥४॥

(३)

अब कैसे छुटै नाम रट लागी ॥ टेक ॥
प्रभु जी तुम चंदन हम पानी ।
जा की अँग अँग बास समानी ॥१॥
प्रभु जी तुम घन बन हम मोरा ।
जैसे चितवत चंद चकोरा ॥२॥
प्रभु जी तुम दीपक हम बाती ।
जा की जोति बरै दिन राती ॥३॥
प्रभु जी तुम मोती हम धागा ।
जैसे सोनहिं मिलत सुहागा ॥४॥
प्रभु जी तुम स्वामी हम दासा ।
ऐसी भक्ति करै रैदासा ॥५॥

(४)

साची प्रीति हम तुम सँग जोड़ी। तुम सँग जोड़ि अवर सँग तोड़ी १
जो तुम बादर तो हम मोरा। जो तुम चंद हम भये चकोरा ॥२॥
जो तुम दीवा तो हम बाती। जो तुम तीरथ तो हम जात्री ३
जहँ जाउँ तहँ तुम्हरी सेवा। तुम सा ठाकुर और न देवा ४
तुम्हरे भजन कटे भय फाँसा। भक्ति हेतु गावै रैदासा ॥५॥

॥ साधु ॥

आज दिवस[१] लेऊँ बलिहारा ।
मेरे गृह आया राम का प्यारा ॥ टेक ॥
आँगन बँगला भवन भयो पावन ।
हरिजन बैठे हरिजस गावन ॥१॥
करूँ डंडवत चरन पखारूँ ।
तन मन धन उन ऊपरि वारूँ ॥२॥

(१) दिन।

कथा कहैं अरु अर्थ बिचारैं ।
आप तरैं औरन को तारैं ॥3॥
कह रैदास मिलैं निज दास ।
जनम जनम के काटैं पास[1] ॥4॥

॥ उपदेश ॥

परिचे राम रमै जो कोई । या रस परसे दुबिधि न होई ॥टेक
जो दीसे ते सकल बिनास । अनदीठे नाहीं बिसवास ॥1॥
बरन कहंत कहैं जे राम । सो भगता केवल निःकाम ॥2॥
फल कारन फूलै बनराई । उपजै फल तब पुहुप बिलाई ॥3
ज्ञानहिं कारन करम कराई । उपजै ज्ञान तो करम नसाई ॥4
बट क बीज जैसा आकार । पसरयो तीन लोक पासार ॥5
जहाँ क उपजा तहाँ बिलाइ । सहज सुन्नि मैं रह्यो लुकाइ ६
जो मन बिदै सोई बिंद । अमा[2] समय ज्यों दीसै चंद ॥7॥
जल मैं जैसे तूँबा तिरै । परिचै[3] पिंड जीव नहिं मरै ॥8॥
सो मन कौन जो मन को खाइ । बिन छोरे तिरलोक समाई ९
मन की महिमा सब कोइ कहै । पंडित सो जो अनतै रहै १०
कह रैदास यह परम बैराग । रामनाम किन[4] जपहु सभाग ११
घृत कारन दधि मथैं सयान । जीवन मुक्ति सदा निरबान ॥१२



(1) फाँसी । (2) अमावस । (3) परिचय हो जाने से पिंड का भेद जान ले तो जीवन मुक्ति हो जाय । (4) क्यों न ।

सदनाजी

—:0 * 0.—

जीवन समय—पन्द्रहवें शतक का पिछला हिस्सा।
जाति और आश्रम—कसाई, भेष।

यह यद्यपि जाति के कसाई थे। परन्तु जीवहिंसा नहीं करते, ये माँस इकट्ठा मोल लेकर फुटकल बेचते थे, बटखरे की जगह शालग्राम की एक बटिया थी उसी से तौला करते थे चाहे कोई पावभर ले चाहे पाँच सेर। एक दिन एक वैष्णव ने उस बटिया में शालग्राम के पूरे आकार देखकर उन से माँगा उन्हों ने तुर्त दे दिया। वैष्णव ने उसे घर पर लाकर और पंचामृत से स्नान करा कर सिंहासन पर बिराजमान किया और उत्तम भोग आगे धरे पर रात को उसे स्वप्न हुआ कि हमें तू हमारे उसी परम भक्त के घर पहुँचादे जहाँ तराजू पर बैठ कर हम को पालना झूलने का आनन्द आता है। वैष्णव ने सदनाजी को सब हाल आ सुनाया और बटिया लौटादी। सदनाजी ने उसी दिन से वैराग ले लिया और उस बटिया को सिर पर धर कर जगन्नाथपुरी को चले गये। रास्ते में एक स्त्री के मोहित होने और इन के साथ भाग निकलने के अभिप्राय से अपने पति का सिर काट डालने और फिर सदनाजी के इनकार पर हाकिम के सामने उन पर अपने पति के घात का झूठा दोष लगाने और सदनाजी के उस दोष को स्वीकार कर लेने पर उनके दोनों हाथों के काटे जाने और जगन्नाथजी के सन्मुख होते ही हाथ ज्यों के त्यों निकल आने की कथा भक्तमाल में लिखी है।

॥ विनय ॥

नृप कन्या के कारने, एक भयो भेष धारी।
कामारथी सुवारथी, वा की पैज[1] सँवारी ॥१॥
तव गुन कहा जगत-गुरा, जो कर्म न नासै।
सिंह सरन कत जाइये, जो जंबुक[2] ग्रासै ॥२॥
एक बूँद जल कारने, चातक दुख पावै।
प्रान गये सागर मिलै, पुनि काम न आवै ॥३॥
प्रान जो थाके थिर नहीं, कैसे बिरमावो।
बूड़ि मुए नौका मिलै, कहु काहि चढावो ॥४॥
मैं नाहीं कछु हौं नहीं, कछु आहि न मोरा।
औसर लज्जा राख लेहु, सदना जन तोरा ॥५॥

---

(१) प्रण। (२) स्यार।

धनी धर्म्मदास

---०---

जीवन समय—पन्द्रहवें शतक के आखिर हिस्से और सोलहवें शतक के दर्मियान। जन्म स्थान—बाँधोगढ़। सतसंग स्थान—काशी। जाति और आश्रम—कसौंधन बनिया, गृहस्थ। गुरू—कबीर साहिब।

यह बड़े साहूकार थे पर कबीर साहिब की शरण में आने के पीछे यह काशी ही में उन के चरनों में रहे और उन के गुप्त होने पर उन की गद्दी पर बैठे। यह और इन के बड़े बेटे चूड़ामणि जी दोनों प्रचण्ड भक्त हुए और पूरी सत गति को प्राप्त हुए।

॥ गुरुदेव ॥

(१)

बाजा बाजा रहित[1] का, पड़ा नगर में सोर।
(मेरे) सतगुरु संत कबीर हैं, नजर न आवै और ॥१॥
भूमी पर पग धरत हैा, सुनो सत मतधीर।
माथ नाय बिनती करौं, दरसन देव कबीर ॥२॥
घाट घाट औघट महाँ, मोहिं कबीर की आस।
धर्मनि सुमिरै नाम गुरु, कभी न होय बिनास ॥३॥

(२)

गुरु मिले अगम के बासी ॥ टेक ॥
उनके चरन कमल चित दीजे, सतगुरु मिले अबिनासी १॥
उनकी सीत प्रसादी लीजे, छूटि जाय चैारासी ॥२॥
अमृत बुंद झरै घट भीतर, साध संत जन लासी[2] ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरी, सार सबद मन बासी ॥४॥

॥ नाम महिमा ॥

हम सत्त नाम के बैपारी ॥ टेक ॥
कोइ कोइ लादे काँसा पीतल, कोइ कोइ लैांग सुपारी।
हम तो लाद्यो नाम धनी को, पूरन खेप हमारी ॥१॥

---

(१) मुक्ति, उद्धार। (२) चाशनी।

पूँजी न टूटै नफा चौगुना, बनिज किया हम भारी ।
हाट जगाती रोक न सकिहै, निर्भय गैल हमारी ॥२॥
मोति बुंद घट ही में उपजै, सुकिरत भरत कोठारी[१] ।
नाम पदारथ लाद चला है, धर्मदास बैपारी ॥३॥

॥ चितावनी ॥

(१)

सोहर

कहँवाँ से जिव आइल, कहँवाँ समाइल हो ।
कहँवाँ कइल मुकाम, कहाँ लपटाइल हो ॥१॥
निरगुन से जिव आइल, सगुन समाइल हो ।
काया गढ़ कइल मुकाम, माया लपटाइल हो ॥२॥
एक बुंद से काया महल, उठावल हो ।
बुंद परे गलि जाय, पाछे पछितावल हो ॥३॥
हंस कहै भाई सरवर, हम उड़ि जाइब हो ।
मोर तोर इतन दिदार, बहुरि नहिं पाइब हो ॥४॥

(२)

कहो केते दिन जियबो हो, का करत गुमान ॥ टेक ॥
कच्चे बासन का पिंजरा हो, जा में पवन समान ।
पंछी का कौन भरोसा हो, छिन में उड़ि जान ॥१॥
कच्ची माटी के घड़ुवा हो, रस बूँदन सान ।
पानी बीच बतासा हो, छिन में गलि जान ॥२॥
कागद की नइया बनी, डोरी साहिब हाथ ।
जौने नाच नचैहैं हो, नाचब वोहि नाच ॥३॥
धरमदास इक बनिया हो, करै झूठी बजार ।
साहिब कबीर बनिजारा हो, करैं मत बैपार ॥४॥

---

(१) भंडार

॥ विरह ॥

(१)

सतगुरु आवो हमरे देस, निहारौं बाट खड़ी ॥ टेक ॥
वाहि देस की बतियाँ रे, लावैं संत सुजान।
उन संतन के चरन पखारौं, तन मन करौं कुरबान ॥१॥
वाहि देस की बतियाँ हम से, सतगुरु आन कही।
आठ पहर के निरखत हमरे, नैन की नींद गई ॥२॥
भूलि गई तन मन धन सारा, व्याकुल भया सरीर।
बिरह पुकारै बिरहनी, ढरकत नैनन नीर ॥३॥
धरमदास के दाता सतगुरु, पल में कियो निहाल।
आवागवन की डोरी कटि गई, मिटे भरम जंजाल ॥४॥

(२)

कहौं बुझाय दरद पिय तो से ॥ टेक ॥
दरद मिटै तरवार तीर से।
किधौं मिटै जब मिलहु पीव से ॥१॥
तन तलफै हिय कछु न सुहाय।
तोहि बिन पिय मो से रहल न जाय ॥२॥
धरमदास की अरज गुसाईं।
साहिब कबीर रहौं तुम छाँहीं ॥३॥

॥ प्रेम ॥

(१)

नैन दरस बिन मरत पियासा ॥ टेक ॥
तुमहीं छाड़ि भजूँ नहिं औरै, नाहिं दूसरी आसा ॥१॥
आठो पहर रहूँ कर जोरी, करि लेहु आपन दासा ॥२॥
निसु बासर रहूँ लव लीना, बिनु देखे नहिं बिस्वासा ॥३॥
धरमदास बिनवे कर जोरी, द्यो निज लोक निवासा ॥४॥

॥ भेद ॥

झरि लागै महलिया, गगन घहराय ॥ टेक ॥
खन गरजै खन बिजुली चमकै ।
लहर उठै सोभा बरनि न जाय ॥१॥
सुन्न महल से अमृत बरसै ।
प्रेम अनँद ह्वै साध नहाय ॥२॥
खुली किवरिया मिटी अँधियरिया ।
धन सतगुरु जिन दिया है लखाय ॥३॥
धरमदास बिनवै कर जोरी ।
सतगुरु चरन मैं रहत समाय ॥४॥

॥ विनय ॥

( )

गुरु पैयाँ लागौं नाम लखा दीजो रे ॥ टेक ॥
जनम जनम का सोया मनुवाँ, सबदन मार जगा दीजो रे ॥१
घट अँधियार नैन नहिं सूझै, ज्ञान का दीप जगा दीजो रे २
बिष की लहर उठत घट अंतर, अमृत बूँद चुवा दीजो रे ॥३
गहिरी नदिया अगम बहै धरवा, खेय के पार लगा दीजो रे४
धरमदास की अरज गुसाईं, अब के खेप निभा दीजो रे ॥५॥

(२)

भक्ति दान गुरु दीजिये, देवन के देवा हो ।
चरन कँवल बिसरौं नहीं, करिहौं पद सेवा हो ॥१॥
तीरथ ब्रत मैं ना करौं, ना देवल पूजा हो ।
तुमहिं ओर निरखत रहौं, मेरे और न दूजा हो ॥२॥
आठ सिद्धि नौ निद्धि हैं, बैकुंठ निवासा हो ।
सो मैं ना कछु माँगहूँ, मेरे समरथ दाता हो ॥३॥
सुख सम्पति परिवार धन, सुन्दर बर नारी हो ।
सुपनेहु इच्छा ना उठै, गुरु आन तुम्हारी हो ॥४॥

धरमदास की बीनती, साहिब सुनि लीजै हो।
दरस देहु पट खोलि कै, अपना करि लीजै हो ॥५॥

(३)

साहिब बूडत नाव अब मोरो ॥ टेक ॥
काम क्रोध की लहर उठतु है, मोह पवन झकझोरी।
लोभ मोरे हिरदे घुमरतु है, सागर वार न पारी ॥१॥
कपट की भँवर परतु है बहुतै, वा मेँ बेडा अटको।
फाँसी काल लिये है द्वारे, आया सरन तुम्हारी ॥२॥
धरमदास पर दाया कीन्हो, काटि फंद जिव तारो।
कहै कबीर सुनो हो धर्मन, सतगुरु सरन उबारो ॥३॥

(४)

चरन छाडि प्रभु जावेँ कहाँ, मोरे और न कोई।
जग मेँ आपन कोइ नहीँ, देखा सब टोई ॥१॥
मात पिता हित बंधु तुम, का से दुख रोई।
सब कछु तुम्हरे हाथ है, तुम्हरे मुख जोहो ॥२॥
गुन तो मोरे है नहीँ, औगुन बहुतेरे।
ओट लई तुम नाम की, राखो पत सोई ॥३॥
सतगुरु तुम चीन्हे बिना, मति बुधि सब खोई।
सब जीवन के एक तुम, दूजा नहिँ कोई ॥४॥
मैं गरजी अरजी करौँ, मरजी जस होई।
अरज विपति लिखौँ आपनी, राखौँ नहिँ गोई[१] ॥५॥
धरमदास सत साहिबी, घट घटहिँ समोई।
साहिब कबीर सतगुरु मिले, आवागवन न होई ॥६॥

---

(१) छिपी।

गुरु नानक

—— ⁂ ——

[संक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये देखो पृष्ठ ६७ संतबानी संग्रह, भाग १]

(१)

राम सुमिर राम सुमिर एही तेरो काज है ॥ टेक ॥
माया को संग त्याग, हरि जू की सरन लाग ।
जगत सुख मान मिथ्या, झूठो सब साज है ॥१॥
सुपने ज्यों धन पिछान, काहे पर करत मान ।
बारू की भीत तैसे, बसुधा को राज है ॥२॥
नानक जन कहत बात, बिनसि जैहै तेरो गात ।
छिन छिन करि गयो काल्ह, तैसे जात आज है ॥३॥

(२)

इस दम दा मैनूँ की बे भरोसा,
आया आया न आया न आया ॥१॥
सोच विचार करै मत मन में,
जिस ने ढूँढा उसने पाया ॥२॥
या संसार रैन दा सुपना,
कहिं दीखा कहिं नाहिं दिखाया ॥३॥
नानक भक्तन के पद परसे,
निस दिन राम चरन चित लाया ॥४॥

(३)

सब कछु जीवत को ब्यौहार ।
मात पिता भाई सुत बांधव, अरु पुनि गृह की नार ॥१॥
तन तें प्रान होत जब न्यारे, टेरत प्रेत पुकार ।
आध घरी कोऊ नहिं राखै, घर तें देत निकार ॥२॥

मृग-तृस्ना ज्यों जग रचना यह, देखो हृदे विचार ।
कहु नानक भजु राम नाम नित, जा तैं होत उधार ॥३॥

(४)

साधो यह तन मिथ्या जानो ।
या भीतर जो राम बसत है, साचो ताहि पिछानो ॥१॥
यह जग है सपति सुपने की, देख कहा ऐंड़ानो ।
सग तिहारे कछू न चालै, ताहि कहा लपटानो ॥२॥
अस्तुति निंदा दोऊ परिहरि, हरि कीरति उर आनो ।
जन नानक सबही में पूरन, एक पुरुष भगवानो ॥३॥

(५)

चेतना है तो चेत ले, निसि दिन में प्रानी ।
छिन छिन अवधि बिहात है, फूटे घट ज्यों पानी ॥१॥
हरि गुन काहे न गावही, मूरख अज्ञाना ।
झूठे लालच लागि के, नहिं मर्म पिछाना ॥२॥
अजहूं कछु बिगस्यो नहीं, जो प्रभु गुन गावै ।
कहु नानक तेहि भजन तें, निरभय पद पावै ॥३॥

॥ प्रेम ॥

(६)

हौं कुरबाने जाउँ पियारे, हौं कुरबाने जाउँ ॥टेक॥
हौं कुरबाने जाउं तिन्हाँ दे, लैन जो तेरा नाउँ ।
लैन जो तेरा नाउँ तिन्हाँ दे, हौं सद कुरबाने जाउँ ॥१॥
काया रंगन जे थिये प्यारे, पाइये नाउँ मजीठ[१] ।
रंगन वाला जे रँगे साहिब, ऐसा रंग न डीठ ॥२॥
जिन के चोलड़े रत्तड़े[२] प्यारे, कंत तिन्हाँ के पास ।
धूड़[३] तिन्हाँ को जे मिले जो को, नानक की अरदास ॥३॥

(१) काया तब रँगी जायगी जब नाम रूपी लाल रंग (त्रिकुटी के धनी का) मिले । (२) रंगे हुए । (३) धूल ।

(२)

बिसरत नाहिं मन तें हरी ।
अब यह प्रीति महा प्रबल भइ, आन बिषय जरी ॥१॥
बूँद कहा तियागि चातक, मीन रहत न घरी ।
गुन गोपाल उचारत रसना, टेव[1] एह परी ॥२॥
महा नाद कुरंग मोह्यो, बेध तीच्छन सरी ।
प्रभु चरन कमल रसाल नानक, गाँठ बाँधि परी ॥३॥

(३)

गोविंद जी तूँ मेरे प्रान-अधार ।
साजन मीत सहाई तुमहीं, तूँ मेरो परिवार ॥१॥
कर बिसाल धार्‌यो मेरे माथे, साधु संग गुन गाये ।
तुम्हरी कृपा तें सब फल पाये, रसिक नाम धियाये ॥२॥
अबिचल नींव धराई सतगुरु, कबहूँ डोलत नाहीं ।
गुर नानक जब भये दयाला, सब सुखों निधि पाहीं ॥३॥

(४)

प्रभु जी तू मेरे प्रान-अधारे ।
नमस्कार डंडौत बंदना, अनिक बार जाऊँ बलिहारे ॥१॥
ऊठत बैठत सोवत जागत, इहु मन तुझै चितारे ।
सूख दूख इस मन की बिरथा, तुझ ही आगे सारे ॥२॥
तूँ मेरी ओट बल बुधि धन तुमहीं, तुमहिं मेरे परिवारे ।
जो तुम करो सोई भल हमरे, पेख नानक सुख चरना रे ॥३॥

॥ घटे मठ ॥

(१)

मुरसिद मेरा महरमी, जिन मरम बताया ।
दिल अंदर दीदार है, खोजा तिन पाया ॥१॥

---

(१) आदत ।

तसबी एक अजूब है, जा मैं हर दम दाना।
कुंज किनारे बैठि के, फेरा तिन्ह जाना ॥२॥
क्या बकरी क्या गाय है, क्या अपनो जाया।
सब को लोहू एक है, साहिब फरमाया ॥३॥
पीर पैगंबर औलिया, सब मरने आया।
नाहक जीव न मारिये, पोषन को काया ॥४॥
हिरिस हिये हैवान है, बसि करिले भाई।
दाद[1] इलाही नानका, जिसे देवे खुदाई ॥५॥

(२)

काहे रे बन खोजन जाई
सर्ब निवासी सदा अलेपा, तोही संग समाई ॥१॥
पुष्प मध्य ज्यों बास बसत है, मुकर माहिं जस छाई।
तैसेही हरि बसै निरंतर, घट ही खोजो भाई ॥२॥
बाहर भीतर एकै जानो, यह गुरु ज्ञान बताई।
जन नानक बिन आपा चीन्हे, मिटै न भ्रम की काई ॥३॥

॥ विनय ॥

(१)

प्रब[2] मेरे प्रीतम प्रान पियारे।
प्रेम भक्ति निज नाम दीजिये, द्याल अनुग्रह धारे ॥१॥
सुमिरौं चरन तिहारे प्रीतम, रिदे तिहारी आसा।
संत जनाँ पै करौं बेनती, मन दरसन को प्यासा ॥२॥
बिछुरत मरन जीवन हरि मिलते, जन को दरसन दीजै।
नाम अधार जीवन धन नानक, प्रब मेरे किरपा कीजै ॥३॥

(२)

माई मैं केहि बिधि लखौं गुसाईं।
महा मोह अज्ञान तिमिर मैं, मन रहियो उरझाई ॥१॥

---

(१) दात, बख्शिश। (२) प्रभु।

सकल जनम भ्रम ही भ्रम खोयो, नहिं इस्थिर मति पाई।
विषयासक्त रह्यो निसि वासर, नहिं छूटी अधमाई ॥२॥
साधु संग कबहूँ नहिं कीन्हा, नहिं कीरति प्रभ[1] गाई।
जन नानक मैं नाहीं कोउ गुन, राखि लेहु सरनाई ॥३॥

(३)

प्रभ जी यही मनोरथ मेरा।
कृपा-निधान दयाल मोहिं दीजे, करि संतन का चेरा ॥१॥
प्रात काल लागों जन चरनी, निसि वासर दरसन पावौं।
तन मन अरप करौं जन सेवा, रसना हरि गुन गावौं ॥२॥
साँस साँस सुमिरौं प्रभु अपना, संत संग नित रहिये।
एक अधार नाम धन मेरा, आनँद नानक यह लहिये ॥३॥

(४)

अब हम चली ठाकुर पहिं हार।
जब हम सरन प्रभू की आईं, राख प्रभु भावे मार ॥१॥
लोगन की चतुराई उपमा, ते बैसंदर[2] जार।
कोई भला कहु भावे बुरा कहु, हम तन दियो है ढार ॥२॥
जो आवत सरन ठाकुर प्रभु तुम्हरी, तिस राखो किरपाधार।
जन नानक सरन तुम्हारी हरिजी, राखो लाज मुरार ॥३॥

(५)

अब मैं कौन उपाय करूँ ॥ टेक ॥
जेहि बिधि मन को संसय छूटै, भव-निधि[3] पार परूँ ॥१॥
जनम पाय कछु भलो न कीन्हो, ता तैं अधिक डरूँ ॥२॥
गुरु मत सुन कछु ज्ञान न उपज्यो, पसुवत उदर भरूँ ॥३॥
कहु नानक प्रभु बिरद पिछानो, तब हौं पतित तरूँ ॥४॥

---

(१) प्रभु। (२) आग। (३) भवसागर।

(६)

हरि जू राख लेहु पत मेरो ॥ टेक ॥
काल को त्रास भयो उर अंतर, सरन गह्यो प्रव तेरो ॥
भय मरने को बिसरत नाहीं, तेहिं चिंता तन जारो ॥१॥
किये उपाय मुक्ति के कारन, दह दिसि को उठि धाया।
घट ही भीतर बसै निरंतर, ता को मर्म न पाया ॥२॥
नाहीं गुन नाहीं कछु जप तप, कौन करम अब कीजै।
नानक हार पर्यौ सरनागत, अभय दान प्रभ दीजै ॥३॥

(७)

या जग मीत न देख्यो कोई।
सकल जगत अपने सुख लाग्यो, दुख मैं संग न होई ॥१॥
दारा मीत पूत संबंधी, सगरे धन सौं लागे।
जबहीं निरधन देख्यो नर को, संग छाड़ि सब भागे ॥२॥
कहा कहूँ या मन बौरे को, इन सौं नेह लगाया।
दीनानाथ सकल भय-भंजन, जस[1] ता को बिसराया ॥३॥
स्वान पूँछ ज्यौं भयो न सूधो, बहुत जतन मैं कीन्हो।
नानक लाज बिरद की राखो, नाम तिहारो लीन्हो ॥४॥

(८)

जीव जंतु सब ता के हाथ, दीनदयाल अनाथ को नाथ ॥१॥
जिस राखै तिस कोइ न मारै, सो मूआ जिस मनौं बिसारै २
तिस तजि अवर कहाँ को जाय, सब सिर एक निरंजन राय ३
जिय की जुगत जा के सब हाथ, अंतर बाहर जानो साथ ॥४
गुन-निधान बेअंत अपार, नानक दास सदा बलिहार ॥५॥

(१) इहसान।

॥ साध महिमा ॥

जो नर दुख मैं दुख नहिं मानै ।
सुख सनेह अरु भय नहिं जा के, कंचन माटी जानै ॥१॥
नहिं निन्दा नहिं अस्तुति जा के, लोभ मोह अभिमाना ।
हर्ष सोक तें रहै नियारो, नाहिं मान अपमाना ॥२॥
आसा मनसा सकल त्यागि कै, जग तें रहै निरासा ।
काम क्रोध जेहिं परसै नाहिन, तेहिं घट ब्रह्म निवासा ॥३॥
गुरु किरपा जेहिं नर पै कीन्ही, तिन यह जुगति पिछानी ।
नानक लीन भयो गोबिंद सों, ज्यों पानी सँग पानी ॥४॥

॥ उपदेश ॥

(१)

जा मैं भजन राम को नाहीं ।
तेहि नर जनम अकारथ खोयो, यह राखो मन माहीं ॥१॥
तीरथ करै व्रत पुनि राखै, नहिं मनुवाँ बस जा को ।
निफल धर्म ताहि तुम मानो, साच कहत मैं या को ॥२॥
जैसे पाहन जल मैं राख्यो, भेदै नहिं तेहि पानी ।
तैसेही तुम ताहि पिछानो, भगतिहीन जो प्रानी ॥३॥
कलि मैं मुक्ति नाम तें पावत, गुरु यह भेद बतावै ।
कहु नानक सोई नर गरुवा, जो प्रभु के गुन गावै ॥४॥

(२)

साधो मन का मान तियागो ।
काम क्रोध संगत दुर्जन की, ता तें अहि निसि भागो ॥१॥
सुख दुख दोनों सम कर जानै, और मान अपमाना ।
हर्ष सोक तें रहै अतीता, तिन जग तत्व पिछाना ॥२॥
अस्तुति निंदा दोऊ त्यागै, खोजै पद निरबाना ।
जन नानक यह खेल कठिन है, किनहूँ गुरमुख जाना ॥३॥

(३)

यह मन नेक न कह्यो करै।
सीख सिखाय रह्यो अपनी सी, दुरमति तैं न टरै ॥१॥
मद माया वस भयो बावरो, हरिजस नहिं उचरै।
करि परपंच जगत के डहकै, अपनो उदर भरै ॥२॥
स्वान पूँछ ज्यों होय न सूधो, कह्यो न कान धरै।
कहु नानक भजु राम नाम नित, जा तैं काज सरै ॥३॥

(४)

माई मैं मन को मान न त्यागो।
माया के मद जनम सिरायो, राम भजन नहिं लाग्यो ॥१॥
जम को दंड पर्यो सिर ऊपर, तब सोवत तैं जाग्यो।
कहा होत अब के पछिताये, छूटत नाहिन भाग्यो ॥२॥
यह चिंता उपजी घट मैं जब, गुरु चरनन अनुराग्यो।
सुफल जनम नानक तब हूआ, जो प्रभु जस मैं पाग्यो ॥३॥

(५)

मन की मनहीं माहिं रही।
ना हरि भजे न तीरथ सेवे, चोटी काल गही ॥१॥
दारा मीत पूत रथ संपति, धन जन पूर्न मही।
और सकल मिथ्या यह जानो, भजन राम सही ॥२॥
फिरत फिरत बहुते जुग हार्‍यो, मानस देह लही।
नानक कहत मिलन की बिरिया, सुमिरत कहा[१] नहीं ॥३॥

(६)

मन मूरख काहे बिल्लावै, पूर्ब लिखे का लेखा पावै ॥१॥
दुक्ख सुक्ख प्रब देवनहार, अवर त्यागि तूँ तिसै चितार ॥२॥
जो कछु करै सोई सुख मान, भूला काहे फिरै अयान ॥३॥

---

(१) क्यों।

कौन वस्तु आई तेरे संग, लपट रह्यो रस लोभि पतंग ॥४॥
राम नाम जप हिरदे माहीं, नानक पत सेती घर जाहीं ॥५॥

(७)

रे मन कौन गति होइ है तेरी ॥ टेक ॥
एहि जग मैं राम नाम, सो तो नहिं सुन्यो कान।
बिषयन सोँ अति लुभान, मति नाहिन फेरी ॥१॥
मानस को जनम लीन्ह, सिमरन नहिं निमिप कीन्ह।
दारा सुत भयो दीन, पगहुँ परी बेरी ॥२॥
नानक जन कह पुकार, सुपने ज्योँ जग पसार।
सिमरत नहिं क्योँ मुरार, माया जा की चेरी ॥३॥

(८)

साधो रचना राम बनाई।
इक बिनसै इक इस्थिर मानै, अचरज लख्यौ न जाई ॥१॥
काम क्रोध मोह बस प्रानी, हरि मूरति बिसराई।
झूठा तन साचा करि मान्यो, ज्योँ सुपना रैनाई ॥२॥
जो दीसै सो सकल बिनासै, ज्योँ बादर की छाँई।
जन नानक जग जानो मिथ्या, रहो राम सरनाई ॥३॥

सूरदासजी

—०*०—

जीवन समय—अनुमान १५४० से १६२० तक। जनम स्थान—सीही गाँव दिल्ली के पास। जाति और आश्रम—सारस्वत ब्राह्मण, भेष। गुरू—वल्लभाचार्य्य महाप्रभु।

यह एक गहरे कृष्णभक्त और साध शिरोमणि १६ वें शतक में हुए जो ३१ बरस तक गु० तुलसीदासजी के समकालीन थे। इन को उद्धवजी का अवतार कहते हैं और यह बाल साध थे। आठ बरस की अवस्था में अपने माता पिता के साथ मथुरा को गये और फिर वहाँ एक साधु के पास रह गये। मथुरा से यह गऊघाट आये जो आगरा और मथुरा के बीच में है, यहाँ वल्लभाचार्य्य महाप्रभु के शिष्य हुए और उन के साथ श्रीनाथद्वारा को गये और वहीं रह कर अस्सी बरस की अवस्था में शरीर त्याग किया। बीच २ में और स्थानों की भी यात्रा करते रहे और एक रामत में गु० तुलसीदासजी से मेला हुआ और कुछ दिनों तक दोनों का संग रहा। कितने लोग इन को जन्म का अंधा बतलाते हैं परन्तु इन की कविता की अनेक दृष्टान्तों और वर्णनों से जान पड़ता है कि पीछे से उन की आँखें गईं। कहते हैं कि एक बार एक सुंदरी स्त्री को देख कर यह मोह गये जिस पर उन्हें ऐसी ग्लानि आई कि अपनी आँखों का दोष समझकर उन को फोड़ डाला। सूरदास जी ने तीन ग्रन्थ रचे—सूरसागर, सूरावली और साहित्य-लहरी (दृष्टकूट)। कृष्णभक्तों का विश्वास है कि इन्हों ने प्रण किया था कि सवालाख पद लिखेंगे परंतु केवल ७५००० तक बनाये थे कि चोला छूट गया फिर इन के पीछे श्रीकृष्ण ने आप अपने भक्त के वचन का पालन करने को शेष ५०००० बनाकर सवालाख की संख्या पूरी करदी, इन पदों में सूरश्याम की छाप है। शरीर त्यागते समय आप ने प्रेम में गद्गद हो कर यह पद कहा था—

"खंजन नैन रूप रस माते।
अतिसै चारु चपल अनियारे, पल पिंजरा न समाते।
चलि चलि जात निकट स्रवनन के, उलटि उलटि ताटक१ फँदाते॥
सूरदास अंजन गुन अटके, नातरु अब उड़ि जाते॥"

(१) तटक=नदी का किनारा, तटाक=तालाब।

॥ चितावनी ॥

(१)

रे मन जन्म पदारथ जात ।
बिछुरे मिलन बहुरि कब ह्वै है, ज्यों तरवर के पात ॥१॥
सन्नपात कफ कंठ बिरोधी, रसना टूटी बात ।
प्रान लिये जम जात मूढ मति, देखत जननी तात ॥२॥
छिन इक माहिं कोटि जुग बीतत, पीछे नर्क की बात।
यह जग प्रीति सुआ सेमर की, चाखत ही उड़ि जात ॥३॥
जम के फंद नहीं पड़ु बौरे, चरनन चित्त लगात ।
कहत सूर बिरथा यह देही, अंतर क्यों इतरात ॥४॥

(२)

जा दिन मन पंछी उड़ि जैहैं ।
ता दिन तेरे तन तरुवर के, सबै पात झरि जैहैं ॥१॥
घर के कहैं बेग ही काढ़ो, भूत भये कोउ खैहैं ।
जा प्रीतम से प्रीति घनेरी, सोऊ देखि डरैहैं ॥२॥
कहँ वह ताल कहाँ वह सोभा, देखत धूर उड़ैहैं ।
भाई बंधु कुटुम्ब कबीला, सुमिरि सुमिरि पछितैहैं ॥३॥
बिना गुपाल कोऊ नहिं अपना, जस कीरति रहि जैहैं।
सो तो सूर दुर्लभ देवन को, सतसंगति मैं पैहैं ॥४॥

(३)

रे मन मूरख जनम गंवायो ॥ टेक ॥
कर अभिमान बिषय सों राच्यो, नाम सरन नहिं आयो ॥१
यह संसार फूल सेमर को, सुंदर देखि लुभायो ।
चाखन लाग्यो रूई उड़ि गइ, हाथ कछू नहिं आयो ॥२
कहा भयो अब के मन सोचे, पहिले नाहिं कमायो ।
सूरदास सतनाम भजन बिनु, सिर धुनि धुनि पछितायो ॥३

॥ विरह ॥

(१)

अँखियाँ हरि दरसन की प्यासी ।
देख्यो चाहत कमल नैन को, निसि दिन रहत उदासी ॥१॥
केसर तिलक मोतिन की माला, वृन्दावन के वासी ।
नेह लगाय त्यागि गये तृन सम, डारि गये गल फाँसी ॥२॥
काहू के मन की को जानत, लोगन के मन हाँसी ।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस बिन, लेहौं करवत कासी ।३॥

(२)

बिन गोपाल बैरन भई कुजैं ॥ टेक ॥
तब ये लता लगत अति सीतल,
अब भई बिषम ज्वाल की पुजैं[१] ॥१॥
वृथा बहत जमुना खग बोलत,
वृथा कमल फूलत अलि[२] गुंजैं ॥२॥
सूरदास प्रभु को मग जोवत,
अँखियाँ भई अरुन[३] ज्यों गुंजैं[४] ॥३॥

(३)

निसि दिन बरसत नैन हमारे।
सदा रहत पावस ऋतु हम पर, जब से श्याम सिधारे ॥१॥
अंजन थिर न रहत अँखियन मैं, कर कपोल भये कारे ।
कंचुकि[५] पट सूखत नहि कबहूँ, उर बिच बहत पनारे ॥२॥
आँसू सलिल[६] भये पग थाके, बहे जात सित[७] तारे ।
सूरदास अब डूबत है ब्रज, काहे न लेत उबारे ॥३॥

समूह । (२) भँवरा । (३) लाल । (४) घुँघची । (५) चोली । (६) नदी ।
(७) बँधे या जड़े हुए ।

(४)

हरि के सँग मैं क्यौं न गई री ॥ टेक ॥
हरि सँग जाती कंचन बन आती,
अब माटी के मोल भई री ॥१॥
बरज्यो न कोई इन दूतिन को,
जाती बेर मोहिं रोक लई री ॥२॥
हरि बिछुरन इक मरन हमारा,
नइ दासी सँग प्रीति भई री ॥३॥
छल गयो कान्ह बहुरि नहिं आयो,
अपने हाथ से मैं बिदा दई री ॥४॥
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस को,
पिछली प्रीति अब नई भई री ॥५॥

(५)

राग बिलावल

ऊधो इतनो कहियो जाय ।
अति कृस-गात[1] भई हैं तुम बिन, बहुत दुखारी गाय ॥१॥
जल समूह बरसत अँखियन तैं, हूकत लै लै नाँव ।
जहाँ जहाँ गउ दोहन करते, ढूंढत सोइ सोइ ठाँव ॥२॥
परत पछार खाय तेही छिन, अति व्याकुल ह्वै दीन ।
मानो सूर काढ़ि डारी हैं, बारि मध्य तैं मीन ॥३॥

(६)

होली

सखी री मोहन मुसकाने, लागी सोई पै जाने ॥टेक।
रात मोहन सुपने मैं देखे, सिथिल भये मोरे प्राने ।
बिरहा हूक लगी पसुरी मैं, नैन नीर बरसाने,
सखी जिउरा घबराने ॥१॥

(१) दुबला।

हौँ जो चढी थी अपनी अटा पर, वह झट निकस्यो आने।
मंद हँसन मुख देखि कृस्न को, क्या हौँ कहौँ बखाने,
सखी कोइ पीर न जाने ॥२॥
हौँ घायल मिरगी ज्यौँ घूमत, परी धरनि पर आने।
मंत्र जन्त्र औपधि घिस लाये, बिसरे सभी[1] उपाव,
सखी कोइ लोग सियाने ॥३॥
और उपाव नहीं कोउ दूजो, स्याम मिलावो आने।
जानत हैं पिय पीर हमारी, सूरदास के प्रान,
सखी कोइ और न जाने ॥४॥

(७)

होली

साँवरे सोँ कहियो मोरी ॥ टेक ॥
सीस नवाय चरन गहि लीजो, करि बिनती कर जोरी।
ऐसी चूक कहा परी मो सोँ, प्रीति पाछली तोरी,
सुरति ना लीन्हि बहोरी ॥१॥
भूपन बसन सभी तजि दीन्हे, खान पान बिसरो री।
बिभुति रमाय जोगिन ह्वै बैठी, तेरो ही ध्यान धरो री,
अब मैं कैसी करोँ री ॥२॥
निसि दिन ब्याकुल फिरत राधिका, बिरह बिथा तन घेरी।
बारि[2] करेजा जारि दियो है, अब मैं कैसी करोँ री।
वेग चलि आवो किसोरी ॥३॥
रोम रोम बिप छाय रहो है, मधु मेरे बैर परो री।
स्याम तुम्हैं ढूँढ़त कुंजन मैं, सीस लटा गहि झोरी,
कहोँ हरि हो हरि हो री ॥४॥

---

(१) सब लोग। (२) बाल अवस्था का अर्थात कोमल।

जा दिन गमन कियो मथुरा मैं, गोपिन सुधि बिसरो री।
हम को जोग भोग कुब्जा को, का तकसीर है मोरी,
कहा कछु कीन्ही चोरी ॥५॥
सूरदास प्रभु सों जा कहियो, आवैं अवधि रही थोरी।
प्रान दान दीजो नँद नन्दन, गावत कीरति तोरी।
प्रीति अब कीजे बहोरी ॥६॥

(८)

कुब्जा ने जादू डारा, जिन मोह्यो स्याम हमारा री॥टेक
निसि दिन चलत रहत नहिं राखे, इन नैनन जलधारा री ॥१
अब यह प्रान कैसे हम राखैं, बिछुरे प्रान-अधारा री ॥२॥
ऊधो तब तैं कल न परत है, जब तैं स्याम सिधारा री ॥३॥
अब तो मधुबन जाय ले आवो, सुन्दर नन्द दुलारा री ॥४॥
सूरदास प्रभु आन मिलावो, तन मन धन सब वारा री ॥५॥

॥ प्रेम ॥

(१)

नाहिन रह्यो मन मैं ठौर।
नन्द नन्दन अछत[1] कैसे, आनिये उर और ॥१॥
चलत चितवत दिवस जागत, स्वप्न सोवत रात।
हृदय तैं वह स्याम मूरत, छिन न इत उत जात ॥२॥
कहत कथा अनेक ऊधो, लोक लाज दिखाव।
कहा करौं तन प्रेम पूरन, घट न सिंधु समात ॥३॥
स्याम गात सरोज आनन[2], ललित गति मृदु हाँस।
सूर ऐसे रूप कारन, मरत लोचन प्यास ॥४।

(२)

या ऋतु रूस रहन की नाहीं।
बरसत मेघ मेदिनी के हितु, प्रीतम हरष बढ़ाहीं ॥१॥

(१) के होते। (२) कमल जैसा मुख।

जे बेली ग्रीषम ऋतु जरहीं, ते तरवर लपटाहीं।
उमड़ी नदी प्रेम रस माती, सिंधु मिलन को जाहीं ॥२॥
यह संपदा दिवस चारक की, सोच समझ मन माहीं।
सूर सुनत उठि चली राधिका, दै दूती गल बाहीं ॥३॥

(३)

भींजत कुंजन से दोउ आवत।
ज्यों ज्यों बूँद परत चूनर पर, त्यों त्यों हरि उर लावत ॥१
अधिक झकोर होत मेघन की, द्रुम तर छिन बिलमावत।
वे हँसि ओट करत पीतांबर, वे चूनरहिं उढ़ावत ॥२॥
तैसेहिं मोर कोकिला बोलत, पवन बीच घन धावत।
ले मुरली कर मन्द घोर स्वर, राग मलार बजावत ॥३॥
भींजे राग रागिनी दोऊ, भींजे तन छबि पावत।
सूरदास हरि मिलत परस्पर, प्रीति अधिक उपजावत ॥४।

(४)

आज हौं एक को ले कै टरि हौं।
मोहिं कहा डरपावत हो प्रभु, अपने पूरे[१] परि लरिहौं ॥१॥
हौं तो पतित सात पीढ़ी को, जो जिय ऐसी धरिहौं।
हौं तो फिरि वैसो ही ह्वै हौं, तुमहिं बिरद बिनु करिहौं ॥२
अब तो तुम परतीत नसाई, क्यों मानै मम हियरा।
सूरदास साची तब थपिहौं, जब हँसि दै हौ बीरा ॥३॥

(५)

अब तो प्रगट भई जग जानी।
वा मोहन सों प्रीति निरंतर, क्यों निबहैगी छानी[२] ॥१॥
कहा करौं सुंदर मूरति इन, नैनन माँझि समानी।
निकसत नाहिं बहुत पचि हारी, रोम रोम अरुझानी ॥२॥

---

(१) पूरा यानी खानदानी, सात पीढ़ी का पतित—देखो आगे की कड़ी।
(२) छिपी हुई।

अब कैसे निर्वारि[1] जात है, मिले दुग्ध ज्यौं पानी।
सूरदास प्रभु अंतरजामी, उर अंतर की जानी ॥३॥

(६)

नेक नहीं मन घर सों लागत।
पिता मात गुरुजन परमोधत[2],
नीके बचन बान सम लागत ॥१॥
तिन को धृग धृग कहति मनहिं मन,
इन कौं बनै भले ही त्यागत।
स्याम-विमुख नर नारि वृथा सब,
कैसे मन इन सों अनुरागत ॥२॥
इन को बदन[3] प्रात दरसौ जिनि,
बार बार बिधि[4] सों यह माँगत।
यह तन सूर स्याम को अर्प्यौ,
नेक टरत नहिं सोवत जागत ॥३॥

॥ विनय ॥

(१)

तुम मेरी राखो लाज हरी।
तुम जानत सब अन्तरजामी, करनी कछु न करी ॥१॥
औगुन मोसे बिसरत नाहीं, पल छिन घरी घरी।
सब प्रपंच की पोट बाँध करि, अपने सीस धरी ॥२॥
दारा सुत धन मोह लिये हौं, सुधि बुधि सब बिसरी।
सूर पतित को बेग उधारो, अब मेरी नाव भरी ॥३॥

(२)

हमारे प्रभु औगुन चित न धरो।
सम-दरसी है नाम तिहारो, अब मोहिं पार करो ॥१॥

---

(१) सुलझाई या अलग की जा सकती है। (२) समझाते हैं। (३) मुँह। (४) ब्रह्मा।

इक नदिया इक नार[1] कहावत, मैलो नीर भरो ।
जब दोनों मिलि एक बरन भये, सुरसरि नाम परो ॥२॥
इक लोहा पूजा मैं राखत, इक घर बधिक परो ।
पारस गुन अवगुन नहिं चितवै, कचन करत खरो ॥३॥
यह माया भ्रम जाल निवारो, सूरदास सगरो ।
अबकी बेर मोहिं पार उतारो, नहिं प्रन जात टरो ॥४॥

(३)

हरि हौं बड़ी बेर को ठाढो ।
जैसे और पतित तुम तारे, तिनहीं मैं लिखि काढ़ो ॥१॥
जुग जुग बिरद यही चलि आयो, टेर कहत हौं ता तें ।
मरियत लाज पंच पतितन मैं, हौं घट कहो कहाँ तें ॥२॥
कै अब हार मान करि बैठो, कै कर बिरद सही ।
सूर पतित जो झूठ कहत है, देखो खोलि वही ॥३॥

(४)

अबकी राखि लेहु भगवान ।
हम अनाथ बैठी द्रुम डरियाँ, पारधि[2] साध्यो बान ॥१
ता के डर निकसन चाहत हौं, ऊपर रह्यो सचान[3] ।
दोऊ भाँति दुख भयो क्रिपानिधि, कौन उबारै प्रान ॥२॥
सुमिरत ही अहि[4] डस्यो पारधी, लाग्यो तीर सचान[3] ।
सूरदास गुन कहँ लग बरनौं, जै जै क्रपानिधान ॥३॥

(५)

जो जन ऊधो मोहिं न बिसारै,
तेहि न बिसारौं छिन एक घरी ॥टेक॥
जो मोहिं भजै भजौं मैं वा को, कल न परत मोहिं एक घरी
काटौं जनम जनम के फंदा, राखौं सुख आनन्द करी ॥१

(१) नाला। (२) शिकारी। (३) बाज। (४) साँप।

चतुर सुजान सभा मैं बैठे, दुःसासन अनरीति करी ।
सुमिरन कियो द्रोपदी जबहीं, खैंचत चीर उबारि धरी ॥२॥
ध्रुव प्रहलाद रैनि दिन ध्यावै, प्रगट भये बैकुंठ पुरी ।
भारत मैं भरुही के अंडा, ता पर गज को घंट ढुरी ॥३॥
अंबरीप गृह आये दुर्बासा, चक्र सुदर्सन छाँहि करी[1] ।
सूर के स्वामी गजराज उबारे, कृपा करो जगजीस हरी ॥४॥

(६)

दीनानाथ अब बार तुम्हारी ।
पतित-उधारन बिरद[2] जानि के, बिगरी लेहु सँवारी ॥१॥
बालापन खेलत ही खोयो, जुवा बिषय रस माते ।
वृद्ध भये सुधि प्रगटी मो को, दुखित पुकारत ता तैं ॥२॥
सुतन तज्यो त्रिय भ्रात तज्यो सब, तन तैं तुचा भइ न्यारी ।
स्रवन न सुनत चरन गति थाकी, नैन बहे जल धारी ॥३॥
पलित[3] केस कफ कन्ठ अब रूँध्यो[4], कल न परै दिन राती ।
माया मोह न छाड़ै तृस्ना, यह दोऊ दुखदाती ॥४॥
अब यह व्यथा दूर करिबे को, और न समरथ कोई ।
सूरदास प्रभु करुना-सागर, तुम तैं होय सो होई ॥५॥

(७)

नाथ मोहिं अबकी बेर उबारो ॥ टेक ॥
तुम नाथन के नाथ सुवामी, दाता नाम तिहारो ।
करमहीन जनम को अंधो, मो तैं कौन नकारो ॥१॥

---

(१) कथा है कि परम भक्त राजा अंबरीख को बिना अपराध दुर्बासा ऋषि ने स्राप देना चाहा जिस पर विष्णु के सुदर्शन चक्र ने दुर्बासा को खदेरा । मुनि जी भागते २ विष्णु की शरण में पहुँचे पर उन्हों ने अपने भक्त के अपराधी की रक्षा करने में अपनी असमरथता प्रगट की और अंत को राजा अंबरीख के शरणागत होने पर वह बचे । (२) प्रण । (३) पके । (४) घरघराना ।

ोन लोक के तुम प्रति-पालक, मैं तो दास तिहारो ।
ारी जाति कुजाति प्रभू जी, मो पर किरपा धारो ॥२॥
तितन मैं इक नायक कहिये, नीचन मैं सरदारो ।
ाटि पापी इक पासँग मेरे, अजामिल कौन बिचारो ॥३॥
ठो धरम नाम सुनि मेरो, नरक कियो हठ तारो ।[1]
ा को ठौर नहीं अब कोऊ, अपनो बिरद सम्हारो ॥४॥
ुद्र पतित तुम तारे रमापति, अब न करो जिय गारो ।
रदास साचो तब माने, जो ह्वै मम निस्तारो ॥५॥

(८)

क परी मो तैं मैं जानी, मिलैं स्याम बकसाऊँ री ।
ा हा करि दसननि तृन धरि धरि, लोचन जलनि ढराऊँ री[2]१
रन गहौं गाढ़े करि कर सौं, पुनि पुनि सीस छुआऊँ री ।
ख चितऊँ फिरि धरनि निहारौं, ऐसे रुचि उपजाऊँ री ॥२
लौं धाय अकुलाय भुजनि भरि, उर की तपनि जनाऊँ री ।
रस्याम अपराध छमहु अब, यह कहि कहि जु सुनाऊँ री ३

(९)

ाधो जू जो जन तैं बिगरै ।
न कृपालु करुनामय कबहूँ, प्रभु नहिं चित्त धरै ॥१॥
यौं सिसु[3] जननि[4] जठर[5] अंतरगत, सत अपराध करै ।
ऊ तनय[6] तनु तोष पोष चित, बिहँसत अंक भरै ॥२॥
दपि बिटप[7] जर हतन[8] हेत करि, कर कुठार पकरै ।
दपि सुभाव सुसील सुसीतल, रिपु तनु ताप हरै ॥३।

(१) धर्मराय ने मेरा नाम सुनकर मुझे ग्रहण करने से इनकार किया और
र्क बोला कि हमारे यहाँ रहने के यह योग्य नहीं है इस को तार कर हटाओ ।
२) दाँतों के नीचे तिनका धर कर (जोकि निशान आधीनता का है) आँखों से
जल धारा बहाता हूँ । (३) बालक । (४) माता (५) पेट । (६) बेटा । (७) पेड़ ।
(८) काटने के लिये ।

कारन करन अनन्त अजित कहँ, केहिं विधि चरन परै।
यह कलिकाल चलत नहिं मो पै, सूर सरन उबरै ॥९॥

(१०)

अब हौं नाच्यो बहुत गोपाल ॥टेक॥
काम क्रोध को पहिरि चोलना, कंठ विषय की माल।
महा मोह के नूपुर बाजत, निन्दा सब्द रसाल ॥१॥
तृस्ना नाद करत घट भीतर, नाना विधि की ताल।
माया को कटि[1] फेटा बाँध्यो, लोभ तिलक दियो भाल[2] ॥२॥
कोटिक कला नाच दिखराई, जल थल सुधि नहिं काल।
सूरदास की सभी अविद्या, दूर करो नँदलाल ॥३॥

(११)

मो सम कौन कुटिल खल कामी।
जिन तनु दियो ताहि बिसरायो, ऐसो निमक-हरामी ॥१॥
भरि भरि उदर विषय को धावौं, जैसे सूकर ग्रामी[3]।
हरि-जन छाड़ हरी-बिमुखन को, निसिदिन करत गुलामी ॥२॥
पापी कौन बड़ो है मो तैं, सब पतितन मैं नामी।
सूर पतित को ठौर कहाँ है, सुनिये श्रीपति[4] स्वामी ॥३॥

॥ उपदेश ॥

(१)

छाड़ु मन हरि बिमुखन को संग।
कहा भयो पय पान कराये, विष नहिं तजत भुवंग ॥१॥
जा के संग कुबुद्धी उपजै, परत भजन में भंग।
काम क्रोध मद लोभ मोह मैं, निस दिन रहत उमंग ॥२॥
कागहि कहा कपूर खवाये, स्वान न्हवाये गंग।
खर को कहा अरगजा लेपन, मरकट भूषन अंग ॥३॥

(१) कमर। (२) सिर। (३) गाँव का सुअर। (४) लक्ष्मी के पति अर्थात् विष्णु।

पाहन पतित बान नहिं बेधत, रीतो[1] करत निषंग[2]।
सूरदास खल कारी कामरि, चढत न दूजो रंग ॥४॥

(२)

सब दिन होत न एक समान ॥ टेक ॥
इक दिन राजा हरीचंद गृह, संपति मेरु समान।
इक दिन जाय स्वपच गृह सेवत, अंबर हरत मसान ॥१॥
इक दिन दूलह बनत बराती, चहुँ दिसि गड़त निसान।
इक दिन डेरा होत जँगल में, कर सूधे पग तान ॥२॥
इक दिन सीता रुदन करत है, महा विषम उद्यान[3]।
इक दिन रामचन्द्र मिलि दोऊ, विचरत पुष्प विमान ॥३॥
इक दिन राजा राज जुधिष्टिर, अनुचर श्रीभगवान।
इक दिन द्रोपदि नग्न होत है, चीर दुसासन तान ॥४॥
प्रगटत है पूरब की करनी, तजु मन सोच अजान।
सूरदास गुन कहँ लग बरनौं, विधि के अंक[4] प्रमान ॥५॥

स्वामी हरिदास

यह एक भारी कृष्ण भक्त हुए जो सोलहवें शतक के पिछले हिस्से से सत्रहवें शतक के अगले हिस्से तक विराजमान थे। ललिता सखी के अवतार समझे जाते हैं। गान विद्या में यह बड़े निपुन प्रसिद्ध तानसेन के गुरु थे। अकबर बादशाह जो इन का समकालीन था एक बार तानसेन के साथ इन के दर्शन को आया था। इन के कई एक ग्रंथ हैं जिन में से भरथरी-वैराग्य और रस के पद प्रसिद्ध हैं। भरथरी वैराग्य संवत १६०७ में और पद १६१७ में बनाये गये।

(१)

गायो न गोपाल मन लाइ के निवारि लाज।
पायो न प्रसाद साधु मन्डली मैं जाइ के ॥१॥

---

(१) खाली। (२) तरकश। (३) भारी जंगल में। (४) ब्रह्मा का कर्म लेख।

धायो न धमक वृन्दाविपिन की कुंजन मैं ।
रह्यो न सरन जाइ विट्ठलेसराइ के ॥२॥
नाथ जू न देखि छक्यो छिनहूँ छबीली छाँव ।
सिंह पोँरि पर्यो नाहिँ सीसहूँ नवाइ के ॥३॥
कहै हरिदास तोहिँ लाज हू न आवै नेक ।
जनम गँवाये ना कमायो कछु आइ के ॥४॥

(२)

गहैा मन, सब रस को रस सार ॥टेक॥
लोक वेद कुल करमै तजिये, भजिये नित्य विहार ॥१॥
गृह कामिनि कचन धन त्यागैा, सुमिरैा स्याम उदार ॥२
गहि हरिदास रीति सन्तन की, गादी को अधिकार ॥३॥

मीरा बाई

जीवन समय—१५७३ से १६३० तक। जन्म स्थान—मौ० कुकडी (मेरता, मारवाड) । जाति और आश्रम—राठोर, गृहस्थ । गुरू—रैदासजी ।

इन की अनूठी भक्ति जक्त-प्रसिद्ध है । यह जोधपुर के राठोर राव रत्नसिंह की एकलौती बेटी थीं और उदयपुर के युवराज कुँवर भोजराज से ब्याही गईं जो राजगद्दी पर बैठने के पहिले ही मर गये । पति के देहान्त होने पर मीरा बाई के देवर ने जो गद्दी पर बैठे इन को निरंतर भक्ति और साधु सेवा करने के कारन बहुत सताया यहाँ तक कि बाई जी को घर से भाग आना पड़ा । कहते हैं कि मीरा बाई अंत समय द्वारका में रनछोर जी की मूर्त्ति में समा कर अलोप होगईं ।

॥ चितावनी ॥

(१)

मनखा[1] जनम पदारथ पायो, ऐसो बहुर न आती ॥टेक॥
अब के मोसर[2] ज्ञान विचारो, राम राम मुख गाती ।
सतगुरु मिलिया सुंज[3] पिछानी, ऐसा ब्रह्म मैं पाती ॥१॥

---

(१) मनुष्य का । (२) अवसर । (३) सूझ ।

सगुरा सूरा अमृत पीवे, निगुरा प्यासा जाती।
मगन भया मेरा मन सुख मैं, गोविंद का गुन गाती ॥२॥
साहिब पाया आदि अनादी, नातर[1] भव में जाती।
मीरा कहे इक आस आप की, औरों[2] सूँ सकुचाती।३॥

(२)

भज मन चरन कँवल अविनासी ॥ टेक ॥
जेताइ दीसे धरनि गगन बिच, तेताइ सब उठि जासी।
कहा भयो तीरथ व्रत कीन्हे, कहा लिये करवत कासी ॥१
इस देही का गरब न करना, माटी मैं मिल जासी।
यो संसार चहर[3] की बाजी, साँझ पड्याँ उठि जासी ॥२॥
कहा भयो है भगवा पहर्याँ, घर तज भये सन्यासी।
जोगी होय जुगति नहिं जानी, उलटि जनम फिर आसी ॥३
अरज करौं अबला कर जोरे, स्याम तुम्हारी दासी।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, काटो जम की फाँसी ॥४॥

॥ विरह ॥

(१)

हे री मैं तो प्रेम दिवानी, मेरा दरद न जाने कोय ॥टेक॥
सूली ऊपर सेज हमारी, किस बिध सोना होय।
गगन मँडल पै सेज पिया की, किस बिध मिलना होय ॥१॥
घायल की गति घायल जानै, की जिन लाई होय।
जौहरी की गत जौहरी जानै, की जिन जौहर होय ॥२।
दरद की मारी बन बन डोलूँ, वैद मिल्या नहिं कोय।
मीरा की प्रभु पीर मिटैगी, जब वैद सँवलिया होय ॥३॥

(१) नहीं तो। (२) दूसरों। (३) चिड़ियों का सा तमाशा जो साँझ होते ही बसेरे को उड़ जाती हैं।

(२)

नींदलड़ी नहिं आवै सारी रात, किस विध होइ परभात[१] ॥टेक॥
चमक[२] उठी सुपने सुध भूली, चंद्र कला न सुहात ।
तलफ तलफ जिव जाय हमारो, कब रे मिलै दीना-नाथ ॥
भइ हूँ दिवानी तन सुध भूली, कोई न जानी म्हाँरी बात ।
मीरा कहै बीती सोइ जानै, मरन जीवन उन हाथ ॥२॥

(३)

नैना म्हारे बान पड़ी, साईं मोहिं दरस दिखाई ॥टेक॥
चित्त चढ़ी मेरे माधुरि मूरत, उर बिच आन अड़ी ॥१॥
कैसे प्रान पिया बिनु राखूँ, जीवन मूर जड़ी[३] ॥२॥
कब की ठाढ़ी पथ निहारूँ, अपने भवन खड़ी ॥३॥
मीरा प्रभु के हाथ बिकानी, लोक कहै बिगड़ी ॥४॥

(८)

माई म्हाँरी हरि न बूझी बात ।
पिंड मैं से प्राण पापी, निकस क्यूँ नहिं जात ॥१॥
रैन अँधेरी विरह घेरी, तारा गिणत निस जात ।
ले कटारी कंठ चीरूँ, करूँगी अपघात ॥२॥
पाट[४] न खोल्या मुखाँ न बोल्या, साँझ लग परभात ।
अबोलना मैं अवध बीती, काहे की कुसलात ॥३॥
सुपन मैं हरि दरस दीन्हों, मैं न जाण्यो हरि जात ।
नैन म्हाँरा उघड़[५] आया, रह्यो मन पछतात ॥४॥
आवन आवन होय रह्यो रे, नहिं आवन की बात ।
मीरा व्याकुल बिरहनी रे, बाल ज्यौं बिल्लात ॥५॥

(५)

घड़ी एक नहिं आवड़े[६], तुम दरसन बिन मोय ।
तुम ही मेरे प्राण जी, का सूँ जीवन होय ॥१॥

(१) सवेरा । (२) चौंक । (३) बूटी । (४) पल्ला । खुल गया । (६) सुहाई ।

धान[1] न भावे नींद न आवे, विरह सतावे मोय ।
घायल सी घूमत फिरूँ रे, मेरा दरद न जाने कोय ॥२॥
दिवस तो खाय गमाइयो रे, रैन गमाई सोय ।
प्राण गमायो झूरताँ[2] रे, नैन गमाई रोय ॥३॥
जो मैं ऐसा जानती रे, प्रीत किये दुख होय ।
नगर ढँढोरा फेरती रे, प्रीत करो मत कोय ॥४॥
पंथ निहारूँ डगर बुहारूँ, ऊबी[3] मारग जोय ।
मीरा के प्रभु कब रे मिलोगे, तुम मिलियाँ सुख होय ॥५॥

(६)

म अपने सैयाँ सँग साची ।
अब काहे की लाज सजनी, प्रगट ह्वै नाची ॥१॥
दिवस भूख न चैन कबहिन, नींद निसु नासी ।
बेध वार को पार होइगो, ज्ञान गुह[4] गाँसी ॥२॥
कुल कुटुंब सब आनि बैठे, जैसे मधु मासी[5] ।
दास मीरा लाल गिरधर, मिटी जग हाँसी ॥३॥

(७)

नातो[6] नाम को मो सूँ, तनक न तोड्यो जाय ॥टेक॥
पानाँ ज्यूँ पीली पडी रे, लोग कहैं पिंड रोग ।
छाने[7] लाँघन[8] मैं किया रे, राम मिलन के जोग ॥१॥
बाबल[9] वैद बुलाइया रे, पकड दिखाई म्हाँरी बाँह[10] ।
मूरख वैद मरम नहिं जाने, करक[11] कलेजे माँह ॥२॥
जाओ वैद घर आपने रे, म्हाँरो नाँव न लेय ।
मैं तो दाधो[12] विरह की रे, काहे कूँ औषद[13] देय ॥३॥

---

(१) अन्न । (२) विलक विलक कर । (३) खड़ी । (४) गुन । (५) शहद की मक्खी । (६) रिश्ता । (७) छिप कर । (८) फाका । (९) बाप । (१०) नाड़ी । (११) दर्द । (१२) जली हुई । (१३) दवा ।

माँस गलि गलि छीजिया रे, करक रह्या गल आहि[1]।
आँगुलियाँ की मूँदड़ी, म्हाँरे आवन लागी बाँहि ॥४॥
रहु रहु पापी पपीहा रे, पिव को नाम न लेय।
जे कोइ बिरहन साम्हले[2], तो पिव कारन जिव देय ॥५॥
खिन मन्दिर खिन आँगने रे, खिन खिन ठाढ़ी होय।
घायल ज्यूँ घूमूँ खड़ी, म्हाँरी बिथा न बूझै कोय ॥६॥
काढ़ि कलेजो मैं धरूँ रे, कौवा तू ले जाय।
ज्याँ देसाँ म्हाँरो पिव बसै रे, वे देखत तू खाय ॥७॥
म्हाँरे नातो नाम को रे, और न नातो कोय।
मीरा व्याकुल बिरहनी रे, पिय दरसन दीज्यो मोय ॥८॥

(८)

दरस बिन दूखन लागे नैन ॥ टेक ॥
जब से तुम बिछुरे मेरे प्रभुजी, कबहुं न पायो चैन ॥१॥
सबद सुनत मेरी छतिया कंपै, मीठे लगे तुम बैन ॥२॥
एक टकटकी पंथ निहारूँ, भई छमासी रैन ॥३॥
बिरह बिथा का सूँ कहूँ सजनी, बह गइ करवत ऐन ॥४॥
मीरा के प्रभु कब रे मिलोगे, दुख मेटन सुख देन ॥५॥

(९)

मतवारो बादल आयो रे,
हरि को सँदेसो कुछ नहिं लायो रे ॥ टेक ॥
दादुर मोर पपीहा बोले, कोयल सबद सुनायो रे।
कारी अँधियारी बिजली चमकै, बिरहन अति डरपायो रे ॥१
गाजे बाजे पवन मधुरिया, मेहा अति झड़ लायो रे।
फूँकै[3] काली नाग बिरह की जारी, मीरा मन हरि भायो रे ॥२

(१) हाड। (२) सुन पावे। (३) साँप फुफकार मारता है।

(१०)
होली

रमैया बिन नींद न आवे ।
नींद न आवे बिरह सतावे, प्रेम की आँच ढुलावे[१] ॥टेक॥
बिन पिया जोत मंदिर अंधियारो, दीपक दाय[२] न आवे।
पिया बिना मेरी सेज अलूनी[३], जागत रैन बिहावे[४],
पिया कब रे घर आवे ॥ १ ॥
दादुर मोर पपीहा बोले, कोयल सबद सुनावे ।
घुमँड घटा ऊलर[५] होइ आई, दामिनि दमक डरावे,
नैन झर लावे ॥ २ ॥
कहा करूँ कित जाउं मेरी सजनी, वेदन कून बुतावे[६] ।
बिरह नागिन मेरी काया डसी है, लहर लहर जिव जावे,
जडी घस लावे ॥ ३ ॥
को है सखी सहेली सजनी, पिया कूं आन मिलावे ।
मीरा कूँ प्रभु कब रे मिलोगे, मनमोहन मोहिं भावे,
कबै हँस करि बतलावे[७] ॥ ४ ॥

(११)
होली

होली पिया बिन मोहिं न भावे, घर आँगन न सुहावे ॥टेक॥
दीपक जोय कहा करूँ हेली, पिय परदेस रहावे ।
सूनी सेज जहर ज्यूँ लागे, सुसक सुसक जिय जावे,
नींद नैन नहिं आवे ॥ १ ॥
कब की ठाढी मैं मग जोऊँ, निस दिन बिरह सतावे ।
कहा कहूँ कछु कहत न आवे, हिवडो अति अकुलावे ।
पिया कब दरस दिखावे ॥ २ ॥

(१) सुलगाना । (२) पसंद । (३) फीकी । (४) बीते । (५) चढना ।
(६) बुझावे, शांत करे । (७) बोले ।

ऐसा है कोइ परम सनेही, तुरत सँदेसा लावे।
वा बिरियाँ कब होसी मो कूँ, हँस करि निकट बुलावे,
मीरा मिल होरी गावै ॥ ३ ॥

॥ प्रेम ॥

(१)

आली साँवरो कि दृष्टि, मानो प्रेम की कटारी है ॥टेक॥
लागत बेहाल भई, तन की सुधि बुद्धि गई।
तन मन व्यापो प्रेम मानो मतवारी है ॥ १ ॥
सखियाँ मिलि दोइ चारी, बावरी सी भई न्यारी।
हौं[1] तो वा को नीके जानौं, कुंज को बिहारी है ॥२॥
चंद को चकोर चाहै, दीपक पतंग दाहै।
जल बिना मीन जैसे, तैसे प्रीत प्यारी है ॥३॥
बिनती करों हे स्याम, लागों मैं तुम्हारे पाम[2]।
मीरा प्रभु ऐसे जानो, दासी तुम्हारी है ॥ ४ ॥

(२)

जावो हरि निरमोहड़ा[3] रे, जानी थाँरी प्रीत ॥टेक॥
लगन लगी जब और प्रीत छी[4], अब कुछ अँवली[5] रीत ॥१॥
अमृत पाय बिषै क्यूँ दीजे, कौन गाँव की रीत ॥२॥
मीरा कहे प्रभु गिरधर नागर, आप गरज के मीत ॥३॥

(३)

जब से मोहिं नंद नँदन दृष्टि पड़्यो माई।
तब से परलोक लोक कछू ना सुहाई ॥ १ ॥
मोरन की चंद्र कला सीस मुकुट सोहै।
केसर को तिलक भाल तीन लोक मोहै ॥ २ ॥

(१) मैं। (२) पाँव। (३) निर्मोही। (४) थी। (५) उलटा।

कुंडल की अलक झलक कपोलन पर छाई।
मनो[1] मीन सरवर तजि मकर[2] मिलन आई ॥ ३ ॥
कुटिल भृकुटि[3] तिलक भाल चितवन मैं टौना।
खंजन[4] अरु मधुप[5] मीन भूले मृग छौना[6] ॥ ४ ॥
सुंदर अति नासिका सुग्रीव[7] तीन रेखा।
नटवर[8] प्रभु भेष धरे रूप अति बिसेषा ॥ ५ ॥
अधर बिंब अरुन नैन मधुर मंद हाँसी।
दसन[9] दमक दाड़िम[10] दुति[11] चमके चपला[12] सी ॥ ६ ॥
छुद्र घंट किंकिनी[13] अनूप धुनि सुहाई।
गिरधर के अंग अंग मीरा बलि जाई ॥ ७ ॥

(४)

या मोहन के मैं रूप लुभानी ॥ टेक ॥
हाट बाट मोहिं रोकत टोकत,
या रसिया की मैं सार न जानी ॥ १ ॥
सुंदर बदन कमल-दल लोचन,
बाँकी चितवन मंद मुसकानी ॥ २ ॥
जमुना के नीरे तीरे धेनु चरावत,
बंसी मैं गावत मीठी बानी ॥ ३ ॥
तन मन धन गिरधर पर वारूँ,
चरन कमल मीरा लपटानी ॥ ४ ॥

---

(१) मानो, गोया कि। (२) मगर। (३) भौं। (४) खंडरिच चिड़िया। (५) भौंरा। (६) बच्चा। (७) सुंदर गला। (८) नट के समान काछनी काछे। (९) दाँत। (१०) अनार। (११) प्रकाश। (१२) बिजली। (१३) छोटी छोटी घंटियाँ जो करधनी में पोह देते हैं।

(५)

निपट बंकट[1] छवि, अटके मेरे नैना ॥टेक॥
देखत रूप मदन मोहन को, पियत पियूष[2] न मटके[3] ॥१॥
बारिज[4] भँवाँ अलक[5] टेढ़ी मनो, स्रति सुगंधि रस अटके॥२॥
टेढ़ी कटि[6] टेढो कर मुरली, टेढ़ी पाग लर[7] लटके ॥३॥
मीरा प्रभु के रूप लुभानी, गिरधर नागर नट के ॥४॥

(६)

बरसे बदरिया सावन की, सावन की मन भावन की ॥टेक॥
सावन में उमग्यो मेरो मनवा, भनक सुनी हरि आवन की ॥१॥
उमड़ घुमड़ चहुँ दिस से आयो, दामिन दमके झरलावन की॥२॥
नन्ही नन्ही बूँदन मेहा बरसे, सीतल पवन सुहावन की ॥३॥
मीरा के प्रभु गिरधरनागर, आनँद मंगल गावन की ॥४॥

॥ विनय ॥

(१)

पिया मोहिं आरत तेरी हो।
आरत तेरे नाम की मोहिं साँझ सबेरी हो ॥ १ ॥
या तन को दियना करौं मनसा करौं बाती हो।
तेल भरावों प्रेम का बारौं दिन राती हो ॥ २ ॥
पटियाँ पारौं गुर ज्ञान की सुमति माँग सवारौं हो।
पिया तेरे कारने धन जोबन वारौं हो ॥ ३ ॥
सेजड़िया बहु-रंगिया चगा फूल बिछाया हो।
रैन गई तारा गिणत प्रभु अजहुँ न आया हो ॥ ४ ॥
सावन भादों ऊमड़ो बरखा रितु छाई हो।
भौंह घटा घन घेरि के नैनन झरि लाई हो ॥ ५ ॥

(१) बाँकी। (२) अमृत। (३) मुड़े। (४) कँवल। (५) बाल की लट। (६) कमर। (७) पेंच।

मात पिता तुम को दियो तुम हीँ भल जानो हो[1]।
तुम तजि और भतार को मन मेँ नाहिं आनोँ हो ॥ ६ ॥
तुम हो पूरे साइयाँ पूरन पद दीजै हो ।
मीरा व्याकुल बिरहनी अपनी करि लीजै हो ॥ ७ ॥

(२)

तुम पलक उघाड़ो दीनानाथ, हूँ हाजिर नाजिर कब की खड़ी ॥टेक
साऊ[2] थे दुसमन होइ लागे, सब ने लगूँ कड़ी[3]।
तुम बिन साऊ कोऊ नहीं है, डिगी[4] नाव मेरी समँद अड़ी १
दिन नहिं चैन रात नहिं निदरा, सूखूँ खड़ी खड़ी ।
बान बिरह के लगे हिये में, भूलूँ न एक घड़ी ॥२॥
पत्थर की तो अहिल्या तारी, बन के बीच पड़ी ।
कहा बोझ मीरा में कहिये, सौ ऊपर एक धड़ी[5] ॥३॥
गुरु रैदास मिले मोहिं पूरे, धुर से कलम भिड़ी ।
सतगुरु सैन दई जब आ के, जोत में जोत रली ॥४॥

॥ उपदेश ॥

राम नाम रस पीजे मनुआँ, राम नाम रस पीजे ॥टेक॥
तज कुसंग सतसंग बैठ नित, हरि चरचा सुण लीजे ॥१॥
काम क्रोध मद लोभ मोह कूँ, चित से बहाय दीजे ॥२॥
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, ताहि के रँग में भीजे ॥३॥



(१) देखो जीवन चरित्र मीरा बाई का उनकी शब्दावली के ग्रंथ में ।
(२) रक्षक । (३) कड़वी । (४) झकोला खाती है । (५) पसेरी ।

नरसी मेहता जी

—:o:—

जीवन समय—सत्रहवाँ शतक। रचना काल—१६३०। जन्म स्थान—जूनागढ़ [गुजरात]। जाति और आश्रम—गुजराती ब्राह्मण, गृहस्थ।

इन के मा बाप बचपन ही में मर गये थे इस लिये भाई भावज के साथ रहने लगे। फिर भावज के कुटिल वचन के कारन उसका घर भी छोड़ दिया और एक शिवाले में सात दिन तक भूखे प्यासे पड़े रहे, शिवजी की कृपा से वृंदावन आकर साक्षात दर्शन श्रीकृष्ण का पाया। वृंदावन से जूनागढ़ लौट आये और वहाँ एक घर अलग बनाकर अपना ब्याह कर लिया जिस से एक बेटा और दो बेटी उत्पन्न हुए। इन की ईश्वर-भक्ति जगत विख्यात है और इन की हुंडी की कथा जो साधुओं की एक जमात के आग्रह बस इन्हों ने, साँवल साह पर द्वारका को लिख दी और जिस का दाम श्रीकृष्ण ने आप साहूकार का रूप धारण करके चुकाया भक्तमाल में दी है।

(१)

म्हाँने पार उतारो जी, थाँने निज भक्तन की आन।
हमरे अवगुन नेक न चितवो, अपनो ही करि जान ॥१॥
काम क्रोध मद लोभ मोह बस, भूल्यो पद निर्बान।
अब तो सरन गही चरनन की, मत दीजो मोहिं जान ॥२॥
लख चौरासी भरमत भरमत, नेक न परी पिछान।
भवसागर में बह्यो जात हौं, रखिये स्याम सुजान ॥३॥
हौं तो कुटिल अधम अपराधी, नहिं सुमिर्यो तेरो नाम।
नरसी के प्रभु अधम-उधारन, गावत बेद पुरान ॥४॥

(२)

कहाँ लगाई एती देर, अरे अरे साँवरे ॥ टेक ॥
हौं गुजराती सिव को उपासी, पूजौं साँझ सबेर ॥१॥
भक्ति मर्म को सार न जानौं, हाँसी कराई मेरी ढेर ॥२॥
ऊँचे चढ़ि के टेर सुनाऊँ, अब सुनिये म्हारी टेर ॥३॥
क्या कहिं काज सँवारे भक्तन के, क्या निद्रा ने लिये घेर ॥४॥
नरसी के प्रभु अधम-उधारन, राखिये अब की बेर ॥५॥

गुसाईं तुलसीदासजी

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो सतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ ७१]

॥ प्रेम ॥

ये दोउ झूलत रंग हिंडोरैं ।
दसरथ-सुत अरु जनक-नंदनी, चितवन मैं चित चोरैं ॥१॥
नान्ही नान्ही बूँद पवन पुरवैया, बरसत थोरैं थोरैं ।
हरि हरि भूमि घटा झुकि आई, सरजू लेत हिलोरैं ॥२॥
हय दल पैदल गज दल रथ दल, कोटि बने चहुँ ओरैं ।
उपबन माहिं मधुर सुर बोलैं, कोकिल मोर चकोरैं ॥३॥
रत्न जड़ित को बन्यो हिंडोरा, रेसम लागी डोरैं ।
अरस परस दोउ झूल झुलावैं, इक साँवर इक गोरैं ॥४॥
वा मैं बिमल सखी उरझानी, अपनी अपनी ओरैं ।
तुलसिदास अनुकूल जानि के, सियाजी हँसीं मुख मोरैं॥५

॥ विनय ॥

(१)

काहे तैं हरि मोहिं बिसारो ।
जानत निज महिमा मेरे अघ, तदपि न नाथ सम्हारो ॥१
पतित-पुनीत दीनहित, असरण-सरण कहत स्रुति चारो ।
हैं. नहिं अधम सभीत दीन, किधौं बेदन मृषा पुकारो॥२॥
खग गणिका गज ब्याध पाँति जहँ, तहँ हौं हूँ बैठारो।
अब केहि लाज कृपानिधान, परसत पनवारो फारो ॥३

शब्द • विनय के अर्थ—हे हरि मुझ को क्यों भूले जाते हैं, तुम तो अपनी बड़ाई और मेरे दोष दोनों को जानते हो फिर मुझे क्यों नहीं सम्हालते। चारो वेद आप के पतितपावन, दुखिया के हितकारी, असरन को सरन होने की महिमा गाते हैं फिर जो आप मुझ सरीसे अधम, संसारी भय मानने वाले और अचल दुखिया के

मसक विरंचि विरंचि मसक सम, करहु प्रभाव तुम्हारो।
यह सामर्थ्य अछत मोहिं त्यागहु, नाथ तहाँ कछु चारो॥४
जनहि न नरक परत मोकहँ डर, यद्यपि हौं अति हारो।
यह बड़ि त्रास दास तुलसी, प्रभु नामहुँ पाप न जारो॥५॥

(७)

केसव कारन कवन गुसाईं।
जेहिं अपराध असाधु जानि मोहिं, तज्यो अज्ञ[1] की नाईं॥१
परम पुनीत सन्त कोमल चित, तिन्हहिं तुमहिं बनि आई।
तौ विप्र व्याध गनिकहिं कस तार्यो, का कछु रही सगाई[2]॥२
काल कर्म गति अगति जीव की, सब हरि हाथ तुम्हारे।
सोइ कछु करहु हरहु ममता मम, फिरहु[3] न तुमहिं बिसारे॥३
जौं तुम तजहु भजौं न आन प्रभु, यह प्रमान पन मोरे।
मन वच कर्म नरक सुरपुर जहँ, तहँ रघुबीर निहोरे॥४[4]

तारने में देर लगते हो तो सिवाय इस के क्या कहा जाए कि या तो मेरे समस्त औगुनों में निपुन होने में कसर है या आप की महिमा वेदों ने मिथ्या भाखी है। आप के प्रन के सहारे मैं खग [जटायु], गणिका [वेश्या], गज, और व्याधा जिस ने श्रीकृष्ण के चरन में तीर मारा था ऐसे अधमों की पाँति में बैठाया गया तो फिर पंगत में बैठालने के पीछे कौन लाज आप को लगती है कि परोसने के समय मेरी पत्तल को फाड़ते हो। आप का सुभाव है कि छिन में मच्छड़ को ब्रह्मा और ब्रह्मा को मच्छड़ बना देते हो फिर ऐसे समरथ होकर जो मुझे त्यागते हो तो मेरा क्या बस है। सो यद्यपि मैं जनम भर पाप करते २ अति थक गया हूँ फिर भी मुझे नर्क में पड़ने का डर नहीं है पर यह चिन्ता अवश्य है कि लोग हँसेंगे कि नाम भी पापों को नहीं काट सका।

(१) अनजान बन कर। (२) जो तुम केवल पवित्र सज्जनों को ही ग्रहन करते होते तो अजामिल विप्र, व्याध, गनिका इत्यादि दुर्जन क्या तुम्हारे कोई नाते दार थे जो उनको तारा। (३) फिर भी। (४) जो तुम मुझे त्याग दोगे तो भी यह मेरा प्रन है कि दूसरे स्वामी को न भजूँगा, चाहे मुझे नर्क में डाल देव चाहे देव लोक में पहुँचाओ मैं मनसा वाचा कर्मना तुम्हारा ही जस गाऊँगा।

जद्यपि नाथ उचित न होत अस, प्रभु सों करौं ढिठाई।
तुलसिदास सीदत[1] निसि दिन, देखत तुम्हारि निठुराई ॥५

(३)

माधव अब न द्रवहु[2] केहि लेखे।
प्रनतपाल[3] पन तोर, मोर पन जियउँ कमल पद देखे ॥१॥
जब लगि मैं न दीन दयाल तैं, मैं न दास तैं स्वामी।
तब लगि जो दुख सहेउँ कहेउँ नहिं, जद्यपि अन्तर्जामी ॥२
तैं उदार मैं कृपन पतित मैं, तैं पुनीत स्रुति गावै।
बहुत नात रघुनाथ तोहिं मोहिं, अब न तजे बनि आवै ॥३
जनक जननि गुरु बन्धु सुहृद पति, सब प्रकार हितकारी।
द्वैत रूप तम कूप परौं नहिं, अस कछु जतन बिचारी[4] ॥४
सुनु अदभ्र करुना बारिज-लोचन, मोचन भय भारी।
तुलसिदास प्रभु तव प्रकास बिनु, ससय टरत न टारी[5] ॥५

(४)

तू दयाल दीन हौं, तू दानि हौं भिखारी।
हौं प्रसिद्ध पातकी, तू पाप-पुंज हारी ॥१॥
नाथ तू अनाथ को, अनाथ कौन मो सों।
मो समान आरत नहिं, आरत-हर तो सों ॥२॥

---

(१) दुख पाता है। (२) पसीजते, दया करते। (३) जो एक बार भी प्रनाम करे तिस का पालन करनेहारा। (४) पिता, माता, गुरु, भाई, मित्र, स्वामी, सब प्रकार तुम्हीं मेरे हितकारी हो सो ऐसा कुछ जतन करो कि द्वैत रूप अर्थात हौं मैं के अंध कूप में न गिर जाऊँ। (५) सुनो हे अधिक [अदभ्र] करुना निधान कमल नैन, भयहरन प्रभु तुम्हारे प्रकाश बिना मेरा भ्रम अपने पुरुषार्थ से टाले नहीं टलता।

शब्द ४ का अर्थ—इस शब्द में गुसाईं जी ग्यारह नाते गिना कर अपने इष्ट से विनय करते हैं कि जो नाता आप को भावै उसी एक को मान कर मुझे चरन सरन में लीजिये।

ब्रह्म तू हौं जीव हौं, तू ठाकुर हौं चेरो ।
तात मात गुरु सखा तू, सब विधि हित मेरो ॥३॥
तोहि मोहिं नाते अनेक, मानिये जो भावै ।
ज्यौं त्यौं तुलसी, कृपालु चरन सरन पावै ॥४॥

(५)

हरि जू मेरो मन हठ न तजै ।
निसि दिन नाथ देउँ सिख बहु विधि, करत सुभाव निजै ॥१॥
ज्यौं जुवती अनुभवत प्रसव[१] अति, दारुन दुख उपजै ।
ह्वै अनुकूल बिसारि सूल सठ, पुनि खल पतिहिं भजै ॥२॥
लोलुप भ्रमत ख्रमित निसि बासर, सिर पदत्रान बजै ।
तदपि अधम विचरत तेहिं मारग, कबहुँ न मूढ लजै ॥३॥[२]
हौं हारयो करि जतन बिबिधि बिधि, अतिसय प्रबल अजै[३] ।
तुलसिदास बस होत तबै, जन प्रेरक प्रभु बरजै ॥४॥

(६)

दीन को दयालु दानि दूसरो न कोई ।[४]
जाहि दीनता कहौ हौं दीन देखौं सोई ॥१॥
मुनि सुर नर नाग असुर साहिब तो घनेरे ।
पै तो लौं जौ लौं रावरे न नेकु नैन फेरे[५] ॥२॥
त्रिभुवन तिहुँ काल बिदित बदत[६] बेद चारी ।
आदि अंत मध्य राम साहिबी तिहारी ॥३॥

---

(१) जनने का दुख सहती है। (२) जैसे लालची रात दिन रुपया कमाने के फेर में थक जाता है और जूतियाँ खाता है फिर भी वही चाल चलता है और लाज नहीं लाता। (३) अजीत। (४) ईश्वर को छोड़ दूसरा दीनता छुड़ाने का समरथ नहीं है, जिस किसी से अपनी दीनता का दुख रोता हूँ उसी को आप दीन दुखी अर्थात असमरथ पाता हूँ। (५) सुर नर मुनि आदि की अभी तक प्रभुता है जब तक तेरी भौं उनकी ओर टेढ़ी नहीं होती। (६) कहता है।

तोहि माँगि माँगनो न माँगनो कहायो[1] ।
सुनि सुभाव सील सुजस जाचक जन आयो ॥४॥
पाहन पसु विटप विहँग अपने करि लीन्हे ।
महाराज दसरथ के रंक राव कीन्हे ॥५॥[2]
तू गरीब को निवाज हौं गरीब तेरो ।
बारक[3] कहिये कृपालु तुलसिदास मेरो ॥६॥

(७)

मैं हरि पतित-पावन सुने ।
मैं पतित तुम पतित-पावन, दोऊ बानिक[4] बने ॥१॥
व्याध गनिका गज अजामिल, साखि निगमन भने ।
और अधम अनेक तारे, जात का पै गने ॥२॥
जानि नाम अजानि लीन्हें, नरक जमपुर मने ।
दास तुलसी सरनं आयो, राखिये आपने ॥३॥

(८)

तुम सम दीन बन्धु, न दीन कोउ मो सम,
सुनहु नृपति रघुराई ।
मो सम कुटिल मौलिमनि[5] नहिं जग,
तुम सम हरि न हरन कुटिलाई ॥१॥
हौं मन वचन कर्म पातक-रत,
तुम कृपालु पतितन गति दाई ।
हौं अनाथ प्रभु तुम अनाथ-हित,
चित यह सुरति कबहुँ नहिं जाई ॥२॥

---

(१) जिस ने आप से माँगा वह फिर मगना न रहा अर्थात परिपूर्ण हो गया। (२) दशरथ के पुत्र श्रीरामचन्द्र ने जिस जिस को अपनाया वह दरिद्री से राजा होगया यहाँ तक कि पत्थर जैसे अहिल्या, जानवर [बन्दर भालू], पेड़ [यमलार्जुन], चिड़िया [जटायु] की योनियों तक से दीन दुखियों का उद्धार कर दिया। (३) एक बेर। (४) सुभाव, बना। (५) दुष्टों का शिरोमनि, कुटीचर।

हौँ आरत[1] आरत-नासन तुम्ह,
कीरति निगम पुरानन गाई।
हौँ सभीत[2] तुम हरन सकल भय,
कारन कवन कृपा बिसराई ॥३॥
तुम सुखधाम राम स्रमभंजन[3],
हौँ अति दुखित त्रिविध स्रम[4] पाई।
यह जिय जानि दास तुलसी कहँ,
राखहु सरन समुझि प्रभुताई ॥४॥

(९)

जो पै दूसरो कोउ होइ।
तो हौँ बारहिं बार प्रभु, कत दुख सुनावौँ रोइ ॥१॥
काहि ममता दीन पर, को पतित-पावन नाम।
पाप-मूल अजामिलहिं, केहि दियो अपनो धाम ॥२॥
रहे सम्भु बिरंचि सुरपति, लोक-पाल अनेक।
सोक सरि बूड़त करीसहिं, दई काहु न टेक[5] ॥३॥
बिलखि भूपति सदसि महँ, नरनारि कह प्रभु पाहि।
सकल समरथ सरन काहु न, बसन दीन्हों ताहि[6] ॥४॥
एक मुख क्यों कहौँ, करुना-सिन्धु के गुन गाथ[7]।
भक्तहित धरि देह काह न, कियो कोसल-नाथ[8] ॥५॥
आप से कहिं सौंपिये मोहिं, जो पै अतिहिं घिनात।
दासतुलसी और बिधि क्यों, चरन परिहरि[9] जात ॥६॥

---

(१) दीन दुखी। (२) भयमान। (३) क्लेश नाशक। (४) त्रय ताप ग्रसित। (५) शोक की नदी में डूबते हुए गजेन्द्र को किसी ने सहारा नहीं दिया। (६) नरनारी अर्थात द्रोपदी की जब राज सभा में सारी खींची गई और वह बिलख कर त्राहि २ पुकारी और तुम्हारी शरन ली तो तुम्हारे सिवाय किस ने उस को वस्त्र दिया। (७) गाथ कर। (८) अजोध्या के राजा श्रीरामचद्र। (९) छोड कर।

(१०)

अस कछु समुझि परै रघुराया ।
बिन तव कृपा दयाल दास हित, मोह न छूटै माया ॥१॥
वाक्य ज्ञान अत्यन्त निपुन, भव पार न पावै कोई ।
निसि गृह मध्य दीप की बातन, तम निवृत्त नहिं होई ॥२
जैसे कोउ इक दीन दुखित अति, असन-हीन[1] दुख पावै ।
चित्र कल्पतरु कामधेनु गृह, लिखे न विपति नसावै ॥३॥
षट रस बहु प्रकार भोजन कोउ, दिन अरु रैन बखानै ।
बिन बोले सन्तोष-जनित सुख[2], खाइ सोई पै जानै ॥४।
जब लगि नहिं निज हृदे प्रकास, अरु विषय आस मन माहीं ।
तुलसिदास तब लगि जग जोनि, भ्रमत सपनेहुँ सुख नाहीं ॥५

(११)

बेद न पुरान गान जानौं न विज्ञान ज्ञान,
ध्यान धारना समाधि साधन प्रवीनता ॥१॥
नाहिंन बिराग जोग जाग भाग तुलसी के,
दया दान दूबरो हौं, पाप ही की पीनता[3] ॥२॥
लोभ मोह काम कोह[4], दोष कोष मो सों कौन,
कलि[5] हूँ जो सीखि लई मेरी ये मलीनता ॥३॥
एक ही भरोसो राम रावरो कहावत हौं,
रावरे दयाल दीन-बंधु मेरी हीनता ॥४॥

(१२)

स्वारथ को साज न समाज परमारथ को,
मो सों दगाबाज दूसरो न जग जाल है ॥१॥

---

(१) अहार बिना । (२) जो सुख संतोष से उत्पन्न हुआ अर्थात रसीला भोजन करने का आनंद । (३) मुटाई । (४) क्रोध । (५) कलियुग ।

कैान आयो करौ न करौंगो करतूति भलि,
लिखी न विरंचिहूँ[1] भलाई मोरे भाल[2] है ॥२॥
रावरी सपथ[3] राम नाम ही की गति मेरे,
इहाँ झूठो झूठो सो तिलोक तिहूँ काल है ॥३॥
तुलसी को भलो पै तुम्हारे ही किये कृपाल,
कीजै न विलंब बलि पानी भरी खाल है ॥४॥

(१३)

केहि कहौं विपति अति भारी, स्रीरघुबीर धीर हितकारी ॥१
मम हृदय भवन प्रभु तोरा, तहँ बसे आइ बहु चोरा ॥२।
अति कठिन करहिं बरजोरा, मानहिं नहिं बिनय निहोरा ३
तम मोह लोभ अहंकारा, मद क्रोध बोध[4] रिपु मारा ॥४॥
अति करहिं उपद्रव नाथा, मर्दहिं मोहिं जानि अनाथा॥५
मैं एक अमित[5] बटपारा, कोउ सुनै न मोर पुकारा ॥६॥
भागेहुँ नहिं नाथ उबारा, रघुनायक करहु सँभारा ॥७॥
कह तुलसिदास सुनु रामा, लूटहिं तसकर तव धामा[6] ॥८॥
चिंता यहि मोहिं अपारा, अपजस नहिं होहि तुम्हारा ॥९

(१४)

ऐसी मूढ़ता या मन की ॥ टेक ॥
परिहरि राम भक्ति सुरसरिता[7], आस करत ओस कन[8] की ॥१
धूम समूह निरखि चातक ज्यौं, तृषित जानि मति घन[9] की २
नहिं तहँ सीतलता न बारि पुनि, हानि होत लोचन की ॥३

(१) ब्रह्मा। (२) माथा। (३) कसम। (४) बुद्धि, समझ। (५) अनेक। (६) मेरा हृदय जो हे प्रभु तुम्हारा मन्दिर है यह ठग लूट रहे हैं। (७) गंगा। (८) ओस की बूँद। (९) बादल।

टूटैँ गच काँच विलोकि सेन जड़, छाँह आपने तन की ॥४
उटत अति आतुर अहारवस, छति बिसारि आनन की ॥५॥
कहँ लग कहौँ कुचाल कृपा-निधि, जानत हैा गति जन की ६
तुलसिदास प्रभु हरो दुसह दुख, लाज करो निज पन की ॥७

(१५)

कबहुँक हौँ यहि रहनि रहौँगो ।
स्रीरघुनाथ कृपालु कृपा तेँ, सन्त सुभाव गहौँगो ॥१॥
जथा लाभ सन्तोष सदा, काहू सोँ कछु न चहौँगो ।
परहित परत निरन्तर मन, क्रम बचन नेम निबहौँगो ॥२॥
परुष[2] बचन अतिदुसह[3] स्रवन सुनि, तेहि पावक न दहौँगो ।
विगत[4] मान सम सीतल मन, परगुन नहिं दोष कहौँगो ३
परिहरि देह-जनित[5] चिन्ता दुख, सुख सम बुद्धि सहौँगो ।
तुलसिदास प्रभु यहि पथ रहि के, अबिचल भक्ति लहौँगो ॥४

॥ उपदेश ॥

(१)

जा के प्रिय न राम वैदेही ।
तजिये ताहि कोटि वैरी सम, जद्यपि परम सनेही ॥१॥
तज्यो पिता प्रह्लाद, बिभीषन बंधु, भरथ महतारी ।
बलि गुरु तज्यो, कंत ब्रज बनिता, भये जग मंगलकारी ॥२॥
नाते नेह राम के मनियत, सुहृद सुसेव्य जहाँ लौँ ।
अंजन कहा आँखि जेहि फूटै, बहुतक कहौँ कहाँ लौँ ॥३॥
तुलसी सो सब भाँति परम हित, पूज्य प्रान तेँ प्यारो ।
जा सोँ होय सनेह राम पद, एतो मतो हमारो ॥४॥

---

(१) जैसे शीशा की गच में अज्ञान बाज चिड़िया (श्येन) अपने शरीर की छाया देख कर दूसरी चिड़िया का भ्रम कर के अपने मुँह (आनन) में घाव (क्षति) लगने का डर छोड़ कर भूख बस टूट पड़ता है। (२) कटु, कड़ा। (३) असह्य, सहने योग्य नहीं। (४) मृत, बीता हुआ। (५) देह से उत्पन्न हुई।

(२)

राम राम राम जीह[1], जौ लौं तू न जपिहै ।
तौ लौं तू कहूँ जाय तिहूँ ताप तपिहै ॥१॥
सुरसरि[2] तीर बिनु नीर दुख पाइहै ।
सुरतरु[3] तर तोहिं दुख दारिद सताइहै ॥२॥
जागत बागत[4] सुख सपने न सोइहै ।
जनम जनम जुग जुग जग रोइहै ॥३॥
छूटिबे के जतन बिसेष बाँध्यो जायगो ।
ह्वैहै बिष भोजन जो सुधा[5] सानि खायगो ॥४॥
तुलसी बिलोक तिहूँ काल तो सँ दीन को ।
राम नाम ही गति जैसे जल मीन को ॥५॥

(३)

स्रो रघुबीर की यह बानि[6] ।
नीच हूँ सों करत नेह सो, प्रीति मन अनुमानि ॥१॥
परम अधम निषाद पामर, कौन ता की कानि ।
लियो सो उर लाय सुत ज्यौं, प्रेम को पहिचानि ॥२॥
गीध कौन दयालु जो, बिधि रच्यो हिंसा सानि ।
जनक ज्यौं रघुनाथ ता को, दियो जल निज पानि[7] ॥३॥
प्रकृति मलिन कुजाति सबरी, सकल अवगुन खानि ।
खात ता के दिये फल, अति रुचि बखानि बखानि ॥४॥
रजनिचर अरु रिपु बिभीषन, सरन आयो जानि ।
भरत ज्यौं उठि ताहि भेंटत, देह दसा भुलानि ॥५॥
कौन सौम्य[8] सुसील बानर, जिनहिं सुमिरत हानि ।
किये ते सब सखा पूजे, भवन अपने आनि ॥६॥

---

(१) जीभ । (२) गंगा । (३) कल्प वृक्ष । (४) चलते । (५) अमृत । (६) सुभाव ।
(७) जैसे कोई पिता को अपने हाथ से तिलाञ्जुली देता है । (८) रुचिर, दिल-

राम सहज कृपालु कोमल, दीन-हित दिन-दानि ।
भजहि ऐसे प्रभुहिं तुलसी, कुटिल कपट न ठानि ॥७॥

(४)

जागु जागु जीव जड़ जोहै जग जामिनी ।
देह गेह नेह जानि जैसे घन दामिनी ॥१॥[1]
सोवत सपने सहै संसृति सन्ताप रे ।
बूड्यो मृग-वारि खायो जेवरि को साँप रे[2] ॥२॥
कहै वेद बुध[3] तू तो बूझ मन माहिं रे ।
दोष दुख सपने के जागे ही पै जाहिं रे ॥३॥
तुलसी जागे तें जाय ताप तिहुं ताय रे ।
राम नाम सुचि[4] रुचि[5] सहज सुभाय रे ॥४॥

(५)
सवैया

अपराध अगाध भये जन तें, अपने उर आनत नाहिन जू ॥
गनिका गज गीध अजामिल के, गनि पातक पुंज सराहिन जू ।
लिये बारक[6] नाम सुधाम दिये, जेहि धाम महा मुनि जाहिं न जू ॥
तुलसी भजु दीन दयालहिं रे, रघुनाथ अनाथ हिं दाहिन[7] जू ।

(६)
सवैया

सो जननी सो पिता सोइ भ्रात, सो भामिनि सो सुत सो हित मेरो ॥
सोइ सगा सो सखा सोइ सेवक, सो गुरु सो सुर साहिब चेरो ॥
सो तुलसी प्रिय प्रान समान, कहाँ लौं बनाय कहौं बहुतेरो ॥
जो तजि देह को गेह को नेह, सनेह सों राम को होय सबेरो ॥

---

(१) हे जीव जो घोर निद्रा में सोय रहा है जाग कर रात्रि रूप जक्त को देख जहाँ देह और घर की प्रीत बादल म बिजली के समान छिन भंगी है। (२) नींद की दशा में तू संसार सम्बन्धी कष्ट भोगता है जो मृग-जल और रस्सी के साँप की नाईं केवल भ्रम रूप है। (३) पंडित। (४) पवित्र। (५) प्रिय लगे। (६) एक बार। (७) दाहिने=सहायक।

॥ मिश्रित ॥

ममता तू न गई मेरे मन तैं ॥ टेक ॥
पाके केस जन्म के साथी, लाज गई लोकन तैं ।
तन थाके कर कम्पन लागे, जोति गई नैनन तैं ॥१॥
सरवन बचन न सुनत काहु के, बल गये सब इंद्रिन तैं ।
टूटे दसन बचन नहिं आवत, सोभा गई मुखन तैं ॥२॥
कफ पित बात कंठ पर बैठे, सुत हिं बुलावत कर तैं ।
भाइ बन्धु सब परम पियारे, नारि निकारत घर तैं ॥३॥
जैसे ससि मंडल बिच स्याही, छुटे न कोटि जतन तैं ।
तुलसिदास बलि जाउँ चरन के, लोभ पराये धन तैं ॥४॥

दादू दयाल

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो पृष्ठ ७६ संतबानी संग्रह भाग १]

॥ सर्व समरथ ॥

जिनि सत छाड़ै बावरे, पूरिक है पूरा ।
सिरजे की सब चिंत है,[1] देबे कौं सूरा ॥ टेक ॥
गर्भ बास जिन राखिया, पावक थैं न्यारा ।
जुगति जतन करि सींचिया, दे प्राण अधारा ॥१॥
कुंज कहाँ धरि संचरै,[2] तहँ को रखवारा ।
हेम हरत जिन राखिया,[3] सो खसम हमारा ॥२॥
जल थल जीव जिते रहैं, सो सब कौं पूरै ।
सपट सिला मैं देत है, काहे नर झूरै[4] ॥३॥

---

(१) उसे सारी रचना की चिंता है। (२) अंडे को सेवे—कहते हैं कि कुंज चिड़िया दूर रह कर सुरत से अंडे को सेती है। (३) श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर को हिमालय पर्वत पर बर्फ़ में गलने से बचा लिया था। (४) मालिक दो पत्थरों की संधि में बंद जीव जंतु की ख़बर लेता है तो हे नर तू क्यों सोच करता है।

जिन यहु भार उठाइया, निरबाहै सोई।
दादू छिन न विसारिये, ता थैं जीवन होई ॥४॥

॥ नाम और सुमिरन ॥

(१)

नाँउ रे नाँउ रे, सकल सिरोमणि नाँउ रे,
मैं बलिहारी जाउँ रे ॥ टेक ॥
दूतर तारै पारि उतारै, नरक निवारै नाँउ रे ॥१॥
तारणहारा भौजल पारा, निर्मल सारा नाँउ रे ॥२॥
नूर दिखावै तेज मिलावै, जोति जगावै नाँउ रे ॥३॥
सब सुख दाता अमृत राता, दादू माता नाँउ रे ॥४॥

(२)

मनाँ भजि राम नाम लीजे।
साध संगति सुमिरि सुमिरि, रसना रस पीजे ॥ टेक ॥
साधू जन सुमिरण करि, केते जपि जागे।
अगम निगम अमर किये, काल कोइ न लागे ॥१॥
नीच ऊँच चिंतन करि, सरणागति लीये।
भगति मुकति अपणी गति, ऐसैं जन कीये ॥२॥
केते तिरि तीर लागे, बंधन भव छूटे।
कलिमल विष जुग जुग के, राम नाम खूटे[१] ॥३॥
भरम करम सब निवारि, जीवन जपि सोई।
दादू दुख दूर-करण, दूजा नहिं कोई ॥४॥

॥ चितावनी ॥

(१)

मन रे राम बिना तन छीजै।
जब यहु जाइ मिलै माटी मैं, तब कहु कैसैं कीजै ॥ टेक ॥
पारस परसि कंचन करि लीजै, सहज सुरति सुखदाई।
माया बेलि विषै फल लागे, ता परि भूलि न भाई ॥१॥

(१) दूर किये, खतम किये।

जब लग प्राण प्यंड है नीका, तब लग ताहि जिनि भूलै।
यहु संसार सैंवल[1] के सुख ज्यूँ, ता पर तूँ जिनि फूलै ॥२॥
औसर येह जानि जग जीवन, समझि देखि सचु पावै।
अंग अनेक आन मति भूलै, दादू जिनि डहकावै[2] ॥३॥

(२)

सजनी रजनी घटती जाइ।
पल पल छीजै अवधि दिन आवै, अपनौं लाल मनाइ ॥टेक॥
अति गति नींद कहा सुख सोवै, यहु औसर चलि जाइ।
यहु तन बिछुरैं बहुरि कहँ पावै, पीछैं ही पछिताइ ॥१॥
प्राणपति जागै सुंदरि क्यौं सोवै, उठि आतुर गहि पाँइ।
कोमल वचन करुणा करि आगैं, नख सिख रहु लपटाइ ॥२॥
सखी सुहाग सेज सुख पावै, प्रीतम प्रेम बढ़ाइ।
दादू भाग बड़े पिव पावै, सकल सिरोमणि राइ ॥३॥

(३)

कागा रे करंक परि बोलै।
खाइ माँस अरु लगहीं[3] डोलै ॥ टेक ॥
जा तन कौं रचि अधिक संवारा।
सो तन ले माटी मैं डारा ॥१॥
जा तन देखि अधिक नर फूले।
सो तन छाड़ि चल्या रे भूले ॥२॥
जा तन देखि मन मैं गरबाना।
मिलि गया माटी तजि अभिमाना ॥३॥

(१) सेमर एक वृक्ष होता है जिस के बड़े सुंदर लाल फूल देख कर सुवा मगन होता है पर फल पर चोंच मारने से केवल रुई उसके भीतर से निकलती है।
(२) ठगावै। (३) निकट।

दादू तन की कहा बडाई ।
निमख माहिं माटी मिलि जाई ॥४॥

॥ विरह ॥

(१)

कौण विधि पाइये रे, मीत हमारा सोइ ॥ टेक ॥
पास पीव परदेस है रे, जब लग प्रगटै नाहिं ।
बिन देखे दुख पाइये, यहु सालै मन माहिं ॥१॥
जब लग नैन न देखिये, परगट मिलै न आइ ।
एक सेज संगहि रहै, यहु दुख सह्या न जाइ ॥२॥
तब लग नेडे दूरि है, जब लग मिलै न मोहिं ।
नैन निकट नहिं देखिये, संगि रहे क्या होइ ॥३॥
कहा करौं कैसे मिलै रे, तलफै मेरा जीव ।
दादू आतुर बिरहनी, कारण अपने पीव ॥४॥

(२)

अजहुँ न निकसै प्राण कठोर ॥ टेक ॥
दरसन बिना बहुत दिन बीते, सुंदर प्रीतम मोर ॥१॥
चारि पहर चारौं जुग बीते, रैनि गँवाई भोर ॥२॥
अवधि गई अजहूँ नहिं आये, कतहुँ रहे चित चोर ॥३॥
कबहूँ नैन निरखि नहिं देखे, मारग चितवत तोर ॥४॥
दादू ऐसे आतुर बिरहणि, जैसे चंद चकोर ॥५॥

(३)

कतहूँ रहे हो बिदेस, हरि नहिं आये हो ।
जनम सिरानो जाइ, पिव नहिं पाये हो ॥ टेक ॥
बिपति हमारी जाइ, हरि सौं को कहै हो ।
तुम्ह बिन नाथ अनाथ, बिरहनि क्यूँ रहै हो ॥१॥

पिव के विरह वियोग, तन की सुधि नहिं हो ।
तलफि तलफि जिव जाइ, मिरतक ह्वै रही हो ॥२॥
दुखित भई हम नारि, कब हरि आवैं हो ।
तुम्ह बिन प्राण-अधार, जिव दुख पावै हो ॥३॥
प्रगटहु दीनदयाल, बिलम न कीजै हो ।
दादू दुखी बेहाल, दरसन दीजै हो ॥४॥

(४)

आवो राम दया करि मेरे, बार बार बलिहारी तेरे ॥ टेक ॥
बिरहनि आतुर पंथ निहारै, राम राम कहि पीव पुकारै ॥१॥
पंथी बूझै मारग जोवै, नैन नीर जल भरि भरि रोवै ॥२॥
निस दिन तलफै रहै उदास, आतम राम तुम्हारे पास ॥३॥
वपु[१] बिसरै तन की सुधि नाहीं, दादू बिरहनि मिरतक माहीं[२] ॥४॥

॥ प्रेम ॥

(१)

बाला सेज हमारी रे, तूँ आव हौं वारी रे,
हौं दासी तुम्हारी रे ॥ टेक ॥
तेरा पंथ निहारूँ रे, सुन्दर सेज सँवारूँ रे,
जियरा तुम पर वारूँ रे ॥१॥
तेरा अँगना पेखौं रे, तेरा मुखड़ा देखौं रे,
तब जीवन लेखौं रे ॥२॥
मिलि सुखड़ा दीजै रे, यह लाहड़ा[३] लीजै रे,
तुम देखें जीजै रे ॥३॥
तेरे प्रेम की माती रे, तेरे रंगड़े राती रे,
दादू वारणै जाती रे ॥४॥

(१) शरीर । (२) मन की तरंगें मर गई हैं । (३) लाभ ।

(२)

अरे मेरा अमर उपावणहार रे, खालिक आसिक तेरा ॥टेक
तुम सौं राता तुम सौं माता, तुम सौं लागा रंग रे खालिक ॥१
तुम सौं खेला तुम सौं मेला, तुम सौं प्रेम सनेह रे खालिक ॥२
तुम सौं लेणा तुम सौं देणा, तुमहीं सौं रत्त होइ रे खालिक ३
खालिकमेरा आसिकतेरा, दादू अनत न जाइ रे खालिक ॥४

(३)

हरि रस माते मगन भये ।
सुमिरि सुमिरि भये मतवाले, जामण मरण सब भूलि गये ॥टेक
निर्मल भगति प्रेम रस पीवैं, आन न दूजा भाव धरैं ।
सहजैं सदा राम रंगि राते, मुकति वैकुंठैं कहा करैं ॥१॥
गाइ गाइ रस लीन भये हैं, कछू न माँगैं संत जनाँ ।
और अनेक देहु दल आगैं, आन न भावे राम विनाँ ॥२॥
इकटग ध्यान रहैं ल्यौ लागे, छाकि परे हरि रस पीवैं ।
दादू मगन रहैं रसिमाते, ऐसैं हरि के जन जीवैं ॥३॥

(४)

तेरे नाँउ की वलि जाऊँ, जहाँ रहौं जिस ठाऊँ ॥टेक॥
तेरे बैनौं की बलिहारी, तेरे नैनहुं ऊपरि वारी ।
तेरी मूरति की वलि कीती, वारि वारि हौं दीती ॥१॥
सोभित नूर तुम्हारा, सुंदर जोति उजारा ।
मीठा प्राण-पियारा, तूं है पीव हमारा ॥२॥
तेज तुम्हारा कहिये, निर्मल काहे न लहिये ।
दादू वलि वलि तेरे, आव पिया तूं मेरे ॥३॥

पिव के विरह वियोग, तन की सुधि नहिं हो।
तलफि तलफि जिव जाइ, मिरतक ह्वै रही हो ॥२॥
दुखित भई हम नारि, कब हरि आवैं हो।
तुम्ह बिन प्राण-अधार, जिव दुख पावे हो ॥३॥
प्रगटहु दीनदयाल, बिलम न कीजै हो।
दादू दुखी बेहाल, दरसन दीजै हो ॥४॥

(४)

आवो राम दया करि मेरे, बार बार बलिहारी तेरे ॥ टेक ॥
बिरहनि आतुर पंथ निहारै, राम राम कहि पीव पुकारै ॥१॥
पंथी बूझै मारग जोवै, नैन नीर जल भरि भरि रोवै ॥२॥
निस दिन तलफै रहै उदास, आतम राम तुम्हारे पास ॥३॥
बप[1] बिसरै तन की सुधि नाहीं, दादू बिरहनि मिरतक माहीं[2] ॥४॥

॥ प्रेम ॥

(१)

बाला सेज हमारी रे, तूँ आव हौं वारी रे,
हौं दासी तुम्हारी रे ॥ टेक ॥
तेरा पथ निहारू रे, सुन्दर सेज सँवारू रे,
जियरा तुम पर वारूँ रे ॥१॥
तेरा अँगना पेखौं रे, तेरा मुखड़ा देखौं रे,
तब जीवन लेखौं रे ॥२॥
मिलि सुखड़ा दीजै रे, यह लाहड़ा[3] लीजै रे,
तुम देखैं जीजै रे ॥३॥
तेरे प्रेम की माती रे, तेरे रगड़े राती रे,
दादू वारणै जाती रे ॥४॥

(१) शरीर। (२) मन की तरंगें मर गई हैं। (३) लाभ।

(२)

अरे मेरा अमर उपावणहार रे, खालिक आसिक तेरा ॥टेक
तुम सौं राता तुम सौं माता, तुम सौं लागा रंग रे खालिक ॥१
तुम सौं खेला तुम सौं मेला, तुम सौं प्रेम सनेह रे खालिक ॥२
तुम सौं लेणा तुम सौं देणा, तुमहीं सौं रत्त होइ रे खालिक ३
खालिक मेरा आसिक तेरा, दादू अनत न जाइ रे खालिक ॥४

(३)

हरि रस माते मगन भये ।
सुमिरि सुमिरि भये मतवाले, जामण मरण सब भूलि गये ॥टेक
निर्मल भगति प्रेम रस पीवैं, आन न दूजा भाव धरैं ।
सहजैं सदा राम रंगि राते, मुकति वैकुंठैं कहा करैं ॥१॥
गाइ गाइ रस लीन भये हैं, कछू न मांगैं संत जनां ।
और अनेक देहु दत आगैं, आन न भावै राम बिनां ॥२॥
इकटग ध्यान रहैं ल्यौ लागे, छाकि परे हरि रस पीवैं ।
दादू मगन रहैं रसि माते, ऐसैं हरि के जन जीवैं ॥३॥

(४)

तेरे नाँउ की बलि जाऊँ, जहाँ रहौं जिस ठाऊँ ॥टेक॥
तेरे बैनौं की बलिहारी, तेरे नैनहुं ऊपरि वारी ।
तेरी मूरति की बलि कीती, वारि वारि हौं दीती
सोभित नूर तुम्हारा, सुंदर जाेति उजारा ।
मीठा प्राण-पियारा, तूं है पीव हमारा ॥२॥
तेज तुम्हारा कहिये, निर्मल काहे न लहिये

॥ विनय ॥

(१)

पार नहिं पाइये रे राम विना को निरबाहणहार ॥टेक॥
तुम बिन तारण को नहीं, दूभर[1] यहु संसार।
पैरत थाके केसवा, सूझै वार न पार ॥१॥
विषम भयानक भौजला, तुम बिन भारी होइ।
तूँ हरि तारण केसवा, दूजा नाहीं कोइ ॥२॥
तुम बिन खेवट को नहीं, अतिर[2] तिर्यो नहिं जाइ।
औघट भेरा[3] डूबिहै, नाहीं आन उपाइ ॥३॥
यहु घट औघट विषम है, डूबत माहिं सरीर।
दादू काइर राम बिन, मन नहिं बाँधै धीर ॥४॥

(२)

हमारे तुमहीं हौ रखपाल।
तुम बिन और नहीं कोइ मेरे, भौ दुख मेटणहार ॥टेक॥
वैरी पंच निमष नहिं न्यारे, रोकि रहे जम काल।
हा जगदीस दास दुख पावै, स्वामी करौ सँभाल ॥१॥
तुम बिन राम दहैं ये दुंदर, दसौं दिसा सब साल।
देखत दीन दुखी क्यौं कीजे, तुम हौ दीनदयाल ॥२॥
निर्भय नाँव हेत हरि दीजे, दरसन परसन लाल।
दादू दीन लीन करि लीजे, मेटहु सबै जंजाल ॥३॥

(३)

क्यौं बिसरै मेरा पीव पियारा।
जीव की जीवन प्राण हमारा ॥ टेक ॥
क्यौंकर जीवै मीन जल बिछुरैं, तुम बिन प्राण सनेही।
च्यंतामणि जब कर थैं छूटै, तब दुख पावै देही ॥१॥

(१) कठिन। (२) तैरने के योग्य नहीं। (३) बेड़ा।

माता बालक दूध न देवै, सो कैसैं करि पीवै ।
निर्धन का धन अनत भुलाना, सो कैसैं करि जीवै ॥२॥
बरखहु राम सदा सुख अमृत, नीझर निर्मल धारा ।
प्रेम पियाला भरि भरि दीजै, दादू दास तुम्हारा ॥३॥

(४)

तौ निबहै जन सेवग तेरा, ऐसैं दया करि साहिब मेरा ॥टेक
ज्यूँ हम तोरैं त्यूँ तूँ जोरै, हम तोरैं पै तूँ नहिं तोरै ॥१॥
हम बिसरैं त्यूँ तूँ न बिसारै, हम बिगरैं पै तूँ न बिगारै ॥२॥
हम भूलैं तूँ आनि मिलावै, हम बिछुरैं तूँ अंगि लगावै ॥३॥
तुम भावै सो हम पै नाहीं, दादू दरसन देहु गुसाईं ॥४॥

॥ साध ॥

सोई साध सिरोमणी, गोविंद गुण गावै ।
राम भजै बिषिया तजै, आपा न जनावै ॥ टेक ॥
मिथ्या मुखि बोलै नहीं, पर-निंद्या नाहीं ।
औगुण छाड़ै गुण गहै, मन हरि पद माहीं ॥ १ ॥
निर्वैरी सब आतमा, पर आतम जानै ।
सुखदाई समिता गहै, आपा नहिं आनै ॥ २ ॥
आपा पर अंतर नहीं, निर्मल निज सारा ।
सतवादी साचा कहै, लैलीन बिचारा ॥ ३ ॥
निर्भै भजि न्यारा रहै, काहू लिपत न होई ।
दादू सब संसार मैं, ऐसा जन कोई ॥ ४ ॥

॥ घट मठ ॥

(१)

भाई रे घर ही मैं घर पाया ।
सहजि समाइ रह्या ता माहीं, सतगुरु खोज बताया ॥टेक
ता घर काज सबै फिरि आया, आपै आप लखाया ।
खोलि कपाट महल के दीन्हे, थिर अस्थान दिखाया ॥१॥

भय औ भेद भरम सब भागा, साच सोई मन लाया।
प्यंड परे जहाँ जिव जावै, ता मैं सहज समाया ॥ २ ॥
निहचल सदा चलै नहिं कबहूं, देख्या सब मैं सोई।
ताही सूं मेरा मन लागा, और न दूजा कोई ॥ ३ ॥
आदि अन्त सोई घर पाया, इब मन अनत न जाई।
दादू एक रंगै रँग लागा, तामैं रह्या समाई ॥ ४ ॥

(७)

आप आपण मैं खोजौ रे भाई।
बस्तु अगोचर गुरू लखाई ॥ टेक ॥
ज्यूँ मही बिलोयैं माखण आवै।
त्यूँ मन मथियाँ तें तत पावै ॥ १ ॥
काठ हुतासन[1] रह्या समाइ।
त्यूँ मन माहिं निरंजन राइ ॥ २ ॥
ज्यूँ अवनी[2] में नीर समाना।
त्यूँ मन माहैं साच सयाना ॥ ३ ॥
ज्यूँ दर्पन के नहिं लागै काई।
त्यूँ मूरति माहैं निरखि लखाई ॥ ४ ॥
सहजैं मन मथियाँ ते तत पाया।
दादू उन तौ आप लगाया ॥ ५ ॥

॥ सेवक ॥

तूं साहिब मैं सेवग तेरा, भावै सिर दे सूली मेरा ॥टेक॥
भावै करवत सिर पर सारि, भावै लेकर गरदन मारि ॥१॥
भावै चहुँ दिसि अगिन लगाइ, भावै काल दसौ दिसि खाइ॥२॥
भावै गिरवर गगन गिराइ, भावै दरिया माहिं वहाइ ॥३॥
भावै कनक कसौटी देहु, दादू सेवग कसि कसि लेहु ॥४॥

(१) आग। (२) पृथ्वी।

॥ उपदेश ॥

(१)

जियरा मेरे सुमिर सार, काम क्रोध मद तजि विकार ॥टेक॥
तूँ जिनि भूले मन गँवार, सिर भार न लीजै मानि हार ॥१॥
सुणि समझायौ बारबार, अजहुँ न चेतै हो हुसियार ॥२॥
करि तैसैं भव तिरिये पार, दादू इब थैं यहि बिचार ॥३॥

(२)

डरिये रे डरिये, परमेसुर थैं डरिये रे।
लेखा लेवै भरि भरि देवै, ता थैं बुरा न करिये रे ॥टेक॥
साचा लीजी साचा दीजी, साचा सौदा कीजी रे।
साचा राखी झूठा नाखी, विष ना पीजी रे ॥ १ ॥
निर्मल गहिये निर्मल रहिये, निर्मल कहिये रे।
निर्मल लीजी निर्मल दीजी, अनत न बहिये रे ॥ २ ॥
साह पठाया बनिज न आया, जिनि डहकावै रे।
झूठ न भावै फेरि पठावै, कीया पावै रे ॥ ३ ॥
पंथ दुहेला जाइ अकेला, भार न लीजी रे।
दादू मेला होइ सुहेला, सो कुछ कीजी रे ॥ ४ ॥

॥ मन ॥

(१)

मन चंचल मेरो कह्यो न मानै, दसौं दिसा दौरावै रे।
आवत जात बार नहिं लागै, बहुत भाँति बौरावै रे ॥टेक॥
बेर बेर बरजत या मन कौं, किंचित सीख न मानै रे।
ऐसैं निकसि जात या तन थैं, जैसैं जीव न जानै रे ॥१॥
कोटिक जतन करत या मन कौं, निहचल निमिष न होई रे।
चंचल चपल चहूँ दिसि भरमै, कहा करै जन कोई रे ॥२॥
सदा सोच रहत घट भीतरि, मन थिर कैसैं कीजै रे।
सहजैं सहज साध की संगति, दादू हरि भजि लीजै रे ॥३॥

(२)

मेरे तुमहीं राखणहार, दूजा को नहीं ।
ये चंचल चहुँ दिसि जाइ, काल तहीं तहीं ॥ टेक ॥
मैं केते किये उपाइ, निहचल ना रहै ।
जहँ बरजौं तहँ जाइ, मदमातौ वहै ॥ १ ॥
जहँ जाणै तहँ जाइ, तुम थैं ना डरै ।
ता स्यौं कहा बसाइ, भावै त्यूँ करै ॥ २ ॥
सकल पुकारैं साध, मैं केता कह्या ।
गुर अंकुस माने नाहिँ, निरभै ह्वै रह्या ॥ ३ ॥
तुम बिन और न कोइ, इस मन को गहै ।
तूँ राखै राखणहार, दादू तौ रहै ॥ ४ ॥

॥ जगत मिथ्या ॥

मन रे तूँ देखै सो नाहीं, है सो अगम अगोचर माहीं ॥टे
निस अँधियारी कछू न सूझै, ससै सरप दिखावा ।
ऐसैं अंध जगत नहिं जानै, जीव जेवड़ी[1] खावा ॥ १ ॥
मृग-जल देखि तहाँ मन धावै, दिन दिन झूठी आसा ।
जहँ जहँ जाइ तहाँ जल नाहीं, निहचै मरै पियासा ॥२॥
भरम बिलास बहुत बिधि कीन्हा, ज्यौं सुपिनैं सुख पावै ।
जागत झूठ तहाँ कुछ नाहीं, फिरि पीछैं पछितावै ॥३॥
जब लग सूता तब लग देखै, जागत भरम बिलाना ।
दादू अंति इहाँ कुछ नाहीं, है सो सोधि सयाना ॥४॥

॥ करम भरम ॥

मूल सींचि बधै[2] ज्यूँ बेला । सो तत तरवर रहै अकेला ॥टेक॥
देवी देखत फिरैं ज्यूँ भूले । खाइ हलाहल बिष कौं फूले ।
सुख कौं चाहै पड़ै गल पासी[3] । देखत हीरा हाथ थैं जासी ॥१॥

(१) रस्सी । (२) बढ़ै । (३) फाँसी ।

केइ पूजा रचि ध्यान लगावैं । देवल देखैं खबरि न पावैं ।
तोरैं पाती जुगति न जानी। इहि भ्रमि रहे भूलि अभिमानी ॥२
तीरथ बरत न पूजै[1] आसा । बनखंडि जाहीं रहैं उदासा ।
यूँ तप करि करि देह जलावैं । भरमत डोलैं जनम गँवावैं ॥३
सतगुर मिलैं न संसा जाई । ये बंधन सब देइँ छुडाई ।
तब दादू परम गति पावै । सो निज मूरति माहिँ लखावै ॥४

॥ कपट भक्ति ॥

हम पाया हम पाया रे भाई ।
भेष बनाइ ऐसी मनि आई ॥ टेक ॥
भीतर का यहु भेद न जानै ।
कहै सुहागनि क्यूँ मन मानै ॥ १ ॥
अतर पीव सैाँ परचा नाहीं ।
भई सुहागनि लोगन माहीं ॥ २ ॥
साईं सुपिनै कबहुं न आवै ।
कहिबा ऐसैं महल बुलावै ॥ ३ ॥
इन बातन मोहिं अचिरज आवै ।
पटम[2] कियैं पिव कैसैं पावै ॥ ४ ॥
दादू सुहागनि ऐसैं कोई ।
आपा मेटि राम रत होई ॥ ५ ॥

॥ निंदक ॥

न्यदक बाबा बीर हमारा । बिनहीं कौड़े वहै बिचारा[3] ॥टेक
कर्म कोटि के कुसमल काटै । काज सँवारै बिनहीं साटै[4] ॥१
आपण डूबै और कैाँ तारै । ऐसा प्रीतम पार उतारै ॥२॥
जुगि जुगि जीवैा न्यदक मोरा । राम देव तुम करैा निहोरा ३
न्यंदक बपुरा पर-उपगारी । दादू न्यद्या करै हमारी ॥४॥

(१) पूरन होय । (२) पाखंड । (३) बेचारा बिना पैसे [कौड़े] के काम करता रहता है [वहै] । (४) बदला, मुआवजा ।

बाबा मलूकदास

——०*०——

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ ९९]

॥ गुरुदेव ॥

हमारा सतगुरु बिरले जाने ।
सुई के नाके सुमेर चलावै, सो यह रूप बखानै ॥ १ ॥
की तो जानै दास कबीरा, की हरिनाकस पूता ।
की तो नामदेव औ नानक, की गोरख अवधूता ॥ २ ॥
हमरे गुरु की अद्भुत लीला, ना कछु खाय न पीवै ।
ना वह सोवै ना वह जागै, ना वह मरै न जीवै ॥ ३ ॥
बिन तरवर फल फूल लगावै, सो तो वा का चेला ।
छिन मैं रूप अनेक धरत है, छिन मैं रहै अकेला ॥ ४ ॥
बिन दीपक उँजियारा देखै, एँड़ी समुँद थहावै ।
चींटी के पग कुंजर बाँधै, जा को गुरू लखावै ॥ ५ ॥
बिन पंखन उड़ि जाय अकासे, बिन पंखन उड़ि आवै ।
सोई सिष्य गुरू का प्यारा, सूखे नाव चलावै ॥ ६ ॥
बिन पायन सब जग फिरि आवै, सो मेरा गुरु भाई ।
कहै मलूक ता की बलिहारी, जिन यह जुगत बताई ॥ ७ ॥

॥ नाम ॥

नाम तुम्हारा निरमला, निरमोलक हीरा ।
तू साहिब समरत्थ, हम मल मुत्र के कीरा ॥ १ ॥
पाप न राखै देँह मैं, जब सुमिरन करिये ।
एक अच्छर के कहत ही, भौसागर तरिये ॥ २ ॥
अधम-उधारन सब कहैं, प्रभु बिरद तुम्हारा ।
सुनि सरनागत आइया, तब पार उतारा ॥ ३ ॥

तुझ सा गरुवा औ धनी, जा मैं बड़ई समाई ।
जरत उवारे पांडवा, ताती बाव न लाई ॥ ४ ॥
कोटिक औगुन जन करै, प्रभु मनहिं न आनै ।
कहत मलूकादास को, अपना करि जानै ॥ ५ ॥

॥ प्रेम ॥

(१)

तेरा मैं दीदार दिवाना ।
घड़ी घडी तुझे देखा चाहूँ, सुन साहिब रहमाना ॥१॥
हुवा अलमस्त खबर नहिं तन की, पीया प्रेम पियाला ।
ठाड होउँ तो गिरि गिरि परता, तेरे रँग मतवाला ॥२॥
खडा रहूँ दरबार तुम्हारे, ज्यों घर का बंदाजादा[१] ।
नेकी की कुलाह[२] सिर दीये, गले पैरहन[३] साजा ॥ ३ ॥
तौजी और निमाज न जानूँ, ना जानूँ धरि रोजा ।
बाँग जिकिर[४] तबही से बिसरी, जब से यह दिल खोजा ॥४॥
कहैं मलूक अब कजा[५] न करिहौं, दिलही सों दिल लाया ।
मक्का हज्ज हिये मैं देखा, पूरा मुरसिद पाया ॥५॥

(२)

दर्द-दिवाने बावरे, अलमस्त फकीरा ।
एक अकीदा[६] लै रहे, ऐसे मन धीरा ॥ १ ॥
प्रेम पियाला पीवते, बिसरे सब साथी ।
आठ पहर यों झूमते, ज्यों माता हाथी ॥ २ ॥
उनकी नजर न आवते, कोइ राजा रंक ।
बंधन तोड़े मोह के, फिरते निहसंक ॥ ३ ॥

(१) गुलाम बच्चा । (२) टोपी । (३) मेखली । (४) सुमिरन । (५) छूटी हुई नमाज पढ़ना । (६) प्रतीत ।

साहिब मिल साहिब भये, कछु रहि न तमाई[1] ।
कहैं मलूक तिस घर गये, जहँ पवन न जाई ॥ ४ ॥

॥ विनय ॥

(१)

अब तेरी सरन आयो राम ॥ १ ॥
जबै सुनिया साध के मुख, पतित-पावन नाम ॥ २ ॥
यही जान पुकार कीन्ही, अति सतायो काम ॥ ३ ॥
विषय सेती भयो आजिज, कह मलूक गुलाम ॥ ४ ॥

(२)

दीन-बंधु दीना-नाथ, मेरी तन हेरिये ॥ टेक ॥
भाई नाहिं बंधु नाहिं, कुटुम परिवार नाहिं ।
ऐसा कोई मित्र नाहिं, जाके ढिग जाइये ॥ १ ॥
सोने की सलैया नाहिं, रूपे का रुपैया नाहिं ।
कौड़ी पैसा गाँठि नाहिं, जा से कछु लीजिये ॥ २ ॥
खेती नाहिं बारी नाहिं, बनिज व्यौपार नाहिं ।
ऐसा कोई साहु नाहिं, जा सौं कछु माँगिये ॥ ३ ॥
कहत मलूकदास, छोड़ दे पराई आस ।
राम धनी पाय के, अब का की सरन जाइये ॥ ४ ॥

(३)

सवैया

दीन दयाल सुने जब तैं तब तैं, मन मैं कछु ऐसी बसी है ॥१
तेरो कहाय के जाऊँ कहाँ, तुम्हरे हित की पट[2] खैंचि कसी है२
तेरोहो आसरो एक मलूक, नहीं प्रभु सौं कोउ दूजो जसी है३
ए हो मुरार पुकार कहौं अब, मेरी हँसी नहिं तेरी हँसी है४

(१) इच्छा, चाह । (२) पटका ।

॥ उपदेश ॥

(१)

ना वह रीझै जप तप कीन्हे, ना आतम को जारे ।
ना वह रीझै धोती नेती, ना काया के पखारे ॥१॥
दाया करै धरम मन राखै, घर मैं रहै उदासी ।
अपना सा दुख सब का जानै, ताहि मिलै अबिनासी ॥२॥
सहै कुसब्द बाद हू त्यागै, छाड़ै गर्व गुमाना ।
यही रीझ मेरे निरंकार की, कहत मलूक दिवाना ॥३॥

(२)

मन तैं इतने भरम गँवावो ।
चलत बिदेस बिप्र जनि पूछो, दिन का दोष न लावो ॥१॥
सुझा होय करो तुम भोजन, बिनु दीपक के बारे ।
जौन कहैं असुरन की बिरिया, मूढ दई के मारे ॥२॥
आप भले तो सबहि भलो है, बुरा न काहू कहिये ।
जा के मन कछु बसै बुराई, ता सौं भागे रहिये ॥३॥
लोक बेद का पैंडा औरहि, इनको कौन चलावै ।
आतम मारि पषानै पूजैं, हिरदे दया न आवै ॥४॥
रहो भरोसे एक राम के, सूरे का मत लीजै ।
संकट पड़े हरज नहिं मानो, जिय का लोभ न कीजै ॥५॥
किरिया करम अचार भरम है, यही जगत का फंदा ।
माया जाल मैं बाँधि अँडाया[१], क्या जानै नर अंधा ॥६॥
यह संसार बड़ा भौसागर, ता को देखि सकाना[२] ।
सरन गये तोहिं अब क्या डर है, कहत मलूक दिवाना ॥७॥

॥ माया ॥

हम से जनि लागै तू माया ।
थोरे से फिर बहुत होयगी, सुनि पैहैं रघुराया ॥१॥

(१) गिराया। (२) डरा।

अपने मैं है साहिब हमरा, अजहूँ चेतु दिवानी ।
काहू जन के बस परि जैहो, भरत मरहुगी पानी ॥२॥
तर है चितै[१] लाज करु जन की, डारु हाथ की फाँसी ।
जन तैं तेरो जोर न लहिहै, रच्छपाल अविनासी ॥३॥
कहै मलूका चुप करु ठगनी, औगुन राखु दुराई ।
जो जन उबरै राम नाम कहि, ता तैं कछु न वसाई ॥४॥

नाभाजी

इन का जीवन समय सत्रहवाँ शतक था और इन का देहान्त होना सं० १७०० मैं इन के शिष्य प्रियादास जी ने लिखा है जिन्हों ने अपने गुरु की आज्ञानुसार उन के मुख्य ग्रन्थ भक्तमाल छुदबद की टीका उनके देहान्त होने के पीछे बनाई, परंतु मिश्र-बंधु विनोद में सं० १७२० के लगभग इन का मृत्यु काल सिद्ध किया गया है। इन की जाति के विषय में झगड़ा है, प्रायः लोग डोम बतलाते हैं। इन के शिष्य प्रियादासजी ने अपनी टीका में इन्हें हनुमान-वंशी लिखा है और माड़वारी भाषा मैं डोम शब्द का प्रयोजन हनुमान है। दूसरे टीकाकार ने ऐसा लिखा है कि वेश्नवों की जाति पाँति वक्तव्य नहीं है। नाभाजी अग्रदास के शिष्य और गुसाईं तुलसीदासजी के बड़े मित्र थे।

॥ शब्द ॥

नाभा नभ खेला कँवल केल रस सैला ॥ टेक ॥
दरपन नैन सैन मन माँजा, लाजा अलख अकेला ॥१॥
पल पर दल दल ऊपर दामिनि, जोत मैं होत उजेला ॥२॥
अंडा पार सार लख सूरत, सुन्नी सुन्न सुहेला ॥३॥
चढ़ गइ धाय जाय गढ़ ऊपर, सबद सुरत भया मेला ॥४॥
यह सब खेल अलेख अमेला, सिंध नीर नद मेला ॥५॥
जल जलधार सार पद जैसे, नहीं गुरू नहिं चेला ॥६॥
नाभा नैन श्रैन अंदर के, खुल गये निरख निहाला ॥७॥
संत उचिष्ट-वार मन भेला, दुर्लभ दीन दुहेला ॥८॥

---

(१) नीची निगाह कर देख।

सुंदरदासजी

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १०६]

॥ गुरुदेव ॥

(१)

सो गुरुदेव लिपै न छिपै कछु,
सत्व रजो तम ताप निवारी ।
इंद्रिय देह मृषा[1] करि जानत,
सीतलता समता[2] उर धारी ॥
व्यापक ब्रह्म विचार अखंडित,
द्वैत उपाधि सबै जिन टारी ।
सबद सुनाय सँदेह मिटावत,
सुंदर वा गुरु की बलिहारी ॥

(२)

गोविंद के किये जीव, जात हैं रसातल को ।
गुरु उपदेसे से तो, छूटै जम फंद तैं ॥
गोविंद के किये, जीव बस परे कर्मन के ।
गुरु के निवाजे से, फिरत है स्वच्छंद[3] तैं ॥
गोविंद के किये, जीव बूड़त भवसागर मैं ।
सुंदर कहत गुरु, काढ़ै दुःख द्वंद[4] तैं ।
और हू कहाँ लौं कछू, मुख तैं कहूँ बनाय ।
गुरु की तो महिमा, अधिक है गोविंद तैं ॥

॥ अजपा जाप ॥

स्वासैँ स्वास राति दिन सोहं सोहं होइ जाप ।
याही माला बरबार द्रढ कै धरतु है ॥

---

(१) वृथा । (२) सम दृष्टि । (३) स्वाधीन । (४) झगड़ा ।

देह परे इंद्री परे अंतःकरण परे ।
एकही अखंड जाप ताप[२] कूँ हरतु है ॥
काठ की रुद्राच्छ की रु सूतहू की माला औ
इनके फिराये कछु कारज सरतु है ॥
सुंदर कहत ता तैं आतमा चैतन्य रूप ।
आप को भजन सो तो आपही करतु है

॥ शूर ॥
(१)

पाँव रोपि रहै, रण माहिं रजपूत कोऊ ।
हय गज गाजत, जुरत जहाँ दल है ॥
बाजत जुझाऊ सहनाई, सिंधु राग पुनि ।
सुनतहि कायर की, छूटि जात कल है
झलकत बरछी, तिरछी तरवार वहै ।
मार मार करत, परत खलभल[२] है ॥
ऐसे जुद्ध मैं अडिग्ग, सुंदर सुभट सोई ।
घर माहिं सूरमा, कहावत सकल है ॥
(२)

॥ पतिव्रता ॥

(१)

जल को सनेही मीन, बिछुरत तजै प्रान।
मणि बिनु अहि[1] जैसे, जीवत न लहिये॥
स्वाँति बुंद को सनेही, प्रगट जगत माहिं।
एक सीप दूसरो सु, चातक हु कहिये॥
रवि को सनेही पुनि, कमल सरोवर में।
ससि को सनेही हू, चकोर जैसे रहिये॥
तैसेही सुंदर एक, प्रभु सूँ सनेह जोरि।
और कछु देखि, काहू ओर नहिं बहिये॥

(२)

एक सही सब के उर अंतर, ता प्रभु कूँ कहु काहि न गावै।
संकट माहिं सहाय करै पुनि, सो अपनो पति क्यूँ बिसरावै॥
चार पदारथ और जहाँ लगि, आठहु सिद्धि नवौ निधि पावै।
सुंदर छार परौ तिन के मुख, जो हरि कूँ तजि आन कूँ ध्यावै॥

॥ बिरह उराहना[2] ॥

(१)

पीव को अँदेसो भारी, तो सूँ कहूँ सुन प्यारी।
यारी[3] तोरि गये सो तौ, अजहूँ न आये हैं॥
मेरे तौ जीवन-प्राण, निसि दिन उहै ध्यान।
मुख सूँ न कहूँ आन, नैन उर लाये हैं॥
जब तैं गये बिछोहि, कल न परत मोहिं।
ता तैं हूँ पूछत तोहि, किन बिरमाये[4] है॥
सुंदर बिरहिनी को, सोच सखी बार बार।
हम कूँ बिसार अब कौन के कहाये हैं॥

---

(१) साँप। (२) उलहना। (३) स्नेह। (४) रिझाकर रोक लेना।

(२)

हम कूँ तौ रैन दिन, संक मन माहिं रहै ।
उनकी तौ बातनि मैं, ठीकहु न पाइये ॥
कबहूँ सँदेसा सुनि, अधिक उछाह[1] होइ ।
कबहुँक रोइ रोइ, आँसुन बहाइये ॥
औरन के रस बस, होइ रहे प्यारे लाल ।
आवन की कहि कहि, मह कूँ सुनाइये ॥
सुंदर कहत ताहि, काटिये सु कौन भाँति ।
जोइ तरु आपने सु, हाथ तैं लगाइये ॥

॥ अद्वैत ॥

(१)

ब्रह्म निरंतर व्यापक अग्नि, अरूप अखंडित है सब माहीं ॥
ईसुर पावक रासि प्रचंड जु, संग उपाधि लिये बरताहीं ॥
जीव अनंत मसाल चिराग, सु दीप पतंग अनेक दिखाहीं ॥
सुंदर द्वैत उपाधि मिटै जब, ईसुर जीव जुदे कछु नाहीं ॥

(२)

जैसे ईख रस की मिठाई, भाँति भाँति भई ।
फेरि करि गारे, ईख रसही लहतु है ॥
जैसे घृत थीज के, डरा सौं बँधि जात पुनि ।
फेर पिघले तैं वह, घृतही रहतु है ॥
जैसे पानी जमि के, पषाण हू सौं देखियत ।
सो पषाण फेरि पानी, होय के बहतु है ॥
तैसेही सुंदर यह, जगत है ब्रह्ममय ।
ब्रह्म सो जगतमय, वेद सु कहतु है ॥

(१) आनन्द।

॥ जीवात्मा या सुरत ॥

स्रोत्र सुनैं दृग देखत हैं, रसना रस घ्राण सुगंध पियारो ॥
कोमलता त्वक[1] जानत है पुनि, बोलत है मुख सबद उचारो ॥
पाणि[2] गहै पद गौन करै, मलमूत्र तजै उभयो[3] अघ-द्वारो ॥
जासु प्रकास प्रकासत हैं सब, सुंदर सोइ रहै घट न्यारो ॥

॥ स्वरूप विस्मरण ॥

(१)

आप न देखत है अपनो मुख, दर्पण काट[4] लग्यो अति थूला ॥
ज्यूँ दृग देखत तैं रहि जात, भयो जबहीं पुतरी परि फूला ॥
छाय अज्ञान रह्यो अभिअंतर, जानि सकै नहिं आतम मूला ॥
सुंदर यूँ उपजे मन के मल, ज्ञान बिना निज रूपहि भूला ॥

(२)

इंद्रिन कूँ प्रेरि पुनि, इंद्रिन के पीछे पर्यो ।
आपनी अविद्या करि, आप तनु गह्यो है ॥
जोइ जोइ देह कूँ, सकट आइ परै कछु ।
सोइ सोइ मानै आप, या तैं दुख सह्यो है ॥
भ्रमत भ्रमत कहूँ, भ्रम को न आवै अंत ।
चिरकाल बीत्यो पै, स्वरूप कूँ न लह्यो है ॥
सुंदर कहत देखो, भ्रम की प्रबलताई ।
भूतन मैं भूत मिलि, भूत होइ रह्यो है ॥

॥ भ्रम ॥

जैसे स्वान काच के, सदन[5] मध्य देखि और ।
भूँकि भूँकि मरत, करत अभिमान जू ॥
जैसे गज फटिक, सिला सूँ लरि तोरै दंत ।
जैसे सिंह कूप माहिं, उझक भुलान जू ॥

(१) त्वचा। (२) हाथ। (३) दोनों। (४) मोरचा। (५) घर।

जैसे कोउ फेरी खात, फिरत सु देखै जग।
तैसेही सुंदर सब, तेरोही अज्ञान जू॥
अपनो हो भ्रम सो तौ, दूसरे दिखाई देत।
आप कूँ विचारे कोऊ, देखिये न आन जू॥

॥ मन ॥

(१)

पलही मैं मरि जाय, पलही मैं जीवतु है,
पलही मैं पर हाथ, देखत बिकानो है।
पलही मैं फिरै, नवखंड हू ब्रह्मांड सब,
देख्यो अनदेख्यो सो तौ, या तैं नहिं छानो[1] है॥
जातो नहिं जानियत, आवतो न दीसै कछु,
ऐसेसी बलाइ अब, ता सूँ पर्यो पानो[2] है।
सुंदर कहत या की, गति हू न लखि परै,
मन की प्रतीत कोऊ, करै सो दिवानो है॥

(२)

घेरिये तौ घेरे हू, न आवत है मेरो पूत,
जोई परबोधिये, सो कान न धरतु है।
नीति न अनीति देखै, सुभ न असुभ पेखै,
पल ही मैं होती, अनहोती हू करतु है॥
गुरु की न साधु की, न लोक वेदहू की संक,
काहू की न मानै, न तौ काहू तें डरतु है।
सुंदर कहत ताहि, धीजिये[3] सु कौन भाँति,
मन को सुभाव, कछु कह्यो न परतु है॥

(३)

तो सौं न कपूत कोऊ, कितहूँ न देखियत।
तो सौं न सपूत कोऊ, देखियत और है॥

---

(१) छिपा। (२) पाला, वास्ता। (३) पतियाइये।

तूही आप भूलै महा, नीचहू तें नीच होइ।
तूही आप जानै तौ, सकल सिर मौर है॥
तूही आप भ्रमै तब, जगत भ्रमत देखै।
तेरे स्थित भये सब, ठौर ही को ठौर है॥
तूही जीवरूप तूही, ब्रह्म है अकासवत।
सुंदर कहत मन, तेरो सब दौर है॥

॥ विचार ॥

(१)

एकहि कूप तें नीरहि सींचत, ईख अफीमहि अंब अनारा॥
होत उहै जल स्वाद अनेकनि, मिष्ट कटूक[1] खटा अरु खारा॥
त्यूँही उपाधि सँजोग तेँ आतम, दीसत आहि मिल्यो सविकारा॥
काढ़ि लिये सु विवेक विचार सुँ, सुंदर सुद्ध सरूपहि न्यारा॥

(२)

देह ओर देखिये तौ, देह पंचभूतन को।
ब्रह्मा अरु कीट लग, देहही प्रधान है॥
प्राण ओर देखिये तौ, प्राण सबही के एक।
छुधा पुनि तृपा दोऊ, व्यापत समान है॥
मन ओर देखिये तौ, मन को सुभाव एक।
संकल्प विकल्प करै, सदाही अज्ञान है॥
आतम विचार किये, आतमाही दीसै एक।
सुंदर कहत कोऊ, दूसरो न आन है॥

॥ वचन विवेक ॥

(१)

और तौ वचन ऐसे, बोलत हैं पसु जैसे।
तिन के तौ बोलिबे मैं, ढंगहू न एक है॥

---

(१) कडुवा।

कोऊ रात दिवस, वकतही रहत ऐसे।
जैसी चिधि कूप मैं, वकत मानो भेक[1] ॥
बिबिधि प्रकार करि, बोलत जगत सब।
घट घट प्रतिमुख, बचन अनेक है ॥
सुंदर कहत ता तैं, वचन विचारि लेहु।
बचन ता वहै जा मैं, पाइये बिबेक है ॥

(२)

एकनि के वचन सुनत, अति सुख होइ।
फूल से झरत हैं, अधिक मनभावने ॥
एकनि के बचन तो, असि[2] मानौ बरसत
स्रवण के सुनत, लगत अलखावने ॥
एकनि के बचन, कटुक कहु विष रूप।
करत मरम छेद, दुक्ख उपजावने ॥
सुदर कहत घट घट मैं बचन भेद।
उत्तम मध्यम अरु, अधम सुहावने ॥

(३)

बोलिये तो तब जब, बोलिबे की सुधि होइ।
न तो मुख मैान गहि, चुप होइ रहिये ॥
जोरिये तो तब जब, जोरिबे की जानि परै।
तुक छंद अरथ, अनूप जा मैं लहिये ॥
गाइये तो तब जब, गाइबे को कंठ होइ।
स्रवण के सुनतही, मन जाइ गहिये ॥
तुक-भंग छंद-भंग, अरथ मिलै न कछु।
सुदर कहत ऐसो, बाणी नहीं कहिये ॥

(१) मेंढक। (२) तलवार।

॥ विश्वास ॥

(१)

धीरज धारि विचार निरंतर, तोहि रच्यो सोइ आपुहि ऐहै॥
जेतिक भूख लगी घट प्राणहिं, तेतिक तू अनयासहि पैहै॥
जो मन मैं तृसना करि धावत, तौ तिहुँ लोक न खात अघैहै॥
सुंदर तू मत सोच करै कछु, चोंच दई जिन चूनहु देहै॥

(२)

जगत मैं आइ के, बिसार्‍यो है जगतपति।
जगत कियो है सोई, जगत भरतु है॥
तेरे निसि दिन चिंता, औरहिं परी है आइ।
उद्यम अनेक, भाँति भाँति के करतु है॥
इत उत जाय के, कमाई करि लाऊँ कछु।
नेक न अज्ञानी नर, धीरज धरतु है॥
सुंदर कहत एक, प्रभु के बिस्वास बिनु।
बादहि कूँ वृथा सठ, पचि के मरतु है॥

॥ ज्ञानी ॥

(१)

तमोगुण बुद्धि सो तौ, तवा के समान जैसे।
ता के मध्य सूरज की, रंचहू न जोत है॥
रजोगुण बुद्धि जैसे, आरसी की औंधी ओर।
ता के मध्य सूरज की, कछुक उद्योत[१] है॥
सत्त्वगुण बुद्धि जैसे, आरसी की सूधी ओर।
ता के मध्य प्रतिबिंब, सूरज को पोत[२] है॥
त्रिगुण अतीत[३] जैसे, प्रतिबिंब मिटि जात।
सुंदर कहत एक, सूरजही होत है॥

(१) चमक। (२) गुण। (३) तीनों गुण से रहित।

(२)

विधि न निषेध कछु, भेद न अभेद पुनि ।
क्रिया सो करत दीसै, यूँही नितप्रति है ॥
काहू कूँ निकट राखै, काहू कूँ तौ दूर भाखै ।
काहू सूँ नेरे न दूर, ऐसी जा की मति है ॥
रागहू न द्वेष कोऊ, सोक न उछाह दोऊ ।
ऐसी विधि रहै कहूँ, रति न विरति[१] है ॥
बाहिर ब्योहार ठानै, मन मैं सुपन जानै ।
सुंदर ज्ञानी की कछु, अदभुत गति है ॥

(३)

ज्ञानी कर्म करै नाना विधि, अहंकार या तन को खोवै ॥
कर्मन को फल कछू न जोवै, अंतःकरण बासना धोवै ॥
ज्यूँ कोऊ खेती कूँ जोतत, लेकरि बीज भूमि के बोवै ॥
सुंदर कहै सुनो दृष्टांतहि, नाँगि[२] नहाई कहा निचोवै ॥

॥ सांख्य ज्ञान ॥

(१)

छीर नीर मिले दोऊ, एकठेही होइ रहे ।
नीर जैसे छाडि हंस, छीर कूँ गहतु है ॥
कंचन मैं और धातु, मिलि करि बनि पर्यो ।
सुद्ध करि कंचन, सुनार ज्यूँ लहतु है ॥
पावकहू दारु[३] मध्य, दारुहू सोँ होइ रह्यो ।
मथि करि काढ़ै वह, दारु कूँ दहतु है ॥
तैसेही सुंदर मिल्यो, आतमा अनातमा जु ।
भिन्न भिन्न करै सो तौ, सांख्यही कहतु है ॥

(१) न कहीं आशक्त और न विरक्त। (२) नंगी। (३) काठ

(२)

देह के संजोगही तैं, सीत लगै घाम लगै।
देह के संजोगही तैं, छुधा तृपा पैान कूँ॥
देह के संजोगही तैं, कटुक[1] मधुर स्वाद।
देह के संजोग कहै, खाटो खारो लैान कूँ॥
देह के संजोग कहै, मुख तैं अनेक बात।
देह के संजोगही, पकरि रहै मैान कूँ॥
सुंदर देह के संजोग, दुख मानै सुख मानै।
देह के संजोग गये, दुख सुख कैान कूँ॥

॥ निःसंशय ज्ञानी॥

भावै देह छूटि जाहु, कासी माहिं गंगा तट।
भावै देह छूटि जाहु, छेत्र मगहर मैं॥
भावै देह छूटि जाहु, विप्र के सदन[2] मध्य।
भावै देह छूटि जाहु, स्वपच[3] के घर मैं॥
भावै देह छूटै देस, आरज अनारज[4] मैं।
भावै देह छूटि जाहु, बन मैं नगर मैं॥
सुंदर ज्ञानी के कछु, संसय रहत नाहिं।
सुरग नरक सब, भागि गयो भरमैं॥

॥ प्रेम ज्ञानी॥

द्वंद बिना विचरै वसुधा पर, जा घट आतम ज्ञान अपारो॥
काम न क्रोध न लोभ न मोह, न राग न द्वेष न म्हारु न थारो[5]॥
जोग न भोग न त्याग न संग्रह, देह दसा न ढँक्यो न उघारो॥
सुंदर कोउक जानि सकै यह, गोकुल गाँव को पैंडोहि न्यारो॥

(१) कडुवा। (२) घर। (३) डोम। (४) पवित्र चाहे अपवित्र देश में।
(५) मेरा और तेरा।

॥ याचक ज्ञान ॥

(१)

देह सूँ ममत्व पुनि, गेह सूँ ममत्व।
सुत दारा[1] सूँ ममत्व, मन माया मैँ रहतु है
थिरता न लहै जैसे, कंदुक[2] चौगान[3] माहिँ।
कर्मनि के बस माखो, धका कूँ वहतु है॥
अंतःकरण सदा, जगत सूँ रचि रह्यो।
मुख सूँ बनाय बात, ब्रह्म की कहतु है॥
सुंदर अधिक मोहिँ, याहि तैँ अचंभो आहि
भूमि पर पखो कोऊ, चद कूँ गहतु है॥

(२)

ज्ञानी की सी बात कहै, मन तौ मलिन रहै।
वासना अनेक भरि, नेक न निवारी है॥
जैसे कोऊ आभूषण, अधिक बनाइ राखै।
कलई ऊपर करि, भीतर भँगारी है॥
ज्यूँही मन आवै त्यूँही, खेलत निसंक होइ।
ज्ञान सुनि सीखि लियो, ग्रंथ[4] न विचारी है॥
सुंदर कहत वा के, अटक न कोऊ आहि।
जोई वा सूँ मिलै जाइ, ताही कूँ बिगारी है॥

॥ आत्म अनुभव ॥

(१)

है दिल मैँ दिलदार सही, अँखियाँ उलटी करि ताहि चितैये
आब[5] मैँ खाक मैँ बाद[6] मैँ आतस[7], जान मैँ सुंदर जानि जनैये
नूर[8] मैँ नूर है तेज मैँ तेजहि, ज्योति मैँ ज्योति मिलै मिलि जैये
क्या कहिये कहते न बनै कछु, जो कहिये कहते हि लजैये

(१) स्त्री। (२) गेंद। (३) गेंद का खेल। (४) जड चेतन की गाँठ
(७) आग। (८) प्रकाश।

(२)

न्याय सास्त्र कहत है, प्रगट ईसुरवाद ।
मीमांसाहि सास्त्र माहिं, कर्मवाद कह्यो है ॥
वैसेषिक सास्त्र पुनि, कालवादी है प्रसिद्ध ।
पातंजलि सास्त्र माहिं, योगवाद लह्यो है ॥
साख्य सास्त्र माहिं पुनि, प्रकृति पुरुष वाद ।
वेदांत जु सास्त्र तिन, ब्रह्मवाद गह्यो है ॥
सुंदर कहत षटसास्त्र, माहिं भयो वाद ।
जा के अनुभव ज्ञान, वाद मैं न बह्यो है ॥

(३)

काहू कूँ पूछत रंक, धन कैसे पाइयत ।
कान देके सुनत, स्त्रवण सोई जानिये ॥
उन कह्यो धन हम, देख्यो है फलानी ठौर ।
मनन करत भयो, कब घर आनिये ॥
फेरि जब कह्यो धन, गड़्यो तेरे घर माहिं ।
खोदन लाग्यो है तब, निदिध्यास ठानिये ॥
धन निकस्यो है जब, दारिद गयो है तब ।
सुंदर साक्षातकार, नृपति बखानिये ॥

॥ साधु के लक्षण ॥

धूलि जैसो धन जा के, सूलि सो संसार सुख ।
भूलि जैसो भाग देखै, अंत कैसी यारी है ॥
पाप जैसी प्रभुताई, साप जैसो सनमान ।
बड़ाई बिच्छुन जैसी, नागिनी सी नारी है ॥
अग्नि जैसो इंद्र-लोक, विघ्न जैसो विधि-लोक ।
कीरति कलंक जैसी, सिद्धि सी ठगारी है ॥

वासना, न कोई वा की, ऐसी मति सदा जा की।
सुंदर कहत ताहि, वंदना[2] हमारी है ॥

॥ सतसग ॥

(१)

प्रीति प्रचंड लगै परब्रह्महि, और सबै कछु लागत फीको ॥
सुद्ध हृदय मन होइ सु निर्मल, द्वैत प्रभाव मिटै सब जी को ॥
गोष्टि रु ज्ञान अनंत चलै जहँ, सुंदर जैसे प्रवाह नदी को ॥
ताहितँजानिकरौनिसिबासर, साधुकोसगसदाअतिनीको॥

(२)

जो कोइ जाइ मिलै उन सूँ नर, होत पवित्र लगै हरि रंगा।
दोष कलंक सबै मिटि जाइसु, नीचहु जाइ जु होत उतंगा ॥
ज्यूँ जल औरमलीन महा अति,गंग मिल्यो हुइ जातहि गंगा॥
सुंदर सुद्ध करै ततकाल जु, है जग माँहि बड़ो सतसगा ॥

॥ दुष्ट ॥

(१)

अपने न दोष देखे, पर के औगुण पेखे,
दुष्ट को सुभाव, उठि निंदाही करतु है ।
जैसे कोई महल, सँवारि राख्यो नीके करि,
कीरी[3] तहाँ जाय, छिद्र ढूँढत फिरतु है ॥
भोरही तेँ साँझ लग, साँझही तेँ भोर लग,
सुंदर कहत दिन, ऐसेही भरतु है।
पाँव के तरे की, नहीं सूझै आग मूरख कूँ,
और सूँ कहत तेरे, सिर पै बरतु है ॥

(२)

आपनु काज सँवारन के हित, और कु काज बिगारत जाई।
आपनु कारज होउ न होउ, बुरो करि और कुँ डारत भाई ॥

(१) चाह। (२) प्रणाम। (३) चींटी।

आपहु खोवत औरहु खोवत, खोइ दुनौं घर देत वहाई।
सुंदर देखत ही वनि आवत, दुष्ट करै नहिं कौन बुराई॥

(३)

सर्प डसे सु नहीं कछु तालुक, बीछू लगै सु भले करि मानौ।
सिंहहु खाय तु नाहिं कछू डर, जो गजमारत तौ नहिं हानौ॥
आगि जरौ जल बूड़ि मरौ, गिरिजाइ गिरौ कछु भै मत आनौ॥
सुंदर और भले सबही यह, दुर्जन संग भलो जिनि जानौ॥

॥ तृष्णा ॥

(१)

जो दस बीस पचास भये सत[1],
होइ हजार तु लाख मँगैगी।
कोटि अरब्ब खरब्ब असंख्य,
पृथ्वीपति[2] होन की चाह जगैगी॥
स्वर्ग पताल को राज करौं,
तृष्ना अधिकी अति आग लगैगी।
सुंदर एक सँतोष विना सठ,
तेरी तो भूख कधी न भगैगी॥

(२)

किधौं पेट चूल्हो कीधौं, भाठि किधौं भाड आहि।
जोइ कछु झोंकिये, सु सब जरि जातु है॥
किधौं पेट थल किधौं, वापि[3] किधौं सागर है।
जेतो जल परै तेतो, सकल समातु है॥
किधौं पेट दैत किधौं, भूत प्रेत राच्छस है।
खाउँ खाउँ करै कछु, नेक न अघातु है॥

(१) सौ। (२) राजा। (३) बावड़ी।

सुंदर कहत प्रभु, कौन पाप लायो पेट ।
जबही जनम भयो, तबही को खातु है ॥

॥ कामिनी ॥

(१)

कामिनी को तनु मानु कहिये सघन बन,
वहाँ कोऊ जाय सो तौ भूलेही परतु है ।
कुंजर है गति कटि केहरी को भय जा मैं,
बेनी काली नागिनीऊ फन कूँ धरतु है ॥
कुच हैं पहार जहाँ काम चोर रहै तहाँ,
साधि के कटाच्छ बान प्रान कूँ हरतु है ।
सुंदर कहत एक और डर जा मैं अति,
राच्छसी बदन खाँउ खाँउ हो करतु है ॥

(२)

रसिक प्रिया रस मंजरी, और सिंगारहि जान ।
चतुराई करि बहुत बिधि, बिषय बनाई आन ॥
बिषय बनाई आन, लगत बिषयिन[१] कूँ प्यारी ।
जागे मदन[२] प्रचंड, सराहे नखसिख नारी ॥
ज्यूँ रोगी मिष्टान खाइ, रोगहि बिस्तारै ॥
सुंदर ये गति होइ, रसिक जो रस प्रिया धारै ॥

॥ करम धरम ॥

(१)

मेघ सहै सीत सहै, सीस पर घाम सहै ।
कठिन तपस्या करि, कंद मूल खात है ॥
जोग करै जज्ञ करै, तीरथ रु ब्रत करै ।
पुन्य नाना बिधि करै, मन मैं सुहात है ॥

---

(१) कामी । (२) कामदेव ।

और देवी देवता, उपासना अनेक करै।
आँधन की हौस कैसे, आक डौंडे[1] जात है।
सुंदर कहत एक, रबि के प्रकास बिनु।
जैंगना[2] की जोति, कहा रजनी[3] बिलात है॥

(२)

गेह तज्यो पुनि नेह तज्यो, पुनि खेह लगाइ के देह सँवारी॥
मेघ सहै सिर सीत सहै तन, धूप समय जु पंचागिनि बारी॥
भूख सहै रहि रूख तरे, पर सुंदरदास सहै दुख भारी॥
डासन[4] छाड़ि के कासन ऊपर, आसनमारिपै आस न मारी॥

॥ चितावनी॥

(१)

तू कछु और विचारत है नर,
तेरो बिचार धर्योहि रहैगो।
कोटि उपाय करै धन के हित,
भाग लिख्यो तितनोहि लहैगो॥
भोर कि साँझ घरी पल माँझ सु,
काल अचानक आइ गहैगो।
राम भज्यो न कियो कछु सुकिरत,
सुंदर यूँ पछताइ रहैगो॥

(२)

मातु पिता युवती[5] सुत बांधव,
लागत है सब कूं अति प्यारो।
लोक कुटुंब खरो हित राखत,
होइ नहीं हम तें कहुँ न्यारो॥

(१) मदार का फल या ढोंडी। (२) जुगनू। (३) रात। (४) बिछौना।
(५) स्त्री।

देह सनेह तहाँ लग जानहु,
बोलत है मुख सबद उचारो ।
सुंदर चेतन सक्ति गई जब,
बेगि कहै घरबार निकारो ॥

॥ उपदेश ॥

(१)

कार उहै अविकार[1] रहै नित, सार[2] उहै जु असारहि नाखै[3] ॥
प्रीति उहै जु प्रतीति धरै उर, नीति उहै जु अनीति न भाखै ॥
तंत[4] उहै लगि अंत न टूटत, सत उहै अपनो सत राखै ॥
नाद[5] उहै सुनि बाद[6] तजै सब, स्वाद उहै रस सुंदर चाखै ॥

(२)

सोवत सोवत सोइ गयो सठ, रोवत रोवत कै बेर रोयो ॥
गोवत[7] गोवत गोइ धरयो धन, खोवत खोवत तैं सब खोयो ॥
जोवत[8] जोवत बीति गये दिन, बोवत बोवत लै बिष बोयो ॥
सुंदर सुंदर राम भज्यो नहिं, ढोवत ढोवत बोझहिं ढोयो ॥

॥ मिथित ॥

(१)

जा सरीर माहिं तू अनेक सुख मानि रह्यो,
ताहि तू बिचार या मैं कौन बात भली है ।
मेद मज्जा मांस रग रग मैं रकत भरयो,
पेटहू पिटारी सी मैं ठौर ठौर मली है ॥
हाड़न सूँ भरयो मुख हाड़न के नैन नाक,
हाथ पाँउ सोऊ सब हाड़न की नली है ।
सुंदर कहत याहि देखि जनि भूलै कोई,
भीतर भँगार भरी ऊपर तौ कली है ॥

(१) विकार रहित । (२) सत्य । (३) फेंक दे । (४) तत्व—यहाँ ध्यान से अभिप्राय है । (५) शब्द । (६) झगड़ा । (७) छिपाना । (८) देखना ।

(२)

प्रीति सी न पाती कोऊ प्रेम से न फूल और।
चित्त सोँ न चदन सनेह सोँ न सेहरा॥
हृदय सोँ न आसन सहज सोँ न सिंहासन।
भाव सी न सेज और सून्य सोँ न गेहरा॥
सील सोँ न स्नान अरु ध्यान सोँ न धूप और।
ज्ञान सोँ न दीपक अज्ञान तम केहरा॥
मन सी न माला कोऊ सोहं सो न जाप और।
आतम सोँ देव नाहिं देह सोँ न देहरा॥

धरनी दासजी

[सक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये देखो सतबानी सग्रह भाग १ पृष्ठ ११२]

॥ चितावनी ॥

पानी से पैदा कियो सुनु रे मन बैारे,
ऐसा खसम खुदाय कहाई रे।
दाह[1] भयो दस मास को सुनु रे मन बैारे,
तर सिर ऊपर पाँई रे॥ १॥
आँच लगी जब आग की सुनु रे मन बैारे,
आजिज ह्वै अकुलाई रे।
कैाल[2] कियो मुख आपने सुनु रे मन बैारे,
नाहक अक लिखाई रे॥ २॥
अब की करिहैाँ बदगी सुनु रे मन बैारे,
जो पइहैाँ मुकलाई[3] रे।

---

(१) गर्भ की जलन। (२) प्रतिज्ञा। (३) मुकलना = भेजना, गर्भ में जब बालक बहुत तकलीफ पाता है तो मालिक से प्रार्थना करता है कि अब की कष्ट से छुडा दो तो बंदगी, भक्ति करूँगा।

जगजीवन साहिब

—— ०.:.०. ——

[संक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये देखो सतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ ११७]

॥ चितावनी ॥

(१)

अरे मन देहु तजि मतवारि ।
जे जे आये जगत महँ इहि, गये ते ते हारि ॥१॥
नाहिं सुमिर्‌यो नाम काँ, सब गयो काम बिगारि ।
आपु काँ जिन बडा जान्यो, काल खायो मारि ॥२॥
जानि आपुहिं छोट जग, रहि रहो डोरि सँभारि ।
बैठि कै चैागान निरखहु, रूप छबि अनुहारि[1] ॥३॥
रहो थिर सतसंग बासी, देहु सकल बिसारि ।
जगजिवन सतगुरु कृपा करि, लेहिं सबै सँवारि ॥४॥

(२)

अरे मन समुझि करु पहिचान ।
को तैं अहसि कहाँ तें आयसि, काहे भर्म भुलान ॥१॥
सुधि सँभारु विचार करिकै, बूझु पाछिल ज्ञान ।
नात यहि दुइ चारि दिन का, अचल नाहिं अस्थान ॥२॥
लोक गढ़ यहु कोट काया, कठिन माया बान ।
लाग सब के बचे कोउ नहिं, हर्‌यो सब को ध्यान ॥३॥
खबरदार बेखबर हो नहिं, ओट नाम निरबान ।
जगजिवन सतगुरु राखि लैहैं, चरन रहु लपटान ॥४॥

(१) सदृश ।

(३)

मैं तैं जग त्यागि मन, चलिये सिर नाई।
नाम जानि दीन हीन, करिये दीनताई ॥१॥
अहंकार गर्व तें, सब गये हैं बिलाई।
रावन के सीस काटि, राम की दुहाई ॥२॥
जिन जिन गुमान कीन्ह, मारि गर्दही मिलाई।
साधि साधि बाँधि प्रीति, ताहि पर सहाई ॥३॥
परसहु गुरु सीस डारि, दुनिया बिसराई।
जगजीवन आस एक, टेक रहिये लगाई ॥४॥

(४)

मन महँ नाहिं बूझत कोय।
नहीं बसि कछु अहै आपन, करै करता होय ॥१॥
कहत मैं तैं सूझि नाहीं, भर्म भूला सोय।
पड़े धारा मोह की बसि, डारि सर्बस खोय ॥२॥
करै निंदा साध की, परि पाप बूड़ै सोय।
अंत फजिहत होहिंगे, पछिताय रहिहैं रोय ॥३॥
कहौं समुझि बिचारि कै, गहि नाम दृढ धरु टोय।
जगजीवन ह्वै रहहु निर्भय, चरन चित्त समोय ॥४॥

(५)

कहाँ गयो रे ॥ टेक ॥
कहाँ गयो मुरली को बजइया, सब सुनि मोहि रह्यो रे।
एक समय जब मुरली बजायो, सब सुनि मोहि रह्यो रे।
जिन के भाग भये पूर्वज[1] के, ते वहि संग गह्यो रे ॥१॥
खबरि न कोई केहु की पाई, को धौं कहाँ गयो रे।
ऐसे करता हरता यहि जग, तेऊ थिर न रह्यो रे ॥२॥

(१) पूर्व जन्म।

रे नर वौरे तैं कितान है, केहिं गनती माँ है रे।
जगजीवनदास गुमान करहु नहिं, सत्त नाम गहि रहु रे ॥३॥

॥ विरह ॥

(१)

सखी री करौं मैं कैान उपाई।
मैं तो व्याकुल निसि दिन डोलौं, उनहिं दरद नहिं आई ॥१
काह जानि कै सुधि बिसराई, कछु गति जानि न जाई।
मैं तैा दासी कलपौं पिय बिनु, घर आँगन न सुहाई ॥२॥
तलफि तलफि जल बिना मीन ज्यौं, अस दुख मोहिं अधिकाई।
निर्गुन नाह१ बाँह गहि सेजिया, सूतहि हियरा जुड़ाई ॥३॥
बिन सँग सूते सुख नहिं कबहूँ, जैसे फूल कुम्हिलाई।
ह्वै जोगिनि मैं भस्म लगायौं, रहिउँ नयन टक लाई ॥४॥
पैयाँ परौं मैं निरति निरखि कै, महिं का देहु मिलाई।
सुरति सुमति करि मिलहिं एक ह्वै, गगन मँदिल चलि जाई ॥५
रहि यहि महल टहल महँ लागी, सत की सेज बिछाई।
हम तुम उनके सूति रहहिं सँग, मिटै सबै दुचिताई ॥६॥
जगजीवन सिव ब्रह्मा बिस्नू, मन नहिं रहि ठहराई।
रवि ससि करि कुरबान ताहि छबि, पीवो दरस अघाई ॥७॥

(२)

उनहीं सोँ कहियो मोरी जाय ॥ टेक ॥
ए सखि पैयाँ परि मैं बिनवौं, काहे हमैं डारिन बिसराय ॥१
मैं का करौं मोर बस नाहीं, दीन्हयो अहै मोहिं भटकाय ॥२
ए सखि साईं मोहिं मिलावहु, देखि दरस मोर नैन जुड़ाय ॥३
जगजीवन मन मगन होउँ मैं, रहौं चरन कमल लपटाय ४

(१) पति

(३)

अरी मोरे नैन भये बैरागी ॥ टेक ॥
भसम चढ़ाय मैं भइउँ जोगिनियाँ, सबै अभूषन त्यागी ।
तलफि तलफि मैं तन मन जारयौँ, उनहिं दरद नहिं लागी १
निसु बासर मोहि नींद हरी है, रहत एक टक लागी ।
प्रीति सोँ नैनन नीर बहतु है, पीपी पी बिनु जागी ॥२॥
सेज आय समुझाय बुझावहु, लेउँ दरस छबि माँगी ।
जगजीवन सखि तृप्त भये हैं, चरन कमल रस पागी ॥३

(४)

सखि बाँसुरी[१] बजाय कहाँ गयो प्यारो ॥ टेक ॥
घर की गैल बिसरि गइ मोहिं तें, अग न वस्तु सँभारो ।
चलत पाँव डगमगत धरनि पर, जैसे चलत मतवारो ॥१॥
घर आँगन मोहिं नीक न लागे, सब्द बान हिये मारो ।
लागि लगन मैं मगन वही सोँ, लोक लाज कुल कानि बिसारो॥२
सुरत दिखाय मोर मन लीन्हयो, मैं तो चहाँ होय नहिं न्यारो ।
जगजीवन छबि बिसरत नाहीं, तुम से कहौं सो इहै पुकारो ३

(५)

होली

कैानि बिधि खेलैाँ होरी, यहि बन माँ भुलानी ॥टेक॥
जोगिन है अँग भसम चढ़ायो, तनहिं खाक करि मानी ।
ढूँढ़त ढूँढ़त मैं थकित भई हौं, पिया पीर नहिं जानी ॥१॥
औगुन सब गुन एको नाहीं, माँगन ना मैं जानी ।
जगजीवन सखि सुखित होहु तुम, चरनन मैं लपटानी ॥२॥

---

(१) भँवरगुफा की धुनि ।

॥ प्रेम ॥

(१)

ऐसे साईं की मैं वलिहरियाँ री।
ए सखि संग रंग रस मातिउँ, देखि रहिउँ अनुहरियाँ री ॥१
गगन भवन माँ मगन भइउँ मैं, विनु दीपक उजियरियाँ री
झलकि चमकि तहँ रूप विराजै, मिटी सकल अँधियरियाँ री२
काह कहौं कहिवे की नाहीं, लागि जाहि मन मँहियाँ री।
जगजीवन वह जोती निरमल, मोती हीरा वरियाँ[1] री।३॥

(२)

साईं तुम सों लागो मन मोर ॥ टेक ॥
मैं तो भ्रमत फिरौं निसुवासर,
चितवौ तनिक कृपा करि कोर ॥१॥
नहि विसरावहु नहिं तुम विसरहु,
अव चित राखहु चरनन ठौर ॥२॥
गुन ऐगुन मन आनहु नाहीं,
मैं तो आदि अंत को तोर ॥३॥
जगजीवन विनती करि माँगै,
देहु भक्ति वर जानि कै थोर ॥४॥

(३)

गुरु वलिहारियाँ मैं जाउँ ॥ टेक ॥
डोरि लागी पोढ़ि, अव मैं जपहुँ तुम्हरा नाउँ।
नाहिं इत उत जात मनुवाँ, गगन वासा गाँउ[2] ॥१॥
महा निर्मल रूप छवि सत, निरखि नैन अन्हाउँ।
नाहिं दुख सुख भर्म व्यापै, तम्र नीचे आउँ[3] ॥२॥
मारि आसन वैठि थिर ह्वै, काहु नाहिं डेराउँ।
जगजीवन निरवान भे, सत सदा संगी आउँ ॥३॥

(१) वारी=न्योछावर। (२) गाँव। (३) हूँ।

(४)

जोगिया भँगिया खवाइल, बैारानी फिरौँ दिवानी ॥टेक॥
ऐसे जोगिया की बलि बलि जैहौं, जिन्ह मोहिँ दरस दिखाइल ॥१
नहिँ कर तेँ नहिँ मुखहिँ पियावै, नैनन सुरति मिलाइल ॥२
काह कहौँ कहि आवत नाहीं, जिन्ह के भाग तिन्ह पाइल ॥३॥
जगजीवनदास निरखि छवि देखै, जोगिया सुरति मन भाइल ॥४

॥ विनय ॥

(१)

अब की बार तारु मोरे प्यारे। बिनती करि कै कहौँ पुकारे ॥१॥
नहिँ बसि अहै केता कहि हारे। तुम्हरे अब सब बनहि सवारे ॥२॥
तुम्हरे हाथ अहै अब सोई। और दूसरो नाहीं कोई ॥३॥
जो तुम चहत करत सो होई। जल थल महँ रहि जोति समोई ॥४
काहु क देत हो मंत्र सिखाई। सो भजि अंतर भक्ति दृढाई ॥५॥
कहौँ तो कछू कहा नहिँ जाई। तुम जानत तुम देत जनाई ॥६
जगत भगत केते तुम तारा। मैँ अजान केतान विचारा ॥७॥
चरन सीस मैँ नाहीं टारौँ। निर्मल सुरति निर्बान निहारौँ ॥८॥
जगजीवन काँ अब बिस्वास। राखहु सतगुरु अपने पास ॥९॥

(२)

प्रभु गति जानि नाहीं जाइ।
अहै केतिक बुद्धि केहिँ महँ, कहै को गति गाइ ॥१॥
सेस सम्भू थके ब्रह्मा, बिस्नु तारी लाइ।
है अपार अगाध गति प्रभु, केहू नाहीं पाइ ॥२॥
भान गन ससि तीनि चैाथो, लियो छिनहिँ बनाइ।
जोति एकै कियो बिस्तर, जहाँ तहाँ समाइ ॥३॥
सीस दैकै कहौँ चरनन, कबहुँ नहिँ बिसराइ।
जगजिवन के सत्य गुरु तुम, चरन की सरनाइ ॥४॥

(३)

अब मैं कवन गनती आउँ ।
दियो जबहिं लखाइ मोहिं कहँ, तबहिं सुमिरौ नाउँ ॥१॥
समुझि ऐसे परत मोहिं कहँ, बसे सरबस ठाउँ ।
अहो न्यारे कहूँ[1] नाहीं, रूप की बलि जाउँ ॥२॥
नाम का बल दियो जेहि कहँ, राखि निर्भय गाउँ ।
काल को डर नाहिं उहवाँ, भला पायो दाउँ ॥३॥
चरन सीसहि राखि निरखौं, चाखि दरस अघाउँ ।
जगजिवन गुरु करहु दाया, दास तुम्हरा आउँ ॥४॥

(४)

साईं को केतानि गुन गावै ।
सूझि बूझि तस आवै तेहि काँ, जेहि काँ जैान लखावै ॥१॥
आपुहि भजत है आपु भजावत, आपु अलेख लखावै ।
जेहिं कहँ अपनी सरनहिं राखै, सोई भगत कहावै ॥२॥
टारत नहीं चरन तेँ कबहूँ, नहिं कबहूँ बिसरावै ।
सूरति खैंचि ऐंचि जब राखत, जोतिहिं जोति मिलावै॥३॥
सतगुर कियो गुरुमुखी तेहिकाँ, दूसर नाहिं कहावै ।
जगजीवन ते भे सँग बासी, अंत न कोऊ पावै ॥४॥

(५)

प्रभुजी का बसि अहै हमारी ।
जब चाहत तब भजन करावत, चाहत देत बिसा ॥१॥
चाहत पल छिन छूटत नाहीँ, बहुत होत हितकारी ।
चाहत डारि[2] सूखि पल डारत, डारि देत संहारी ॥२॥
कहँ लहि बिनय सुनावौं तुम तेँ, मैं तौ अहौँ अनारी ।
जगजिवन दास पास रहै चरनन, कबहूँ करहु न न्यारी ॥३॥

---

(१) कहीं । (२) शाखा ।

(६)

तुम सों यह मन लागा मेरा ॥ टेक ॥

करौं अरदास[1] इतनी सुनि लीजै, तको तनक मोहिं कोरा ॥१॥
कहँ लगिं ऐगुन कहौं आपना, कामी कुटिल लोभी औ चोरा २
तब के अब के बहु गुनाह भे, नाहिं अंत कछु छोरा ॥३॥
साईं अब गुनाह सब मेटहु, चितै आपनी ओरा ॥४॥
जगजीवन के इतनी बिनती, टूटै प्रीति न डोरा ॥५॥

(७)

बालक बुद्धि हीन मति मोरी। भरमत फिरौं नाहिं दृढ़ डोरी १
सूरति राखो चरनन मोरी। लागि रहै कबहूँ नहिं तोरी[2] ॥२॥
निरखत रहौं जाउँ बलिहारी। दास जानि कै नाहिं बिसारी॥३
तुमहिं सिखाय पढ़ायो ज्ञाना। तब मैं धर्यौं चरन कै ध्याना॥४
साईं समरथ तुम हो मोरे। बिनती करौं ठाढ कर जोरे ॥५॥
अब दयाल ह्वै दाया कीजै। अपने जन कहँ दरसन दीजै ॥६॥
नाम तुम्हार मोहिं है प्यारा। सोई भजे घट भा उजियारा ॥७
जगजीवन चरनन दियो माथ। साहिब समरथ करहु सनाथ॥८

(८)

तेरा नाम सुमिरि ना जाय।

नहीं बस कछु मोर आहै, करहुँ कैान उपाय ॥१॥
जबहिं चाहत हितू करि कै, लेत चरनन लाय।
बिसरि जब मन जात आहै, देत सब बिसराय ॥२॥
अजब ख्याल अपार लीला, अंत काहु न पाय।
जीव जंत पतंग जग महँ, काहु ना बिलगाय ॥३॥
करौं बिनती जोरि दोउ कर, कहत अहौं सुनाय।
जगजिवन गुरु चरन सरन, ह्वै तुम्हार कहाय ॥४॥

(१) अर्जदाश्त, प्रार्थना। (२) तोड़ी।

(६)

साईं मोहिं भरोस तुम्हारा।
मोरे बस नहिं अहै एकौ, तुमहिं करो निस्तारा ॥१॥
मैं अज्ञान बुद्धि है नाहीं, का करि सकौं बिचारा।
जब तुम लेत पढ़ाय सिखावत, तब मैं प्रगट पुकारा ॥२॥
बहुतन भवसागर महँ बूड़त, तेहिं उबारि कै तारा।
बहुतन काँ जब कष्ट भयो है, तिन के कष्ट निवारा ॥३॥
अब तो चरन कि सरनहिं आयों, गह्यौं मैं पच्छ तुम्हारा।
जगजीवन के साईं समरथ, मोहिं बल अहै तुम्हारा ॥४॥

(१०)

साहिब अजब कुदरत तोर।
देखि गति कहि जात नाहीं, केतिक मति है मोर ॥१॥
नचत सब कोउ काछि कछनी, भ्रमत फिर बिन डोर।
होत औगुन आप तें, सब देत साहिब खोर[1] ॥२॥
कौल करि जग पठै दीन्ह्यो, तौन डार्यो तोर[2]।
करत कपट संत तेतीं, कहैं मोरी मोर ॥३॥
ऐसी जग की रीति आहै, कहा कहिये टेर।
जगजिवनदास चरन गुरू के, सुरत करिये पोढ़ ॥४॥

(११)

चरनन तर दियो माथ, करिये अब मोहिं सनाथ।
दास करिकै जानो ॥१॥
बूड़ा सब जगत सार, सूझै नहिं वार पार।
देखि नैनन बूझिय हित आनो ॥२॥
सुमति मोहिं देउ सिखाय, आनि मैं न रहि लुभाय।
बुद्धिहीन भजनहीन, सुद्धि नाहिं आनो ॥ ३ ॥

(१) दोष। (२) तोड़।

सहस फन तें सेस गावै, सकर तेहिँ ध्यान लावै ।
ब्रह्मा बेद प्रगट कहै बानी ॥४॥
कहौं का कहि जात नाहिँ, जोती वा सर्ब माहिँ ।
जगजीवन दरस चहै, दीजै बरदानी ॥५॥

(१२)

आरत अरज लेहु सुनि मोरी ।
चरनन लागि रहै दृढ़ डोरी ॥१॥
कबहुँ निकट तें टारहु नाहीं ।
राखहु मोहिँ चरन की छाहीं ॥२॥
दीजै केतिक बास यहँ कीजै ।
अघ कर्म मेटि सरन करि लीजै ॥३॥
दासन दास है कहौं पुकारी ।
गुन मोहिँ नहिँ तुम लेहु सँवारी ॥४॥
जगजीवन काँ आस तुम्हारी ।
तुम्हरी छवि मूरति पर वारी ॥५॥

(१३)

केतिक बूझि, का आरति करऊँ । जैसे रखिहहिँ तैसे रहऊँ ॥१
नाहीं कछु बसि आहै मोरी । हाथ तुम्हारे आहै डोरी ॥२॥
जस चाहौ तस नाच नचावहु । ज्ञान बास करि ध्यान लगावहु॥
तुमहिँ जपत तुमहीं बिसरावत। तुमहिँ चिताइ सरन लै आवत॥४
दूसर कवन एक है सोई । जेहिँ काँ चाही भक्त सो होई ॥५॥
जगजीवन करि बिनय सुनावै। साहिब समरथ नहिँ बिसरावै॥६॥

(१४)
होली

यहि जग होरी, अरी मोहि तें खेलि न जाई ।
साईं मोहिँ बिसराय दियो है, तब तें पर्यौ भुलाई ॥१॥

सुख परि सुद्धि गई हरि मोरी, चित्त चेत नहिं आई ।
अनहित हित करि जानि त्रिषै महँ, रह्यो ताहि लपटाई ॥२॥
यहि साँचे महँ पाँचौ नाचैं, अपनि अपनि प्रभुताई ।
मैं का करौं मोर बस नाहीं, राखत हौं अरुझाई ॥३॥
गगन मँदिल चलि थिर है रहिये, तकि छवि छकि निरथाई ।
जगजीवन सखि साईं समरथ, लेहैं सबै बनाई ॥४॥

॥ साध ॥

(१)

जब मन मगन भा मस्तान ।
भयो सीतल महा कोमल, नाहिं भावै आन ॥१॥
डोरि लागी पोढ़ि गुरु तैं, जगत तैं बिलगान ।
अहै मता अगाध तिन का, करै को पहिचान ॥२॥
अहैं ऐसे जगत माँ कोइ, कहत आहैं ज्ञान ।
ऐसे निरमल है रहे हैं, जैसे निरमल भान ॥३॥
बड़ा बल है ताहि केरे, थमा है असमान ।
जगजिवन गुरु चरन परि कै, निर्गुन धरि ध्यान ॥४॥

(२)

गऊ निकसि बन जाहीं । बाछा उन घर ही माहीं ॥१॥
तृन चरहिं चित्त सुत पासा । यहि जुक्ति साध जग बासा ॥२॥
साध तैं बड़ा न कोई । कहि राम सुनावत सोई ॥३॥
राम कही हम साधा । रस एक मता औराधा ॥४॥
हम साध साध हम माहीं । कोउ दूसर जानै नाहीं ॥५॥
जिन दूसर करि जाना । तेहिं होइहि नरक निदाना ॥६॥
जगजिवन चरन चित लावै । सो कहि के राम समुझावै ॥७॥

॥ भेद ॥

(१)

जा के लगी अनहद तान हो, निरवान निरगुन नाम की ॥१॥
जिकर करके सिखर हेरे, फिकर ररकार की ॥२॥
जा के लगी अजपा गगन झलकै, जोति देख निसान की ॥३
मंद्ध मुरली मधुर बाजै, बाँए किंगरी सारंगी ॥४॥
दहिने जो घटा सख बाजै, गैब धुन झनकार की ॥५॥
अकह की यह कथा न्यारी, सीखा नाहीं आन है ॥६॥
जगजिवन प्रानहि सोधि के, मिलि रहे सतनाम है ॥७॥

(२)

गगरिया मोरी चित सोँ उतरि न जाय ॥ टेक ॥
इक कर करवा[1] एक कर उबहनि[2], बतियाँ कहौं अरथाय ॥१
सास ननद घर दारुन आहै, ता सौं जियरा डेराय ॥२॥
जो चित छूटै गागर फूटै, घर मोरि सासु रिसाय ॥३॥
जगजीवन अस भक्ती मारग, कहत अहौं गोहराय ॥४॥

॥ ज्ञान ॥

आनद के सिंध मैं आन बसे,
तिन को न रह्यो तन को तपनो ।
जब आपु मैं आपु समाय गये,
तब आपु मैं आपु लह्यो अपनो ॥
जब आपु मैं आपु लह्यो अपनो,
तब अपनो ही जाप रह्यो जपनो ।
जब ज्ञान को भान प्रकास भयो,
जगजीवन होय रह्यो सपनो ॥

(१) डाल । (२) रस्सी ।

॥ कर्म भर्म ॥

कोउ बिन भजन तरिहैं नाहिं ।
कहँ जाय अचार केतौ, प्रात नित्त अन्हाहिं ॥१॥
दान पुन्य करि तपस्या, बर्त बहुत रहाहिं ।
त्यागि बस्ती बैठि बन महँ, कंदमूरहि खाहिं ॥२॥
पाठ करि पढ़ि बहुत बिद्या, रैन दिनहिं बकाहिं ।
गाय बहुत बजाय बाजा, मनहिं समुझत नाहिं ॥३॥
करहिं स्वासा बंद कष्टित, भाँड़ की गति आहिं ।
साधि पवन चढ़ाय गगनहिं, कमल उलटै नाहिं ॥४॥
साध नहिं केहु कीन्ह ऐसे, सीखि बहुत कहाहिं ।
प्रीति रस मन नाहिं उपजत, परे ते भव माहिं ॥५॥
जस सँजोग बिजोग तैसे, तत अच्छर दुइ आहिं ।
रटत अंतर भेंट गुरु तैं, मंत्र अजपा माहिं ॥६॥
कहौं प्रगट पुकारि जेहि के, प्रीति अंतर आहिं ।
जगजिवन दास रीति अस, तब चरन महँ मिलि जाहिं ॥७॥

॥ उपदेश ॥

(१)

अरे मन चरन तैं रहु लागि ।
जोरि दुइ कर सीस दैकै, भक्ति बर ले माँगि ॥१॥
और आसा झूँठि आहै, गरम जैसे आगि ।
परहिंगे सो जरहिंगे पै, देहु सर्ब तियागि ॥२॥
समै फिरि एहु पाइहै नहिं, सोउ नहिं गहि जागि ।
चेतु पाछिल सुद्धि करिकै, दरस रस रहु पागि ॥३॥
कठिन माया है अपरबल, संग सब्र के लागि ।
सूल तैं कोइ बचे बिरले, गगन बैठे भागि ॥४॥

भर्म नाहिँ तहँ भयो निर्भय, सत्त रत बैरागि।
जगजीवन निरबान भे, गुरु दया जागे भागि ॥५॥

(२)

मन तन खाक करि कै जानु।
नीच तेँ है नीच, तेहि तेँ नीच आपुहि मानु ॥१॥
त्यागु मैँ तैँ दीन है रहु, तजहु गर्ब गुमान।
हेतु हौँ उपदेस याहै, निरखु सो निरबान ॥२॥
कर्म धागा लाय बाँधा, हिंदु मूसलमान।
खैँचि लीन्ह्यो तोरि धागा, बिरल कोइ बिलगान ॥३॥
खाक है सब खाक होइहि, समुझि आपन ज्ञान।
सबद सत कहि प्रगट भाखौँ, रहहि नाम निदान ॥४॥
काल को डर नाहिं तिन्ह कोँ, चौथ[१] रहि चैागान।
जगजीवन दास सतगुरु के, चरन रहि लपटान ॥५॥

(३)

मन मैँ जेहिँ लागी जस भाई।
सो जाने तैसे अपने मन, का सौँ कहै गोहराई ॥१॥
साँची प्रीति की रीति है ऐसी, राखत गुप्त छिपाई।
झूँठे कहुँ सिखि लेत अहहिँ पढि, जहँ तहँ झगरा लाई ॥२
लागे रहत सदा रस पागे, तजे अहहिँ दुचिताई।
ते मस्ताने तिनहीँ जाने, तिनहिँ को देइ जनाई ॥३॥
राखत सीस चरन तँ लागा, देखत सीस उठाई।
जगजीवन सतगुरु की मूरति, सूरति रहे मिलाई ॥४॥

(४)

जो कोइ घरहिँ बैठा रहै।
पाँच सगत करि पचीसौ, सबद अनहद लहै ॥१॥

(१) चौथे लोक मैँ।

दीन सीतल लीन मारग, सहज वाहनि बहै ।
कुमति कर्म कठोर काठहिं, नाम पावक दहै ॥२॥
मारि मन तैं लाय डोरी, पवन थाम्हे रहै ।
चित्त कर तहँ सुमति साधू, सुरति माला गहै ॥३॥
राति दिन छिन नाहिँ छूटै, भक्त सोई अहै ।
जगजीवन कोइ संत बिरला, सब्द की गति कहै ॥४॥

(५)

सत्त नाम बिना कहौ, कैसे निस्तरिहौ ॥ टेक ॥
कठिन अहै माया जार, जा को नहिं वार पार,
कहौ काह करिहौ ॥ १ ॥
हो सचेत चौंकि जागु, ताहि त्यागि भजन लागु,
अंत भरम परिहौ ॥ २ ॥
डारहि जमदूत फाँसि, आइहि नहिं रोइ हाँसि,
कौन धीर धरिहौ ॥ ३ ॥
लागहि नहि कोइ गोहारि, लेइहि नहिँ कोइ उबारि,
मनहिँ रोइ रहिहौ ॥ ४ ॥
भगनी सुत नारि भाइ, मातु पितु सखा सहाइ,
तिनहिँ कहा कहिहौ ॥ ५ ॥
काहुक नहिँ कोऊ जगत, मनहिँ अपने जानु गत,
जीवत मरि जाहु दीन अंतर माँ रहिहौ ॥६॥
सिद्ध साध जोगि जती, जाइहि मरि सब कोई,
रसना सतनाम गहि रहिहौ ॥ ७ ॥
जगजीवनदास रहै, बैठे सतगुरु के पास,
चरन सीस धरि रहिहौ ॥ ८ ॥

यारी साहिब

—:०*०:—

[संक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १२०]

॥ गुरुदेव ॥

॥ झूलना ॥

गुरु के चरन की रज लै के, दोउ नैन के बिच अंजन दीया।
तिमिर मेटि उँजियार हुआ, निरकार पिया को देखिलिया॥
कोटि सुरज तहँ छिपे घने, तीनि लोक धनी धन पाइ पिया।
सतगुरु ने जो करी किरपा, मरि के यारी जुग जुग जीया॥

॥ अनहद शब्द ॥

(१)

झिलमिल झिलमिल बरखै नूरा,
नूर जहूर सदा भरपूरा॥ १॥
रुनझुन रुनझुन अनहद बाजै,
भँवर गुँजार गगन चढ़ि गाजै॥ २॥
रिमझिम रिमझिम बरखै मोती,
भयो प्रकास निरंतर जोती॥ ३॥
निरमल निरमल निरमल नामा,
कह यारी तहँ लियो बिस्रामा॥ ४॥

(२)

सुन के मुकाम मैं बेचून[१] की निसानी है॥ १॥
जिकिर[२] रूह सोई अनहद बानी है॥ २॥
अगम को गम्म नाहीं झलक पिसानी[३] है॥ ३॥
कहै यारी आपा चीन्हे सोई ब्रह्मज्ञानी है॥ ४॥

---

(१) मालिक। (२) सुमिरन। (३) पेशानी, माथा।

॥ प्रेम ॥

(१)

विरहिनी मंदिर दियना बार ॥ टेक ॥
बिन बाती बिन तेल जुगति सोँ, बिन दीपक उँजियार ॥१॥
प्रान पिया मेरे गृह आयो, रचि पचि सेज सँवार ॥२॥
सुखमन सेज परम तत रहिया, पिय निर्गुन निरकार ॥३॥
गावहु री मिलि आनँद मंगल, यारी मिलि के यार ॥४॥

(२)

होली

हैाँ तो खेलैाँ पिया सँग होरी ॥ १ ॥
दरस परस पतिवरता पिय की, छवि निरखत भइ बैारी ॥२॥
सोरह कला सँपूरन देखैाँ, रवि ससि भे इक ठैारी ॥३॥
जब तेँ दृष्टि परो अविनासी, लागो रूप ठगैारी ॥४॥
रसना रटत रहत निस बासर, नैन लगो यहि ठैारी ॥५॥
कह यारी भक्ती करु हरि की, कोई कहै सो कहैा री ॥६॥

॥ भेद ॥

(१)

झूलना

दोउ मूँदि के नैन अंदर देखा, नहिं चाँद सुरज दिन राति है रे।
रोसन समा बिनु तेल बाती, उस जोति सोँ सबै सिफाति[१] है रे॥
गोता मारि देखो आदम, कोउ अवर नाहिं सँग साथि है रे।
यारी कहै तहकीक किया, तू मलकुलमैात[२] की जाति है रे॥

(२)

झूलना

जमीं बरखै असमान भीँजै, बिन बातिहिं तेल जलाइये जी।
जहाँ नूर तजल्ली[३] बीच है रे, बेरंगी रंग दिखाइये जी॥

(१) गुन। (२) जमराज। (३) प्रकाश।

फूल बिना जदि फल होवै, तदि हीरा[1] की लज्जत पाइये जी।
यारी कहै यहि कौन बूझै, यह का सेँ बात जनाइये जी ॥

॥ उपदेश ॥

(१)

कवित्त

गहने के गढ़े तेँ कहीं सोनो भी जातु है।
सोनो बीच गहनो और गहनो बीच सोन है ॥
भीतर भी सोनो और बाहर भी सोन दीसै।
सोनो तो अचल अंत गहनो के मीच[2] है ॥
सोन को तो जानि लीजै गहनो बरबाद कीजै।
यारी एक सोनो ता मैँ ऊँच कवन नीच है ॥

(२)

झूलना

बिन बंदगी इस आलम मैँ, खाना तुझे हराम है रे।
बंदा करै सोइ बंदगी, खिदमत मैँ आठो जाम है रे ॥
यारी मैाला बिसारि के, तू क्या लागा बेकाम है रे।
कुछ जीते बंदगी करले, आखिर को गोर[3] मुकाम है रे ॥

॥ मिश्रित ॥

कवित्त

आँधरे को हाथी हरि, हाथ जा को जैसो आयो।
बूझो जिन जैसो, तिन तैसोई बतायो है ॥१॥
टकाटोरी दिन रैन, हिये हू के फूटे नैन।
आँधरे को आरसी मैं, कहा दरसायो है ॥२॥
मूल की खबरि नाहिँ, जा सोँ यह भयो मुलुक।
वा को बिसारि भोँदू, डारै[4] अरुझायो है ॥३॥
आपनो सरूप रूप, आपु माहिँ देखै नाहिँ।
कहै यारी आँधरे ने, हाथी कैसो पायो है ॥४॥

---

(१) तत्व, गूदा। (२) मृत्यु। (३) कबर। (४) शाखा मेँ।

दरिया साहिब (बिहार वाले)

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १२१]

॥ अनहद ॥

होरी सद संत समाज सतन गाइया ॥ टेक ॥
बाजा उमँग झाल झनकारा, अनहद धुन घहराइया ।
झरि झरि परत सुरंग रंग तहँ, कौतुक नभ मैं छाइया ॥१॥
राग रुबाब अघोर तान तहँ, झिनझिन जंतर लाइया ।
छवो राग छत्तीस रागिनी, गंधर्व सुर सब गाइया ॥२॥
पाँच पचीस भवन मैं नाचहिं, भर्म अबीर उड़ाइया ।
कह दरिया चित चन्दन चर्चित, सुन्दर सुभग सुहाइया ॥३॥

॥ बिरह ॥

अमर पति प्रीतम काहे न आवो ।
तुम सत बर्ग हो सदा सुहावन, किमि नहिं उर गहि लावौं ॥१
बरषा बिविधि प्रकार पवन अति, गरजि घुमरि घहरावो ।
बुन्द अखंडित मंडित महि पर, छटा चमकि चहुँ जावो ॥२
झींगुर झनकि झनकि झनकारहि, बान बिरह उर लावो ।
दादुर मोर सोर सघन बन, पिय बिनु कछु न सुहावो ॥३॥
सरिता उमडि घुमडि जल छावो, लघु दिर्घ सब बाढ़ियावो ।
थाके पंथ पथिक नहिं आवत, नैनन मैं झरि लावौं ॥४॥
केहि पूछौं पछितावत दिल मैं, जो पर होइ उड़ि धावौं ।
जो पिय मिलैं तो मिलौं प्रेम भरि, अमि भाजन भरि लावौं[१] ॥५॥
है बिस्वास आस दिल मेरे, फिरि दृग दर्सन पावौं ।
कह दरिया धन भाग सुहागिनि, चरन कँवल लपटावो ॥६॥

(१) अमृत से बरतन को भर लूँ ।

॥ प्रेम ॥

तुम मेरो साईं मैं तेरो दास, चरन कँवल चित मेरो बास ॥१॥
पल पल सुमिरौं नाम सुवास, जीवन जग मैं देखो दास ॥२॥
जल मैं कुमुदिनि चन्द अकास, छाइ रहा छबि पुहुप बिलास ॥३
उनमुनि गगन भया परगास, कह दरिया मेटा जम त्रास ॥४

॥ विनय ॥

(१)

अब के बार बकस मोरे साहिब ।
तुम लायक सब जोग हे ॥ १ ॥
गुनह[१] बकसिहौ सब भ्रम नसिहौ ।
रखिहौ आपन पास हे ॥ २ ॥
अछै बिरिछि तरि लै बैठैहो ।
तहवाँ धूप न छाँह हे ॥ ३ ॥
चाँद न सुरज दिवस नहिं तहवाँ ।
नहिं निसु होत बिहान हे ॥ ४ ॥
अमृत फल मुख चाखन दैहौ ।
सेज सुगन्धि सुहाय हे ॥ ५ ॥
जुग जुग अचल अमर पद दैहौ ।
इतनी अरज हमार हे ॥ ६ ॥
भौसागर दुख दारुन मिटि है ।
छुटि जैहै कुल परिवार हे ॥ ७ ॥
कह दरिया यह मंगल मूला ।
अनूप फुलै जहाँ फूल हे ॥ ८ ॥

(२)

मैं जानहुँ तुम दीन-दयाल ।
तुम सुमिरे नहिं तपत काल ॥ १ ॥

(१) पाप, दोष ।

ज्यौं जननी प्रतिपाले सुत[1] ।
गर्भ बास जिन दियो अकूत ॥ २ ॥
जठर अगिनि तें लियो है काढ़ि ।
ऐसी वा की ठवर गाढ़ि ॥ ३ ॥
गाढ़े जो जन सुमिरन कीन्ह ।
परघट जग में तेहि गति दीन्ह ॥ ४ ॥
गरबी मारेउ गैब बान ।
सत को राखेउ जीव जान ॥ ५ ॥
जल में कुमुदिनि इन्दु[2] अकास ।
प्रेम सदा गुरु चरन पास ॥ ६ ॥
जैसे पपिहा जल से नेह ।
बुन्द एक बिस्वास तेह ॥ ७ ॥
स्वर्ग पताल मृत मंडल तीनि ।
तुम ऐसो साहिब मैं अधीन ॥ ८ ॥
जानि आयो तुम चरन पास ।
निज मुख बोलेउ कहेउ दास ॥ ९ ॥
सत पुरुष वचन नाहिं होहिं आन ।
बलु पुरब से पच्छिम उगहि भान ॥ १० ॥
कह दरिया तुम हमहिं एक ।
ज्यौं हारिल की लकड़ी टेक[3] ॥ ११ ॥

॥ भेद ॥

मानु सबद जो करु बिवेक ।
अगम पुरुष जहँ रूप न रेख ॥ १ ॥

(१) पुत्र । (२) चंद्रमा । (३) हारिल चिड़िया चंगुल में लकड़ी पकड़े बिना ज़मीन पर नहीं उतरती ।

अठदल कँवल सुरति लौ लाय ।
अजपा जपि के मन समुझाय ॥ २ ॥
भँवरगुफा मेँ उलटि जाय ।
जगमग जोति रहे छवि छाय ॥ ३ ॥
बंक नाल गहि खैँचे सूत ।
चमके बिजुली मोती बहुत ॥ ४ ॥
सेत घटा चहुँ ओर घनघोर ।
अजरा जहवाँ होय अँजोर ॥ ५ ॥
अमिय कँवल निज करो बिचार ।
चुवत बुन्द जहँ अमृत धार ॥ ६ ॥
छव चक्र खोजि करो निवास ।
मूल चक्र जहँ जिव को बास ॥ ७ ॥
काया खोजि जोगी भुलान ।
काया बाहर पद निरबान ॥ ८ ॥
सतगुर सबद जो करै खोज ।
कहैँ दरिया तब पूरन जोग ॥ ९ ॥

॥ उपदेश ॥

(१)

पेड़ को पकरु तब डारि पालो मिलै ।
डारि गहि पकर नहिँ पेड यारा[१] ॥
देख दिव दृष्टि असमान मेँ चन्द्र है ।
चन्द्र की जोति अनगिनित तारा ॥ १ ॥
आदि औ अन्त सब मध्य है मूल मेँ ।
मूल मेँ फूल धौँ केति डारा ॥

(१) हे यार पेड पकडने से डाल पत्ती भी मिल जायगी, पर डाल के पकडने से पेड नहीं हाथ आवैगा ।

नाम निर्गुन निर्लेप निर्मल वरै।
एक से अनँत सब जगत सारा ॥ २ ॥
पढ़ि वेद कितेब बिस्तार वक्ता कथै।
हारि वेचून वह नूर न्यारा ॥
निर्पँच निर्वान निःकर्म निःभर्म वह।
एक सर्वज्ञ सत नाम प्यारा ॥ ३ ॥
तजु मान मनी करु काम के काबु[1] यह।
खोजु सतगुरू भरपूर सूरा ॥
असमान कै बुन्द गरकाब[2] हूआ।
दरियाव की लहरि कहि बहुरि मूरा[3] ॥ ४ ॥

(२)

भीतर मैलि चहल[4] के लागी, ऊपर तन का धोवै है ॥१॥
अविगति मुरति महल के भीतर, वा का पंथ न जोवै है ॥२॥
जुगुति बिना कोइ भेद न पावै, साधु संगति का गोवै है ॥३॥
कह दरिया कुटने वे गोदी[5], सीस पटकि का रोवै है ॥४॥

॥ मिश्रित ॥

सत सुकृत दूनौं खंभा हो, सुखमनि लागलि डोरि।
अरध उरध दूनौं मचवा[6] हो, ईंगला पिंगला झकझोरि ॥१॥
कौन सखी सुख बिलसै हो, कौन सखी दुख साथ।
कौन सखिया सुहागिनि हो, कौन कमल गहि हाथ ॥२॥
सत सनेह सुख बिलसै हो, कपट करम दुख साथ।
पिया-मुख सखिया सुहागिनि हो, राधा कमल गहि हाथ ॥३॥

---

(१) बस में। (२) पानी में डूब गया। (३) मुड़ा। (४) कीचड़। (५) भौंदू, मूढ़। (६) मचिया या खटोला जिस पर बैठ कर हिँडोला झूलते हैं।

कौन झुलावै कौन झूलहिं हो, कौन बैठलि खाट।
कौन पुरुष नहिं झूलहि हो, कौन रोकै बाट ॥४॥
मन रे झुलावै जिव झूलहिं हो, सक्ति बैठलि खाट।
सत्त पुरुष नहिं झूलहिं हो, कुमति रोकै बाट ॥५॥
सुर नर मुनि सब झूलहिं हो, झूलहिं तीनि देव।
गनपति फनपनि[1] झूलहिं हो, जोगि जती सुकदेव ॥६॥
जीव जंतु सब झूलहिं हो, झूलहिं आदि गनेस।
कल्प कोटि लै झूलहिं हो, कोइ कहै न संदेस ॥७॥
सत्त सब्द जिन पावल हो, भयो निर्मल दास।
कहै दरिया दर देखिय हो, जाय पुरुष के पास ॥८॥

(दरिया साहिब मारवाड़ वाले)

[सचित्र जीवन चरित्र के लिये देखो सतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १०६]

॥ नाम ॥

नाम बिन भाव करम नहिं छूटै ॥ टेक ॥
साध संग औ राम भजन बिन, काल निरंतर लूटै ॥१॥
मल सेती जो मल को धोवै, सो मल कैसे छूटै ॥२॥
प्रेम का साबुन नाम का पानी, दुइ मिलि ताँता टूटै ॥३॥
भेद अभेद भरम का भाँडा, चौड़े परि परि फूटै ॥४॥
गुरुमुख सबद गहै उर अंतर, सकल भरम से छूटै ॥५॥
राम का ध्यान धरहु रे प्रानी, अमृत का मेंह बूटै[2] ॥६॥
जन दरियाव अरप दे आपा, जरा मरन तब टूटै ॥७॥

(१) शेष नाग। (२) बरसै।

॥ प्रेम ॥

(१)

बाबल[१] कैसे बिसरा जाई ।
यदि मैं पति सँग रल खेलूँगी, आपा धरम समाई ॥टेक॥
सतगुर मेरे किरपा कीन्ही, उत्तम बर परनाई[२] ।
अब मेरे साईं को सरम पड़ैगी, लेगा चरन लगाई ॥१॥
थे[३] जानराय मैं बाली भोली, थे निर्मल मैं मैली ।
वे बतरायँ[४] मैं बोल न जानूँ, भेद न सकूँ सहेली ॥२॥
थे ब्रह्म भाव मैं आतम कन्या, समझ न जानूँ बानी ।
दरिया कहै पति पूरा पाया, यह निश्चय करि जानी ॥३॥

(२)

कहा कहूँ मेरे पिउ की बात ।
जो रे कहूँ सोइ अंग सुहात ॥ टेक ॥
जब मैं रही थी कन्या क्वारी ।
तब मेरे करम हता[५] सिर भारी ॥१॥
जब मेरी पिउ से मनसा दौड़ी ।
सतगुर आन सगाई जोड़ी ॥२॥
तब मैं पिउ का मंगल गाया ।
जब मेरा स्वामी ब्याहन आया ॥३॥
हथलेवा दै बैठी संगा ।
तब मोहि लीन्ही बायँ अंगा ॥४॥
जन दरिया कहै मिटि गइ दूती[६] ।
आपा अरपि पीव सँग सूती ॥५॥

(१) बाप । (२) ब्याह कराया । (३) तुम । (४) बात करें । (५) था । (६) द्वैत भाव ।

॥ भेद ॥

पतिव्रता पति मिलो है लाग ।
जहँ गगन मंडल में परम भाग ॥ टेक ॥
जहँ जल बिन कँवला बहु अनंत ।
जहँ वपु[१] बिन भौंरा गोह[२] करंत ॥१॥
अनहद बानी अगम खेल ।
जहँ दीपक जरै बिन बाती तेल ॥२॥
जहँ अनहद सबद है करत घोर ।
बिन मुख बोलै चात्रिक मोर ॥३॥
बिन रसना गुन उचरत[३] नार ।
बिन पग पातर निरतकार[४] ॥४॥
जहँ जल बिन सरवर भरा पूर ।
जहँ अनँत जोत बिन चंद सूर ॥५॥
बारह मास जहँ रितु बसंत ।
ध्यान धरैं जहँ अनँत संत ॥६॥
त्रिकुटी सुखमन चुवत छीर ।
बिन बादल बरखै मुक्ति नीर ॥७॥
अमृत धारा चलै सीर[५] ।
कोइ पीवै बिरला संत धीर ॥८॥
ररकार धुन अरूप एक ।
सुरत गही उनहीं की टेक ॥९॥
जन दरिया बैराट चूर ।
जहँ बिरला पहुँचै संत सूर ॥१०॥

(१) शरीर । (२) गुंजार । (३) गाती है । (४) वेश्या नाचती है । (५) ठंडी ।

॥ पारख ॥

जा के उर उपजी नहिं भाई ।
सो क्या जाने पीर पराई ॥ टेक ॥
व्यावर[१] जानै पीर की सार ।
बाँझ नार क्या लखै बिकार ॥१॥
पतिव्रता पति को व्रत जानै ।
बिभचारिनि मिलि कहा बखानै ॥२॥
हीरा पारख जौहरि पावै ।
मूरख निरख के कहा बतावै ॥३॥
लागा घाव कराहै सोई ।
कौतुकहार[२] के दर्द न कोई ॥४॥
राम नाम मेरा प्रान-अधार ।
सोई राम रस पीवनहार ॥५॥
जन दरिया जानैगा सोई ।
(जाके) प्रेम की भाल कलेजे पोई ॥६॥

॥ मिश्रित ॥

संतो कहा गृहस्थ कहा त्यागी ।
जेहि देखूँ तेहि बाहर भीतर, घट घट माया लागी ॥टेक॥
माटी की भीत पवन का थंभा, गुन औगुन से छाया ।
पाँच तत्त आकार मिलाकर, सहजाँ गिरह बनाया ॥१॥
मन भयो पिता मनसा भइ माई, दुख सुख दोनौं भाई ।
आसा तृस्ना बहिनैं मिलकर, गृह की सौंज[३] बनाई ॥२॥
मोह भयो पुरुष कुबुधि भइ घरनी[४], पाँचो लड़का जाया ।
प्रकृति अनंत कुटुंबी मिलकर, कलहल[५] बहुत उपाया ॥३॥

(१) लडकोरी । (२) बनावट करने वाला, तमाशा देखने वाला । (३) सामान । (४) स्त्री । (५) झगड़ा ।

लड़कों के सँग लड़की जाई, ता का नाम अधीरी।
बन मैं बैठी घर घर डोलै, स्वारथ संग खपी री ॥४॥
पाप पुन्न दोउ पाड़ पड़ोसी, अनँत बासना नाती।
राग द्वेष का बंधन लागा, गिरह बना उतपाती ॥५॥
कोइ गृह माँडि[1] गिरह मैं बैठा, बैरागी बन बासा।
जन दरिया इक राम भजन बिन, घट घट मैं घर बासा ॥६॥

दूलनदासजी

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह, भाग १ पृष्ठ १३३]

॥ नाम महिमा ॥

(१)

कोइ बिरला यहि बिधि नाम कहै ॥ टेक ॥
मंत्र अमोल नाम दुइ अच्छर, बिनु रसना रट लागि रहै ॥१॥
होठ न डोलै जीभ न बोलै, सुरति धरनि दिढाइ गहै ॥२॥
दिन औ राति रहै सुधि लागी, यहि माला यहि सुमिरन है ॥३॥
जन दूलन सतगुरन बतायो, ता की नाव पार निबहै ॥४॥

(२)

बाजत नाम नौबति आज।
है सावधान सुचित्त सीतल, सुनहु गैब अवाज ॥१॥
सुख-कंद अनहद नाद सुनि, दुख दुरित[2] क्रम भ्रम भाज।
सतलोक बरसो पानि, धुनि निर्वान यहि मन बाज ॥२॥
तोहिं चेत चित दै प्रेम मगन, अनद आरति साज।
घर राम आये जानि, भइनि[3] सनाथ बहुरा[4] राज ॥३॥

---

(१) बनाकर। (२) दूर हुए। (३) हुई। (४) पलटा, लौटा।

जगजिवन सतगुरु कृपा पूरन, सुफल भे जन काज ।
धनि भाग दूलनदास तेरे, भक्ति तिलक बिराज ॥४॥

(३)

मन वहि नाम की धुनि लाउ ।
रटु निरंतर नाम केवल, अवर सब बिसराउ ॥१॥
साधि सूरति आपनो, करि सुवा[1] सिखर[2] चढ़ाउ ।
पोखि प्रेम प्रतीत तैं, कहि राम नाम पढ़ाउ ॥२॥
नामही अनुरागु निसु दिन, नाम के गुन गाउ ।
बनी तौ का अबहिं, आगे और बनी बनाउ ॥३॥
जगजिवन सतगुरु वचन साचे, साच मन माँ लाउ ।
करु बास दूलनदास सत माँ, फिरि न यहि जग आउ ॥४॥

(४)

जब गज अरध नाम गुहरायो ।
जब लगि आवै दूसर अच्छर, तब लगि आपुहि धायो ॥१॥
पाँय पियादे भे करुनामय, गरुड़ासन बिसरायो ।
धाय गजंद गोद प्रभु लीन्हो, आपनि भक्ति दिढ़ायो ॥२॥
मीरा को बिष अमृत कीन्हो, बिमल सुजस जग छायो ।
नामदेव हित कारन प्रभु तुम, मिर्तक गाय जियायो ॥३॥
भक्त हेत तुम जुग जुग जनमेउ, तुमहिं सदा यह भायो ।
बलि बलि दूलनदास नाम की, नामहिं तैं चित लायो ॥४॥

॥ भेद ॥

(१)

साइँ तेरो गुप्त मर्म हम जानी ।
कस करि कहौं बखानी ॥ टेक ॥
सतगुरु संत भेद मोहिं दीन्हा, जग से राखा छानी ।
निज घर का कोउ खोज न टकानी ॥१॥

(१) तोता ।

निज घर है वह अगम अपारा, जहाँ विराजै स्वामी।
ता के परे अलोक अनामी, जा का रूप न नामी ॥२॥
ब्रम्ह रूप धरि सृस्टि उपाई, आप रहा अलगानी।
बेद कितेब की रचन रचाई, दस औतार धरानी ॥३॥
निज माता सीता सोइ राधा, जिन पितु राम सुवामी।
दोउ मिलि जीवन बद छुडाया, निज पद मैं दिया ठामी ॥४॥
दूलनदास के साईं जगजीवन, निज सुत जक्त पठानी।
मुक्ति द्वार की कूँची दीन्ही, ता तें कुलुफ खुलानी ॥५॥

॥ दोहा ॥

दूलन यह मत गुप्त है, प्रगट न करौ बखान।
ऐसे राखु छिपाय मन, जस बिधवा औधान ॥६॥

(२)

देख आयौं मैं तो साईं की सेजरिया।
साईं की सेजरिया सतगुरु की डगरिया ॥१॥
सबदहि ताला सबदहि कूँची, सबद की लगी है जँजिरिया ॥२
सबद ओढ़ना सबद बिछौना, सबद की चटक चुनरिया ॥३॥
सबद सरूपी स्वामी आप बिराजैं, सीस चरन मैं धरिया ॥४॥
दूलनदास भजु साईं जगजीवन, अगिन से अहँग उजरिया ५

॥ चितावनी ॥

(१)

पछिताउ क्या दिन जात बीते, समुझ करु नर चेत रे।
अंध तेरे कंध सिर पर, काल डका देत रे ॥१॥
हुसियार ह्वै गुन गाव प्रभु के, ठाढ़ रहु गुरु खेत रे।
ताके रहै छूटै नहीं, जिमि राहु रबि ससि केत रे ॥२॥
जम द्वार तर सब पीसिगे, चर अचर निन्दक जेत रे।
नहिं पियत अमृत नाम रस, भरि स्वास सुरति सचेत रे ॥३॥

मद मोह महुवा दाख दुख, बिप का पियाला लेत रे।
जग नात गोत बिसारि सब, हर दम गुरू से हेत रे॥४॥
सगलै सुपन अपना वही, जिस रोज परत सँकेत रे।
वह आइ सिरजनहार हरि, सतनाम भौजल सेत रे।
जन दुलन सतगुरु चरन बंदत, प्रेम प्रीति समेत रे॥५॥

(२)

तू काहे को जग मैं आया, जो पै नाम से प्रीति न लाया रे॥टेक
तृस्ना काम सवाद घनेरे, मन से नहिं बिसराया रे।
भोग बिलास आस निस बासर, इतउत चित भरमाया रे॥१
त्रिकुटी तिरथ प्रेम जल निर्मल, सुरत नहीं अन्हवाया रे।
दुर्मति करम मैल सब मन के, सुमिरि सुमिरि न छुडाया रे॥२
कहँ से आयो कहँ को जैहै, अंत खोज नहिं पाया रे।
उपजि उपजि के बिनसि गये सब, काल सबै जग खाया रे॥३
कर सतसंग आपने अंतर, तजि तन मोह औ माया रे।
जन दूलन बल बल सतगुरु के, जिन मोहिं अलख लखाया रे४

॥ उपदेश ॥

(१)

बोल मनुआँ राम राम॥ टेक॥
सत्त जपना और सुपना, जिक्र लावो अष्ट जाम॥१॥
समुझि बूझि बिचारि देखो, पिंड पिंजरा धूम धाम॥२॥
बालमीकि हवाल पूछो, जपत उलटा सिद्ध काम॥३॥
दास दूलन आस प्रभु की, मुक्ति-करता सत्तनाम॥४॥

॥ दोहा ॥

राम नाम दुइ अक्छरै, रटै निरंतर कोय।
दूलन दीपक बरि उठै, मन परतीत जु होय॥५॥

(२)

जागु जागु आतमा, पुरान दाग धोउ रे।
कर्म भर्म दूर करु, कीच काम खोउ रे ॥१॥
अपनी सुधि भूलि गई, और की क्या टोउ रे।
सत्त बात झूठ करै, झूठ ही को गोउ[1] रे ॥२॥
इहै बात जानि जानि, द्वार द्वार रोउ रे।
सत्तर पानी साबुन का, प्रेम पानी भोउ[2] रे ॥३॥
लाग दाग धोय डारु, वाह वाह होउ रे।
दूलन बेकूफ़[3] काम, गाफ़िल ह्वै न सोउ रे ॥४॥

(३)

चलो चढ़ो मन यार महल अपने ॥ टेक ॥
चौक चाँदनी तारे झलकैं, बरनत बनत न जात गने ॥१॥
हीरा रतन जड़ाव जड़े जहँ, मोतिन कोटि किताब्न बने ॥२
सुखमन पलँगा सहज बिछौना, सुख सोवो को करै मने ॥३॥
दूलनदास के साईं जगजीवन, को आवै यह जग सुपने ॥४॥

(४)

जोगी चेत नगर मैं रहो रे ॥ टेक ॥
प्रेम रंग रस ओढ़ चदरिया, मन तसबीह गहो रे ॥१॥
अन्तर लाओ नामहि की धुनि, करम भरम सब धो रे ॥२॥
सूरत साधि गहो सत मारग, भेद न प्रगट कहो रे ॥३॥
दूलनदास के साईं जगजीवन, भवजल पार करो रे ॥४॥

(५)

प्रानी जपि ले तू सतनाम ॥ टेक ॥
मात पिता सुत कुटुम कबीला, यह नहिं आवैं काम।
सब अपने स्वारथ के संगी, संग न चलै छदाम ॥१॥

(१) छिपा कर रखना, पकड़े रहना। (२) थोड़े पानी से भिंगाना (३) मूर्ख।

और कछू हम चाहित नाहीं, तुम्हरे नाम चरन तें काज ॥३॥
दूलनदास गरीब निवाजहु, साईं जगजीवन महराज ॥४॥

(२)

साईं दरस माँगौं तोर, आपनो जन आनि साईं मान राखहु मोर ॥१॥
अपथ[1] पंथ न सूझि इत उत, प्रबल पाँचो चोर ।
भजन केहि बिधि करौं साईं, चलत नाहीं जोर ॥२॥
नात लाइ दुरात[2] काहे, पतित जन की दौर ।
बचन अवधि[3] अधार मेरे, आसरा नहिं और ॥३॥
हेरिये करि कृपा जन तन, ललित[4] लोचन कोर ।
दास दूलन सरन आयो, राम बंदी-छोर ॥४॥

(३)

साईं तेरे कारन नैना भये बैरागी ।
तेरा सत दरसन चहैं, कछु और न माँगी ॥१॥
निसु बासर तेरे नाम की, अंतर धुनि जागी ।
फेरत हौं माला मनौं[5], अँसुवन झरि लागी ॥२॥
पलक तजी इत उक्ति तें[6], मन माया त्यागी ।
दृष्टि सदा सत सनमुखी, दरसन अनुरागी ॥३॥
मदमाते राते मनौं[5], दाधे बिरह आगी ।
मिलि प्रभु दूलनदास के, करु परम सुभागी ॥४॥

(४)

सुनहु दयाल मोहिं अपनावहु ॥ टेक ॥
जन मन लगन सुधारन साईं, मोरि बनै जो तुमहिं बनावहु १
इत उत चित्त न जाइ हमारा, सूरत चरन कमल लपटावहु ॥२॥
तबहूँ अब मैं दास तुम्हारा, अब जिनि बिसरौ जिनि बिसरावहु ॥३॥
दूलनदास के साईं जगजीवन, हमहूँ काँ भक्तन माँ लावहु ॥४

(१) कुराह । (२) दुराते हो । (३) प्रतिज्ञा । (४) सुंदर, मोहनी । (५) गोया कि ।
(६) इधर अर्थात संसार की चतुरता (उक्ति) की ओर से आँख मूँद ली ।

(५)

साईं सुनहु बिनती मोरि ॥ टेक ॥
बुधिबल सकल उपाय-हीन मैं, पाँयन परौं दोउ कर जोरि ॥१॥
इत उत कतहूँ जाइ न मनुवाँ, लागि रहै चरनन माँ डोरि ॥२॥
राखहु दासहिं पास आपने, कस को सकिहै तोरि ॥३॥
आपन जानि कै मेटहु मेरे, औगुन सब क्रम भ्रम खोरि[1] ॥४॥
केवल एक हितू तुम मेरे, दुनियाँ भरी लाख करोरि ॥५॥
दुलनदास के साईं जगजीवन, माँगौं सत दरस निहोरि ॥६॥

(६)

साईं भजन ना करि जाइ ।
पाँच तसकर संग लागे, मोहिं हरकत[2] धाइ ॥१॥
चहत मन सतसग करनो, अधर बैठि न पाइ ।
चढत उतरत रहत छिन छिन, नाहिं तहँ ठहराइ ॥२॥
कठिन फाँसी अहै जग की, लियो सबहिं बझाइ ।
पास मन मनि नैन निकटहिं, सत्य गयो भुलाइ ॥३॥
जगजिवन सतगुरु करहु दाया, चरन मन लपटाइ ।
दास दूलन बास सत माँ, सुरत नाहिं अलगाइ ॥४॥

(७)

प्रभु तुम किहेउ कृपा बरियाई[3] ।
तुम कृपाल मैं कृपा अलायक,[4] समुझि निबजतेहु साईं ॥१॥
कूकुर धोये होइ न बाछा,[5] तजै न नीच निचाई ।
बगुला होइ न मानस-बासी,[6] बसहि जे छिपे तलाई ॥२॥

---

(१) कसर, ऐब । (२) रोकते हैं । (३) जबरदस्ती । (४) अजोग । (५) गऊ का बच्चा । (६) मानसरोवर का बासी ।

प्रभु सुभाउ अनुहारि चाहिये, पाय चरन सेवकाई ।[1]
गिरगिट पौरुष करै कहाँ लगि, दौरि कँडौरे[2] जाई ॥३॥
अब नहिं बनत बनाये मेरे, कहत अहौं गोहराई ।
दूलनदास के साईं जगजीवन, समरथ लेहु बनाई ॥४॥

॥ प्रेम ॥

(१)

धनि मोरि आज सुहागिन घड़िया ॥ टेक ॥
आज मोरे अँगना सन्त चलि आये, कौन करौं मिहमनिया ॥१
निहुरि निहुरि मैं अँगना बुहारौं, मातो मैं प्रेम लहरिया ॥२
भाव कै भात प्रेम कै फुलका, ज्ञान की दाल उतरिया ॥३॥
दूलनदास के साईं जगजीवन, गुरु के चरन बलिहरिया ॥४॥

(२)

जागु री मोरि सुरत पियारी ।
चरन कमल छवि झलक निहारी ॥ १ ॥
बिसरि जाइ दे यह संसारी ।
धरहु ध्यान मन ज्ञान विचारी ॥ २ ॥
पाँच पचीसो दे झझकारी[3] ।
गहहु नाम की डोरि सँभारी ॥ ३ ॥
साईं जगजीवन अरज हमारी ।
दूलनदास को आस तुम्हारी ॥ ४ ॥

(३)

सतनाम तें लागी अँखिया, मन परिगै जिकिर[4] जंजीर हो ॥१
सखि नैना बरजे ना रहैं, अबठिरे[5] जात बोहि तीर[6] हो ॥२॥

---

(१) ईश्वर सरीखा स्वभाव बन जाय तब उस के चरनों में बासा मिले। (२) कंडों या उपलों का ढेर। (३) फटकार या डाँट। (४) स्मरण या सुमिरन। (५) विशेष शीतलता से जम जाने को "ठिरना" कहते हैं—प्रतिलिपि में "टरे" है जिसके अर्थ खिंचने के हैं। (६) पास।

नाम सनेही बावरे, द्रग भरि भरि आवत नीर हो ॥३॥
रस-मतवाले रस-मसे[1], यहि लागी लगन गँभीर हो ॥४॥
सखि इस्क पिया से आसिकाँ, तजि दुनिया दौलत भीर हो[2] ॥५॥
सखि गोपीचन्दा भरथरी, सुलताना भये फकीर हो ॥६॥
सखि दूलन का से कहै, तह अटपटि[3] प्रेम की पीर हो ॥७॥

(४)

हुआ है मस्त मंसूरा, चढ़ा सूली न छोड़ा हक़ ।
पुकारा इश्क़बाज़ों को, अहै मरना यही बरहक़ ॥१॥
जो बोले आशिक़ाँ यारों, हमारे दिल मैं है जो शक ।
अहै यह काम सूरों का, लगाये पीर से अब तक ॥२॥
शम्सतबरेज़ की सीफ़त, जहाँ मैं ज़ाहिरा अब तक ।
निज़ामुद्दीन सुलताना, सभी मेटे दुनी के धक ॥३॥
निरख रहे नूर अल्लाह का, रहे जीते रहे जब तक ।
हुआ हाफ़िज़ दिवाना भी, भये ऐसे नहीं हर यक ॥४॥
सुना है इश्क़ मजनूँ का, लगी लैला कि रहती ज़क ।
जलाकर ख़ाक तन कीन्हा, हुए वह भी उसी माफ़िक़ ॥५॥
दुलन जन को दिया मुरशिद, पियाला नाम का थकथक ।
वही है शाह जगजीवन, चमकता देखिये लक़लक़ ॥६॥

(५)

अब तो अफ़सोस मिटा दिल का, दिलदार दीद मैं आया है ।
संतों की सुहबत मैं रह कर, हक़ हादी को सिर नाया है ॥१॥
उपदेस उग्र गहि सत्त नाम, सोइ अष्ट जाम धुनि लाया है ।
मुरशिद की मेहर हुई यों कर, मजबूत जोश उपजाया है ॥२॥

---

(१) रस में पगे । (२) प्रेमी जन जिन की प्रीति प्रीतम से लगी है उन्हें संसार और धन माल की चिन्ता नहीं रहती । (३) अडबड़, अनोखी ।

हर वक्त तसौवर मैं सूरत, मूरत अंदर झलकाया है ।
बूअली क़लंदर औ फ़रीद, तबरेज़ वही मत गाया है ॥३॥
कर सिद्क़ सबूरी लामकान, अल्लाह अलख दरसाया है ।
लखि जन दूलन जगजिवन पीर, महबूब मेरे मन भाया है ॥
ख़ाविन्द ख़ास ग़ैबी हुज़ूर, वह दिल अंदर मैं आया है ॥४॥

(६)

ऐसा रंग रँगैहैाँ, मैं तो मतवालिन होइहौं ॥ टेक ॥
भट्टी अधर लगाइ, नाम की सोज[१] जगैहौं ।
पवन सँभारि उलटि दै झोँका, करकट कुमति जलैहौं ॥१॥
गुरुमति लहन[२] सुरति भरि गागरि, नरिया नेह लगैहौं ।
प्रेम नीर दै प्रीति पुचारी, यहि विधि मदवा चुवैहौं ॥२॥
अमल अगारी नाम खुमारी, नैनन छबि निरतैहौं ।
दै चित चरन भयूँ सत सन्मुख, बहुरि न यहि जग ऐहौं ॥३॥
है रस मगन पियौं भर प्याला, माला दाम डोलैहौं ।
कह दूलन सतसाइँ जगजीवन, पिउ मिलि प्यारी कहैहौं ॥४॥

॥ करुना ॥

(१)

हमरे तो केवल नाम अधार ।
पूरन काम नाम दुइ अच्छर, अंतर लागि रहे खुटकार ॥१॥
दासन पास बसै निसुबासर, सोवत जागत कबहुँ न न्यार ।
अरध नाम टेरत प्रभु धाये, आय तुरत गज गाढ़ निवार ॥२॥
जन मन-रंजन सब दुख-भंजन, सदा सहाय परम हित प्यार ।
नाम पुकारत चीर बढ़ायो, द्रुपदी लज्या के रखवार ॥३॥

(१) तपन, विरह । (२) जामन जिस से शराब का ख़मीर जल्द उठ आता है।

गौरि गनेस औ सेष रटत जेहिं, नारद सुक[1] सनकादि पुकार।
चारहु मुख जेहिं रटत बिधाता[2], मन्त्रराज सिवमन सिंगार ॥४॥

(२)

भक्तन राम चरन धुनि लाई ॥ टेक ॥
चारिहु जुग गोहारि प्रभु लागे, जब दासन गोहराई ॥१॥
हिरनाकुस रावन अभिमानी, छिन माँ खाक मिलाई ॥२॥
अविचल भक्ति नाम की महिमा, कोऊ न सकत मिटाई ॥३॥
कोउ उसवास[3] न एकौ मानहु, दिन दिन की दिनताई ॥४॥
दुलनदास के साईं जगजीवन, है सतनाम दुहाई ॥५॥

॥ झूलना ॥

(१)

पंखा चँवर मुरछल ढुरैं, सूवा सवै खिजमत करैं।
जरबफ़ को तंबू तन्यो, बैठक बन्यो मसनंद का ॥
दिन रात झाँगरि बाजती, सुथरी सहेली नाचती।
पिलसूज[4] आगे यों जलै, उजियार मानो चंद का ॥
एकै अतर चोवा चमेली, बेला खुसबोई लिये।
एकै कटोरे मैं किये, सरबत सलोना कंद का ॥
हिन्दू तुरुक दुइ दीन आलम, आपनी ताबीन[5] मैं।
यह भी न दूलन खूब है, करु ध्यान दसरथ-नंद का ॥

(२)

बर[6] जे अठारह बरन मैं, बितपन्न[7] हैं व्याकरन मैं।
पहिरे खराऊँ चरन मैं, जानैं न स्वाद सरीर का ॥
कुस मुद्रिका कर राखते, जे देव-बानी भाखते।
नहिं अन्न आमिष[8] चाखते, नित पान करते छीर का ॥

---

(१) सुकदेव। (२) ब्रह्मा। (३) संशय। (४) पतील सोज़ यानी चौमुखी दीवट। (५) ताबेदारी। (६) श्रेष्ठ। (७) प्रवीन, कुशल। (८) माँस।

धोती उपरना अंग मैं, रत वेद विद्या रंग मैं।
विद्यारथी बहु संग मैं, जिन्ह वास तीरथ तीर का॥
सूतहिं सदा भुइँ सेज जे, पूरे तपस्या तेज के।
यह भी न दूलन खूब है, करु ध्यान श्री रघुबीर का॥

(३)

राखे जटा जिन्ह माथ मैं, बीभूति लाये गात मैं।
तिरसूल तोंबी हाथ मैं, छोडेउ सकल सुख धाम का॥
भावे जहाँ जावैं तहाँ, पुर बीच मैं आवैं नहीं।
रुद्राच्छ का माला गरे, आला[1] बिछावन चाम का॥
दसहूँ दिसा जिन्ह घूमि कै, कीन्हेउ प्रदच्छिन[2] भूमि कै।
फिरि मौन होइ बैठेउ तज्यो, मजकूर दौलत दाम का[3]॥
करि जोग देहीं जारते, हरताल पारा मारते।
यह भी न दूलन खूब है, करु ध्यान स्यामा स्याम का॥

॥ मिश्रित ॥

(१)

साहिब अपने पास हो, कोइ दरद सुनावै॥ टेक॥
साहिब जल थल घट घट ब्यापत, धरती पवन अकास हो॥१॥
नीची अटरिया की ऊँची दुवरिया, दियना बरत अकास हो॥२॥
सखिया इक पैठी जल भीतर, रटत पियास पियास हो॥३॥
मुख नहिं पिये चिरुआ नहिं पीयै, नैनन पियत हुलास हो॥४॥
साईं सरवर[4] साईं जगजीवन[5], चरनन दूलनदास हो॥५॥

(२)

नीक न लागे बिनु भजन सिंगरवा॥ टेक॥
का कहि आयौ हियाँ बरत्यो नाहीं,
भूलि गयल तोरा कौल कररवा॥ १॥

(१) उत्तम। (२) फेरा। (३) फिर मौन (चुप) साध कर बैठे और धन दौलत की चर्चा छोड़ दी। (४) तालाब। (५) संसार के प्राण आधार।

साँचा रँग हिये उपजत नाहीं,
भेप वनाय रँग लीन्हों कपरवा ॥ २ ॥
बिन रे भजन तोरी ई गति होइहै,
बाँधल जैवे तू जम के दुवरवा ॥ ३ ॥
दुलनदास के साईं जगजीवन,
हरि के चरन पर हमरो लिलरवा ॥ ४ ॥

बुल्ला साहिब

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १४०]

॥ गुरुदेव ॥

बलि हौं बलि हौं सतगुरु की ॥ टेक ॥
जिन ध्यान दियो परमेसुर को ।
त्रिकुटी सगम जिन राह निबेरी ॥ १ ॥
प्रेम विलास अकास मेँ बास है ।
आवागवन रहित भौ फेरी ॥ २ ॥
अनहद बाजे झनकार कि बानी ।
बिन सरवन तहँ सुनत है टेरी ॥ ३ ॥
बुल्ला हिरदे विचारि बोलै ।
ब्रह्म ज्ञान कि बात सुनो मेरी ॥ ४ ॥

॥ नाम ॥

साईं के नाम की बलि जावँ ।
सुमिरत नाम बहुत सुख पायो, अंत कतहुँ नहिं ठाँव ॥१॥
नाम बिना मन स्वान मँजारी[1], घर घर चित लै जाँव ॥२॥

---

(१) कुत्ता बिल्ली ।

बिन दरसन परसन मन कैसो, ज्यों लूले को गाँव[१] ॥३॥
पवन मथानी हिरदे ढूँढो, तब पावै मन ठाँव ॥४॥
जन बुल्ला बोलहि कर जोरे, सतगुरु चरन समाँव ॥५॥

॥ अनहद शब्द ॥

(१)

सोहं हंसा लागलि डोर।
सुरति निरति चढु मनवाँ मोर ॥ १ ॥
झिलिमिलि झिलिमिलि त्रिकुटी ध्यान।
जगमग जगमग गगन तान ॥ २ ॥
गह गह गह अनहद निसान।
प्रान-पुरुष तहँ रहत जान ॥ ३ ॥
लहरि लहरि उठि पछिव[२] घाट।
फहरि फहरि चल उतर बाट ॥ ४ ॥
सेत बरन तहँ आवै आप।
कह बुल्ला सोइ माइ बाप ॥ ५ ॥

(२)
अरिल

स्याम घटा घन घेरि चहूँ दिसि आइया।
अनहद बाजे घोर जो गगन सुनाइया ॥
दामिनि दमकि जो चमकि त्रिबेनी न्हाइया।
बुल्ला हदे विचार तहाँ मन लाइया ॥

(३)
अरिल

साम्हहिं उगवे सूर भोर ससि जागई।
गंग जमुन के संगम अनहद बाजई ॥

---

(१) जिस तरह लूला अपने पैरों से चल कर गाँव (मुकाम) को नहीं पहुँच सकता इसी तरह बिना नाम के दरसे परस के मन की हालत है यानी अंतर में चाल नहीं चलती। (२) पच्छिम।

अजपा जापहिं जाप सोहं डोरि लागई ।
बुल्ला ता मैं पैठि जोति मैं गाजई ।

॥ विरह ॥

(१)

देखो पिया कालो घटा मो पै भारी ॥१॥
सूनी सेज भयावन लागी, मरौं विरह की जारी ॥२॥
प्रेम प्रीति यहि रीति चरन लगु, पल छिन नाहिं बिसारी ॥३॥
चितवत पथ अंत नहिं पायो, जन बुल्ला बलिहारी ॥४॥

(२)

नैना मोरे निपट बिकट ठौर अटके ॥१॥
सुख को साथ सबै कोइ चाहे, दुखहिं परे पर छटके ॥२॥
भौंह कमान नैन दोउ गाँसी, जहाँ लगे तहँ लटके ॥३॥
जन बुल्ला दाया सतगुरु की, देखु सकल जग भटके ॥४॥

॥ प्रेम ॥

(१)

साचो भक्ति गोपाल की, मेरो मन माना ।
मनसा बाचा कर्मना, सुनु संत सुजाना ॥१॥
लँगरा लुंजा ह्वै रहो, बहिरा अरु काना ।[1]
राम नाम सौं खेल है, दीजे तन दाना ॥२॥
भक्ति हेतु गृह छोड़िये, तजि गर्व गुमाना ।
जन बुल्ला पायो बाक[2] है, सुमिरो भगवाना ॥३॥

(२)

या बिधि करहु आपहिं पार ।
जस मीन जल की प्रीति जानै, देखु आपु बिचार ॥१॥

---

(१) मन की बहिरमुख भावना बंद करो तब मालिक की ओर अंतर में चाल चलेगी । (२) बचन ।

(अस) सीप रहत समुद्र माहीं, गहत नाहिन वार[1] ।
वा की सुरत आकास लागी, स्वाँति बुंद अधार ॥२॥
(अस) चकोर चन्द सोँ दृष्टि लावै, अहार करत अँगार ।
दहत नाहिन पान कीन्हे, अधिक होत उजार[2] ॥३॥
कीट भृंग की रहनि जानो, जाति पाँति गँवाय ।
बरन अबरन एक मिलि भे, निरंकार समाय ॥४॥
(अस) दास बुल्ला आस निरखहि, राम चरन अपार ।
देहु दरसन मुक्ति परसन, आवागवन निवार ॥५॥

॥ बेहद ॥

(१)

प्रभु निराधार अधार उज्जल, बिन्दु सकल बिराजई ।
अनन्त रूप सरूप तेरो, मो पै बरनि न जावई ॥१॥
बाँधि पवनहिं साधि गगनहिं, गरज गरज सुनावई ।
तहँ हंस मुनि जन चूगते मनि, रस परसि परसि अघावई ॥२॥
बिना कर मुख बेनु[3] बाजै, बीन स्रवनन गुंजई ।
बिना नैनन दरस देखो, अगति गतिहिं जनावई ॥३॥
वा के जाति पाँति न नेम धर्मा, भर्म सकल गँवावई ।
आपु आपु बिचारि देखो, ऐसो है वह रावई[4] ॥४॥
जोति पाँच पचीस तीनों, चैाथे जा ठहरावई ।
तब दास बुल्ला लियो गढ़, जब गुरू दीन्ह लखावई ॥५॥

(२)

अनहद ताल दृग थेइ थेइ बाजै, सकल भुवन जाकी जोति बिराजै ॥१॥
ब्रह्मा बिस्नु खडे सिव द्वारै, परम जोति सो करहिं जुहारै[5] ॥२॥

(१) पानी । (२) चकोर आग खाने से नहीं जलता बल्कि उस में चेतन्यता बढ़ती है । (३) एक लम्बा बाजा जो मुँह से बजाया जाता है । (४) राजा । (५) बंदगी ।

गगन मँडल महँ निर्तन होय, सतगुरु मिलै तो देखै सोय॥३॥
आठ पहर जन बुल्ला गाजै, भक्ति भाव माथे पर छाजै ॥४॥

॥ विनती ॥

(१)

अब कि बार मो पै होहु दयाल, रोम रोम जन होइ निहाल ॥१॥
जन बिनवै आठो पहवार[१], तुम्हरे चरन पर आपा वार ॥२॥
तुम तो राम हहु निरगुन सार, मेरे हिये महँ तुम आधार॥३॥
तुम बिन जीवन कौने काज, बार बार मो को आवै लाज॥४॥
सतगुरु चरनन साज समाज, बुल्ला माँगै भक्ती राज ॥५॥

(२)

ऐसी बिनय सुनहु अबिनासी ।
अब की बार काटहु जम फाँसी ॥१॥
भया प्रकास मिटा अँधियारा ।
आदि अंत मध भो उजियारा ॥२॥
रूप रेख तहँ बरनि न जासी ।
निरकार आपुहि अबिनासी ॥३॥
जन बुल्ला तहँ रहे हजूरा ।
पूरन ब्रह्म देखा जहँ नूरा ॥४॥

॥ भेद ॥

सुखमनि सुरति डोरि बनाव ।
मेटिहै सब कर्म जिय के, बहुरि इतहिं न आव ॥१॥
पैठि अंदर देखु कंदर[२], जहाँ जिय को बास ।
उलटि प्रान अपान मेटो, सेत सबद निवास ॥२॥
गंग जमुना मिलि सरसुती, उमँगि सिखर बहाव ।
लवकंति[३] बिजुली दामिनी, अनहद्द गरज सुनाव ॥३॥

(१) पहर। (२) गुफा। (३) चमकती है।

जीति आया आपहीं, गुरु यारि सबद सुनाव ।
तब दास बुल्ला भक्ति ठानो, सदा रामहिं गाव ॥४॥

॥ उपदेश ॥

(१)

बटोही खोजहु क्यौं नहिं आप, सुमिरहु अजपा जाप ॥टेक॥
बिन खोजे कहुँ राह न पैहो, कोटिन करहु बिलाप ॥१॥
निकटहिं राम नाम अभि अंतर, जानहि जाहि मिलाप ॥२॥
हाजिर हजूर त्रिवेनी संगम, झिलमिलि नूर जो जाप ॥३॥
जन बुल्ला महबूब नूर मैं, यारी पीर[१] प्रताप ॥४॥

(२)

होली

होरी खेलो रंग भरी, सब सखियन संग लगाई ॥टेक॥
फागुन आयो मास अनँद भो, खेलि लेहु नर नारी ।
ऐसा समय बहुरि नहिं पैहो, जैहो जनम जुआ हारी ॥१॥
तीर त्रिवेनी होरी खेलो, अनहद डंक बजाई ।
ब्रह्मा बिस्नु महेस तिनों जन, रहे चरन लिपटाई ॥२॥
बनि बनि आवैं दरस दिखावैं, अद्भुत कला बनाई ।
जन बुल्ला ऐसि होरी खेले, रहे नाम लौ लाई ॥३॥

(३)

अरिल

मुरगी यह संसार चेहुँ चेहुँ करत है ।
आतम राम को नाम हृदे नहिं धरत है ॥
बिना राम नहिं मुक्ति झूठ सब कहत है ।
बुल्ला हृदे बिचारि राम सँग रहत है ॥

(१) गुरु ।

केशवदास जी

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १४१]

॥ चितावनी ॥

कवित्त

दौलत निसान बान धरे खुदी अभिमान,
करत न दाया काहू जीव की जगत मैं ।
जानत है नीके यह फीको है सकल रंग,
गहे फिरै काल फंद मारैगो छिनक मैं ॥
घेरा डेरा गज बाजि[1] झूठो है सकल साजि,
बादि[2] हरि नाम कोऊ काज नाहिं अंत के ।
बार बार कहौं तोहि छोड़ु मान माया मोह,
केसो काहे को करै छोभ मोह काम के ॥

॥ प्रेम ॥

(१)

निरमल कंत संत हम पाया ।
कोटि सूर जा की निर्मल काया ॥१॥
प्रेम बिलास अमृत रस भरिया ।
अनुभौ चँवर रैन दिन ढुरिया ॥२॥
आनँद मंगल सोहं गावैं ।
सुख सागर प्रभु कंठ लगावैं ॥३॥
सत्य पुरुष धुनि अति उजियारी ।
कोटि भानु ससि छवि पर वारी ॥४॥
तेज पुंज निर्गुन उजियारा ।
कह केसो सोइ कंत हमारा ॥५॥

---

(१) घोड़ा। (२) सिवाय।

कोटि बिस्नु अनंत ब्रह्मा, सदा सिव जेहि ध्यावहीं।
सोइ मिलो सहज सरूप केसो, अनँद मंगल गावहीं ॥१२॥

चरनदासजी

[संक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये देखो सतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ १४२]

॥ गुरुदेव ॥

(१)

गुरु बिन और न जान, मान मेरो कहो।
चरनदास उपदेस, बिचारत ही रहो ॥१॥
बेद रूप गुरु होहिं, कि कथा सुनावहीं।
पंडित को धरि रूप, कि अर्थ बतावहीं ॥२॥
कल्पवृच्छ गुरुदेव, मनोरथ सब सरैं।
कामधेनु गुरुदेव, छुधा तृस्ना हरैं ॥३॥
गुरु ही सेस महेस, ताहि चेतन करैं।
गुरु ब्रह्मा गुरु बिस्नु, होय खाली भरैं ॥४॥
गंगा सम गुरु होय, पाप सब धोवहीं।
सूरज सम गुरु होय, तिमिर हरि[1] लेवहीं ॥५॥
गुरु ही को करु ध्यान, नाम गुरु को जपो।
आपा दीजै भेंट, पुजन गुरु ही थपो ॥६॥
समरथ स्री सुकदेव, कहा महिमा करौं।
अस्तुति कही न जाय, सीस चरनन धरौं ॥७॥

(१) खींच।

! तैँ मीत बिछोहा हुआ, तब तैँ कछु न सुहानी ।
ा अंग अकुलात सखी री, रोम रोम मुरझानी ॥४॥
न मनमोहन भवन अँधेरो, भरि भरि आवै छाती ।
रनदास सुकदेव मिलावो, नैन भये मोहिं घाती[1] ॥५॥

(२)

हमारो नैना दरस पियासा हो ।
न गयो सूखि हाय हिये बाढी, जीवत हूँ वोहि आसा हो ॥१
बेछुरन थारो[2] मरन हमारो, मुख मैं चलै न ग्रासा[3] हो ।
नींद न आवै रैनि बिहावै, तारे गिनत अकासा हो ॥२॥
भये कठोर दरस नहिं जाने, तुम कूँ नेक न साँसा[4] हो ।
हमरी गति दिन दिन औरे ही, बिरह बियोग उदासा हो ३
सुकदेव प्यारे मत रहु न्यारे, आनि करो उर वासा हो ।
रनजीता[5] अपनो करि जानो, निज करि चरनन दासा हो ॥४

(३)

मो बिरहिन की बात, हेली बिरहिन हो सोइ जानि है ।
नैन बिछोहा जानती, हेली बिरहै कीन्हो घात ॥१॥
या तन कूँ बिरहा लगो, हेली ज्यों घुन लागो काठ ।
निस दिन खाये जातु है, हेली देखूँ हरि की बाट ॥२॥
हिरदे में पावक जरै, हेली तपि नैना भये लाल ।
आँसूँ पर आँसू गिरैँ, हेली यही हमारो हाल ॥३॥
प्रीतम बिन कल ना परै, हेली कलकल[7] सब अकुलाहिं ।
डिगी[8] परूँ सत[9] ना रहो, हेली कब पिय पकरैँ बाँहिं ॥४॥

---

(१) दुखदाई, जीवलेवा । (२) तेरा । (३) लुकमा या कौर । (४) गिनती है ।
(५) फुरसत । (६) चरनदासजी की मा बाप का रक्खा हुआ नाम । (७) व्याकुल ।
(८) गिरी । (९) सत्ता, बल ।

सील सँतोष बिबेक दया के धाम हैं।
ज्ञान रतन गुलजार सँघाती राम हैं ॥ ३ ॥
धरम धजा फरकंत फरहरै लोक रे।
ता मध अजपा नाम सु सौदा रोक[1] रे ॥ ४ ॥
चलै बनिजवा[2] ऊठ[3] हूँठ गढ छाड़ रे।
हरे हाँ रे कहता दास गरीब लगै जम डाँड़ रे ॥५॥

॥ बेहद ॥

अरिल छंद

(१)

बिना मूल अस्थूल, गगन मैं रमि रहा।
कोई न जाने भेव, सकल सब भ्रमि रहा ॥ १ ॥
अछै बृच्छ बिस्तार, अपार अजोख है।
नहीं गाम नहिं धाम, मुक्त नहिं मोख है ॥ २ ॥
छत्र सिंघासन सेत, पुरुष का रूप है।
बरन अबरन बिचार, न छाया धूप है ॥ ३ ॥
देख पदम उँजियार, परख नहिं आवहीं।
करम लिखा सो होय, टरै नहिं भावही[4] ॥ ४ ॥
अबिगत पूरन ब्रह्म, परम परवान रे।
हरे हाँ रे कहता दास गरीब, सबद पहिचान रे ॥ ५ ॥

॥ बिनय ॥

दीन के दयाल, भक्ति बिर्द[5] दीजिये।
खानाजाद गुलाम, अपन कर लीजिये ॥१॥
खानाजाद गुलाम, तुम्हारा है सही।
मिहरबान महबूब, जुगन जुग पत रही ॥२॥

---

(१) नक़द दाम से मिलने का। (२) बंजारा, प्राण। (३) उठना। (४) भावी = होनहार। (५)

बाँदी-जाद[1] गुलाम, गुलाम गुलाम है ।
खड़ा रहै दरबार, सु आठो जाम है ॥३॥
सेवक तलबदार[2], तुम्हरे दर कूकहीं ।
औगुन अनंत अपार, परी मोहिं चूक हीं ॥४॥
मैं घर का बन्दाजादा, अरज मेरि मानिये ।
कहता दास गरीब, अपन कर जानिये ॥५॥

॥ साध महिमा ॥

सोई साध अगाध है, आपा न सरावै[3] ।
पर-निंदा नहिं संचरै, चुगली नहिं खावै ॥१॥
काम क्रोध त्रिस्ना नहीं, आसा नहिं राखै ।
साचे सूँ परचा भया, जब कूड़ न भाखै ॥२॥
एकै नजर निरंजना, सबही घट देखै ।
ऊँच नीच अंतर नहीं, सब एकै पेखै ॥३॥
सोई साध सिरोमनी, जप तप उपकारी ।
भूले कूँ उपदेस दे, दुर्लभ संसारी ॥४॥
अकल[4] यकीन पठाय दे, भूले कूँ चेतै ।
सो साधू संसार में, हम बिरले भेंटे ॥५॥
सूतक[5] खोवै सत कहै, साचे सूँ लावै ।
सो साधू संसार में, हम बिरले पावै ॥६॥
निरख निरख पग धरत हैं, जिव हिंसा नाहीं ।
चौरासी तारन तरन, आये जग माहीं ॥७॥
इस सौदे कूँ ऊतरे, सौदागर सोई ।
भरे जहाज उतारि दे, भौसागर लोई ॥८॥

(१) लौंडी बच्चा । (२) तनख्वाह पाने वाले । (३) सराहै । (४) बुद्धि । (५) अशुद्धता ।

भेष धरैं भागे फिरैं, बहु साखी सीखैं ।
जानैं नहीं विवेक कूं, खर के ज्यूं रीकैं[1] ॥९॥
खास मुकामा दरस है, जो अरस रहंता ।
उनमुन मैं तारी लगी, जहँ अजप जपता ॥१०॥
सुन्न महल अस्थान है, जहँ इस्थिर डेरा ।
दास गरीब सुभान[2] है, सत साहिब मेरा ॥११॥

॥ सारगहनी ॥

मन मगन भया जब क्या गावै ॥ टेक ॥
ये गुन इंद्री दमन करेगा, वस्तु अमोली सो पावै ॥१॥
तिरलोकी की इच्छा छाड़े, जग मैं बिचरै निर्दावै ॥२॥
उलटी सुलटी निरति निरंतर, बाहर से भीतर लावै ॥३॥
अधर सिंघासन अविचल आसन, जहँवाँ सूरति ठहरावै ४॥
त्रिकुटी महल मैं सेज बिछी है, द्वादस[3] अंदर छिप जावै ॥५॥
अजर अमर निज मूरत सूरत, ओअं सोहं दम ध्यावै ॥६॥
सकल मनोरथ पूरन साहिब, बहुरि नहीं भौजल आवै ॥७॥
गरीबदास सतपुरुष विदेही, साचा सतगुरु दरसावै ॥८॥

॥ उपदेश ॥

(१)

घट ही मैं चंद चकोरा साधो, घट ही चंद चकोरा ॥टेक॥
दामिनि दमकै घनहर[4] गरजै, बोलै दादुर मोरा ।
सतगुरु गस्ती गस्त फिरावैं, फिरता ज्ञान ढंढोरा ॥१॥
अदली राज अदल बादसाही, पाँच पचीसो चोरा ।
चीन्हो सबद सिंध घर कीजे, होना गारतगोरा[5] ॥२॥

(१) यह नर्गी कड़ी भगली साधू और भेष के लक्षण बतलाती है । (२) पवित्र ।
(३) द्वादस दल=कमल त्रिकुटी । (४) बादल । (५) नाश ।

त्रिकुटी महल में आसन मारो, जहँ न चलै जम जोरा।
दास गरीब भक्ति को कीजो, हुआ जात है भोरा[१] ॥३॥

(२)

राम सुमिर राम सुमिर, राम सुमिर लै रे।
जम और जहान जीत, तीन लोक जै रे ॥१॥
इन्द्री अदालत चोर, पकड़ो मन अहि[२] रे।
अनहद टंकोर घोर, सुनै क्यूं न बहिरे ॥२॥
सुरत निरत नाद बिंद, मन पवना गहि रे।
उनमुनी अलेल[३] रूप, निराकार लहि रे ॥३॥
धनुष[४] ध्यान मार बान[५], दुरजन से फहिरे[६]।
देखत के सीत कोट, भरम बुर्ज ढहि रे ॥४॥
साचे से प्रीत कीन, झूठा मन महि[७] रे।
कहत हैं गरीबदास, कुटिल बचन सहि रे ॥५॥

(३)

मग[८] पूछत हैं परतीत नहीं, नादी[९] बादी[१०] झगड़ा ठानैं।
मुकता जुगता नहिं राह लहैं, नहिं साध असाध कूं जानत हैं॥१
देवल जाहीं मसजिद माहीं, साहिब का सिरजा भानत हैं[११]।
पंडित काजी डोबी[१२] बाजी, नहिं नीरखीर[१३] कूँ छानत हैं॥२
चेतन का गल काटत हैं, घर पत्थर पाहन मानत हैं।
कहै दास गरीब निरास चले, धिरकार जनम नर लानत है॥३

॥ जाति पाँति भेद खडन ॥

कैसे हिंदू तुरक कहाया। सबही एकै द्वारे आया ॥१॥
कैसे बाम्हन कैसे सूद्रं। एकै हाड़ चाम तन गूदं ॥२॥

---

(१) सवेरा। (२) साँप। (३) बेपरवाह। (४) कमान। (५) तीर। (६) दूर रहो, बचो। (७) मथ लो अर्थात,छाछ की तरह अलग कर दो। (८) राह। (९) भेष। (१०) पंडित। (११) मालिक के पैदा किये हुए जीवों की हिंसा करते हैं। (१२) डुबा दी। (१३) दूध।

एकै बिंद एक भग द्वारा । एकै सब घट बोलनहारा ॥३॥
कौम छतीस एकही जाती । ब्रह्मबीज सब की उतपाती ॥४॥
एकै कुल एकै परिवारा । ब्रह्मबीज का सकल पसारा ॥५॥
ऊँच नीच इस विधि है लोई । कर्म कुकर्म कहावै दोई ॥६॥
गरीबदास जिन नाम पिछाना । ऊँच नीच पद ये परमाना ॥७॥

गुलाल साहिब

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ २०८]

॥ नाम ॥

नाम रस अमरा है भाई, कोउ साध संगति तेँ पाई ॥टेक॥
बिन घोटे बिन छाने पीवे, कौड़ी दाम न लाई ।
बिन चोटे बिन छाने पीवे, कबहीँ उतरि न जाई ॥१॥
रंग रँगीले चढ़त रसीले, कबहीँ उतरि न जाई ॥१॥
छके छकाये पगे पगाये, झूमि झूमि रस लाई ।
बिमल बिमल बानी गुन बोलै, अनुभव अमल चलाई ॥२॥
जहँ जहँ जावै थिर नाहिँ आवै, खोल[1] अमल लै धाई ।
जल पत्थल पूजन करि मानत, फोकट गाढ बनाई[2] ॥३॥
गुरु परताप कृपा तेँ पावै, घट भरि प्याल[3] फिराई ।
कहै गुलाल मगन है बैठे, भागिहै हमरि बलाई ॥४॥

॥ अनहद शब्द ॥

रे मन नामहिं सुमिरन करै ।
अजपा जाप हृदय लै लावो, पाँच पचीसो तीन मरै ॥१॥

(१) थोथा । (२) सँत मेँ गढ के बनाया है । (३) प्याला ।

अष्ट कमल मैँ जीव बसतु है, द्वादस मैँ गुरु दरस करै।
सोरह ऊपर बानि उठतु है, दुइ दल अमी झरै ॥२॥
गगा जमुना मिली सरसुती, पदुम झलक तहँ करै।
पछिम दिसा ह्वै गगन मँडल मैँ, काल बली सोँ लरै ॥३॥
जम जीतो है परम पद पायो, जोती जगमग बरै।
कह गुलाल सोइ पूरन साहिब, हर दम मुक्ति फरै ॥४॥

॥ प्रेम ॥

(१)

अविगत जागल हो सजनी।
खोजत खोजत सतगुरु पावल,
ताहि चरनवाँ चितवा लागल हो सजनी ॥टेक॥
साँझि समय उठि दीपक बारल,
कटल करमवा मनुवाँ पागल[1] हो सजनी ॥ १ ॥
चललि उघटि बाट छुटलि सकल घाट,
गरजि गगनवा अनहद बाजल हो सजनी ॥ २ ॥
गइली अनँदपुर भइली अगम सूर,
जितली मैदनवाँ नेजवा गाडल हो सजनी ॥ ३ ॥
कहै गुलाल हम प्रभुजी पावल,
फरल लिलरवा पपवा भागल हो सजनी ॥ ४ ॥

(२)

जो पै कोइ प्रेम के। गाहक होई।
त्याग करै जो मन की कामना, सीस दान दै सोई ॥१॥
और अमल की दर जो छोड़ै, आपु अपन गति जोई।
हर दम हाजिर प्रेम पियाला, पुलकि पुलकि रस लेई ॥२॥

(१) पगा या लीन हुआ।

जीव पीव महँ पीव जीव महँ, बानी बोलत सोई ।
सोई सभन महँ हम सबहन महँ, बूझत बिरला कोई ॥३॥
वा की गती कहा कोइ जानै, जो जिय साचा होई ।
कह गुलाल वे नाम समाने, मत भूले नर लोई ॥४॥

(३)

आनँद बरखत बुन्द सुहावन ।
उमँगि उमँगि सतगुरु बर राजित, समय सुहावन भावन ॥१
चहूँ ओर घनघोर घटा आई, सुन्न भवन मन-भावन ।
तिलक तत्त बँदी पर झलकत, जगमग जोति जगावन ॥२॥
गुरु के चरन मन मगन भयो जब, बिमल बिमल गुन गावन।
कहै गुलाल प्रभु कृपा जाहि पर, हर दम भादों सावन ॥३॥

(४)

होली

सतगुरु सँग होरी खेलो, अनहद तूर बजाई ॥ टेक ॥
काया नगर मेँ होरी खेलो, प्रेम कै परल धमारी ।
पाँच पचीस मिलि चाचरि गावहिं, प्रभुजी की बलिहारी ॥१
सहज के फाग पर्यो निस बासर, भरि छूटै पिचुकारी।
नाद बिंदहीं गाँठि पर्यो जब, परलि परस्पर मारी ॥२॥
तारी दै दै भाँवरि नावहिं, एक तेँ एक पियारी ।
तत्त अबीर उड़ावत कर धरि, काहू कोउ न सँभारी ॥३॥
अब खेलो मन महा मगन है, तन मन सर्बस वारी ।
कह गुलाल हम प्रभु सँग खेलल, पूजलि आस हमारी ॥४॥

॥ विनय ॥

(१)

दीना-नाथ अनाथ यह, कछु पार न पावै ।
बरनौं कवनी जुक्ति से, कछु उक्ति न आवै ॥१॥

कुंडलिया

(२)

जो भल चाहो आपनो, तो सतगुरु खोजहु जाइ ॥
सतगुरु खोजहु जाइ, जहाँ वै साहिब रहते ।
निसि दिन इहै विचार, सदा हरि को गुन कहते ॥
समुझै बूझि बिचारि कै, तन मन लावै सेव ।
कृपा करहिं तब रीझि कै, नाम देहिं गुरुदेव ॥
भीखा बिछुरे जुगन के, पल महँ देहिं मिलाइ ।
जो भल चाहो आपनो, तो सतगुरु खोजहु जाइ ॥

॥ अनहद शब्द ॥

धुनि बजत गगन महँ बीना, जहँ आपु रास रस भीना ॥टेक॥
भेरी[1] ढोल संख सहनाई, ताल मृदंग नवीना ।
सुर जहँ बहुतै मौज सहज उठि, परत है ताल प्रबीना ॥१
बाजत अनहद नाद गहागह, धुधुकि धुधुकि सुर झीना ।
अँगुरी फिरत तार सातहु पर, लय निकसत भिन भीना[2] ॥
पाँच पचीस बजावत गावत, निर्त चारु[3] छबि दीन्हा ।
उघटत तननन थ्रितां थ्रितां, कोउ ताथेइ थेइ तत कीन्हा ॥
बाजत ताल तरंग बहु, मानो जत्री जंत्र कर लीन्हा ।
सुनत सुनत जिव थकित भयो, मानो ह्वै गयो सबद अधीना ॥
गावत मधुर चढाय उतारत, रुनझुन रुनझुन धीना[4] ।
कटि किंकिनि पगु नूपुर की छबि, सुरति निरति लौलीना ॥
सबद ओंकार उठतु है, अटुट रहत सब दीना[5] ।
लगन निरंतर प्रभु सोँ, भीखा जल मन मीना ॥६॥

(१) एक बाजे का नाम । (२) भिन्न भिन्न या भाँति भाँति की । (३) सुन्दर ।
(४) ताधिन ताधिन । (५) सब दिन यानी सदा एक रस रहता है ।

॥ चितावनी ॥

मन मानि ले तू कहल हमार ।
फिरि फिरि मानुष जनम न पैहो, चौरासी औतार ॥टेक॥
पागा माया विषै मिठाई, काम क्रोध रत सोई ।
सुर नर मुनि गन गंधर्ब कछु कछु, चाखत है सब कोई ॥१॥
त्रिविधि ताप को फंद परो है, सूझत वार न पारा ।
काल कराल बसै निकटहिं, धरि मारि नर्क महँ डारा ॥२॥
संत साध मिलि हाट लगायो, सौदा नाम भराई ।
जो जा को अधिकार होत तिन, तैसी बस्तु मोलाई ॥३॥
सब भक्तन धन धाम सकल लै, सरनागति मैं डारा ।
समझो बूझि विचारि उतारो, अपने सिर को भारा ॥४॥
जोग जुक्ति के परचा पैहो, सुरति निरति ठहराई ।
अर्ध उर्ध के मध्य निरंतर, अनहद धुनि घहराई ॥५॥
सुरति मगन परमारथ जागै, करम होहिं जरि छारा[1] ।
ज्ञान ध्यान के खानि खुलै जब, तब छूटै संसारा ॥६॥
भक्ति भाव कलपद्रुम छाया, ताप रहै नहिं देई ।
चारि पदारथ अज्ञाकारी, पर[2] सौं कबहिं न लेई ॥७॥
राम नाम फल मिलो जाहि को, प्रेम सुधा रस धारा ।
पुलकि पुलकि मन पान करो तुम, निस दिन बारम्बारा ॥८॥
गुरु परताप कहाँ लगि बरनौं, उक्को एक न आई ।
रसना जो कहि होयँ सहसदस, उपमा गाइ न जाई ॥९॥

(१) राख । (२) पराया या दूसरा ।

आतम राम अखंडित आपै, निज साहिब बिस्तारा।
भीखा सहज समाधी लावो, औसर इहै तुम्हारा ॥१०॥

॥ प्रेम ॥

(१)

प्रीति की यह रीति बखानौं ॥ टेक ॥
कितनौ दुख सुख परै देँह पर, चरन कमल कर ध्यानौ ॥१॥
हो चेतन्य बिचारि तजो भ्रम, खाँड़ धूर जनि सानौ ॥२॥
जैसे चात्रिक स्वाँति बुन्द बिनु, प्रान समरपन ठानौ ॥३॥
भीखा जेहि तन राम भजन नहिँ, काल रूप तेहि जानौ ॥४॥

(२)

कहा कोउ प्रेम बिसाहन[1], जाय।
महँग बड़ा गथ[2] काम न आवै, सिर के मोल बिकाय ॥टेक॥
तन मन धन पहिले अरपन करि, जग के सुख न सुहाय।
तजि आपा आपुहिं ह्वै जीवै, निज अनन्य[3] सुखदाय ॥१॥
यह केवल साधन को मत है, ज्यों गूँगे गुड़ खाय।
जानहि भले कहै सो का सोँ, दिल की दिलहिं रहाय ॥२॥
बिनु पग नाच नैन बिनु देखै, बिन कर ताल बजाय।
बिन सरवन धुनि सुनै बिबिधि बिधि, बिन रसना गुन गाय ३
निर्गुन मैँ गुन क्योँकर कहियत, ब्यापकता समुदाय[4]।
जहँ नाहीं तहँ सब कछु दिखियत, अँधरन की कठिनाय ॥४॥
अजपा जाप अकथ को कथनो, अलख लखन किन पाय।
भीखा अविगत की गति न्यारी, मन बुधि चित न समाय ॥५

(१) मोल लेना, ख़रीद करना। (२) सोच समझ। (३) बेमिलौनी, केवल।
(४) सब जगह।

॥ समरथ ॥

ए हरि मीत बड़े तुम राजा ।
व्यापक जहँ तहँ लगु तुम्हरे हुकुम बिना कहुँ सरै न काजा ॥टेक
तिरगुन सूबा मौज बनाया, भिन्न भिन्न तहँ फौज रखाया ।
हय[1] गय[2] रथ सुखपाल बहूता, माया बढ़ी करै को कूता ।
कहत बनै नहिं अनघड़ साजा, ए हरि मीत० ॥१॥
चारो दिसा कनात गड़ा है, असमान तबू बिन चोब खड़ा है ।
पानी अगिनि पवन है पायक, जो कछु काम सो करिबे लायक ।
अनहद ढोल दमामा बाजा, ए हरि मीत० ॥२॥
तारागन पैदल समुदाई, अज्ञा ले तहँ तहँ चलि जाई ।
चाँद सूर निस बासर आई, आवत जात मसाल दिखाई ।
ध्रुव कियो थीर अचल मन धाजा[3], ए हरि मीत० ॥३॥
सहजादा है मन बुधि काला, कीन्हेव सकल जगत पैमाला ।
काल बड़ा उमराव है भारी, डरै सकल जहँ लग तन धारी ।
तुम्हरो दंड सकल सिर ताजा, ए हरि मीत० ॥४॥
सत्त सतोगुन मंत्र दृढ़ावा, ज्ञान आदि दे पुत्र बुलावा ।
अमल करहु तुम जग मैं जाई, फेरहु केवल राम दुहाई ।
नाम प्रताप प्रकास को छाजा, ए हरि मीत० ॥५॥
चतुरंगिनि उज्जल दल देखा, जोग बिराग बिचार को लेखा ।
छिमा सील संतोष को भाऊ, परमारथ स्वारथ नहिं चाऊ ।
स्वारथ-रत पर पारहु गाजा[4], ए हरि मीत० ॥६॥
रज गुन तम गुन कीन्ह्यो मेला, सबहीं भयो सतोगुन चेला ।
हम तुम आइ कछू नहिं कीन्हा, अज्ञाईस सीस पर लीन्हा ।
भरत बहुत डेर आपु की लाजा, ए हरि मीत० ॥७॥

---

(१) घोड़ा । (२) हाथी । (३) ध्वजा, फरहरा । (४) जो स्वार्थी है उस पर बिजली गिराते हैं ।

पठयौ काम क्रोध मद लोभा, जा तैं कीन्ह सकल तन छोभा।
केवल नाम भजै सो बाचै, नहिं तैा और सकल मन काचै।
भीखा तुम बिन कौन निवाजा[१], ए हरि मीत बड़े तुम राजा ८

॥ विनती ॥

(१)

प्रभु जी करहु अपनो चेर।
मैं तो सदा जनम को रिनिया[२], लेहु लिखि मोहिं केर ॥१॥
काम क्रोध मद लोभ मोह यह, करत सबहिन जेर।
सुर नर मुनि सब पचि पचि हारे, परे करम के फेर ॥२॥
सिव सनकादि आदि ब्रह्मादिक, ऐसे ऐसे ढेर।
खोजत सहज समाधि लगाये, प्रभु को नाम न नेर ॥३॥
अपरंपार अपार है साहिब, हूँ अधीन तन हेर।
गुरु परताप साध की संगति, छुटे सो काल अहेर[३] ॥४॥
त्राहि त्राहि सरनागत आयो, प्रभु दरबो[४] यहि बेर।
जन भीखा को उरिन कीजिये, अब कागद जिनि हेर ॥५॥

(२)

अस करिये साहिब दाया ॥ टेक ॥
कृपा कटाच्छ होइ जेहि तैं प्रभु, छूटि जाय मन माया ॥१॥
सोवत मोह निसा निस बासर, तुमहीं मोहिं जगाया ॥२॥
जनमत मरत अनेक बार, तुम सतगुरु होय लखाया ॥३॥
भीखा केवल एक रूप हरि, व्यापक त्रिभुवन राया ॥४॥

(३)

यार हो हँसि बोलहु मो सोँ, भरम गाँठि छूटै प्रभु तो सोँ ॥१॥
पालन करि आये मो कहँ तुम, खाय जियाय कियो घर पोसो २

(१) दया या पर्वरिश करना। (२) क़र्ज़दार। (३) शिकार। (४) दया कीजिये।

बचन मेटि मैं कहौं गरज बसि, दरदवंद प्रभु करौ नगोसो[1] ॥३॥
हो करता करमन के दाता, आगे बुधि आवत नहिं हासो ॥४॥
तुम अंतरजामी सब जानो, भीखा कहा करहि अपसोसो ॥५॥

(४)

मोहिं राखो जी अपनी सरन ॥ टेक ॥
अपरम्पार पार नहिं तेरो, काह कहौं का करन ॥१॥
मन क्रम बचन आस इक तेरी, होउ जनम या मरन ॥२॥
अविरल भक्ति के कारन तुम पर, हूँ बाम्हन देउँ धरन[2] ॥३॥
जन भीखा अभिलाख इहो, नहिं चहौं मुक्ति गति तरन ॥४॥

॥ अद्वैत ॥

कवित

खुद एक भुम्मि[3] आहि, बासन[4] अनेक ताहि,
रचना बिचित्र रंग, गढ़ेउ कुम्हार है ।
नाम एक सोन आस[5], गहना है द्वैत भास,
कहूँ खरा खोट रूप, हेमहिं[6] अधार है ॥
फेन बुदबुद अरु लहरि तरंग बहु,
एक जल जानि लीजै, मीठा कहूँ खार है ।
आतमा त्यौं एक जाते[7] भीखा कहै याहि मते,
ठग सरकार के, बटोही[8] सरकार के ॥

॥ साध महिमा ॥

भजन तें उत्तम नाम फकीर ।
छिमा सील संतोष सरल चित, दरदवंद पर-पीर ॥टेक॥
कोमल गदगद गिरा[9] सुहावन, प्रेम सुधा रस छीर ।
अनहद नाद सदा फल पायो, भोग खाँड घृत खीर ॥१॥

(१) गुस्सा । (२) धरना । (३) मिट्टी । (४) बरतन । (५) अस । (६) सोना ।
(७) एक ही जानि की । (८) मुसाफ़िर । (९) बानी ।

ब्रह्म प्रकास को भेष बनायो, नाम मेखला चीर ।
चम्कत नूर जहूर जगामग, ढाँके सकल सरीर ॥२॥
रहनि अचल इस्थिर कर आसन, ज्ञान बुद्धि मति धीर ।
देखत आतम राम उघारे, ज्यौं दरपन मधि हीर ॥३॥
मोह नदी भ्रम भँवर कठिन है, पाप पुन्य दोउ तीर ।
हरि जन सहजे उतरि गये ज्यौं, सूखे ताल को झीर[1] ॥४॥
जग परपंच करम बहतो है, जैसे पवन रु नीर ।
गुरु गम सबद समुद्रहिं जावे, परत भयो जल थीर ॥५॥
केलि करत जिय लहरि पिया सँग, मति बड़ गहिर गँभीर ।
ताहि काहि पटतरो[2] दीजिये, जिन तन मन दियो सीर[3] ॥६॥
मन मतंग मतवार बडो है, सब ऊपर बल बीर ।
भीखा हीन मलीन ताहि को, छीन भयो जस जीर ॥७॥

॥ उपदेश ॥

(१)

मन तूँ राम से लौ लाव ।
त्यागि के परपंच माया, सकल जगहि नचाव ॥१॥
साच की तू चाल गहि ले, झूठ कपट बहाव ।
रहनि सौं लौ लीन ह्वै, गुरु-ज्ञान ध्यान जगाव ॥२॥
जोग की यह सहज जुक्ति, बिचार कै ठहराव ।
प्रेम प्रीति सों लागि के घट, सहजहीं सुख पाव ॥३॥
दृष्टि तें आदृष्ट देखो, सुरति निरति बसाव ।
आतमा निर्धार निर्भौ, बानि[4] अनुभव गाव ॥४॥
अचल इस्थिर ब्रह्म सेवो, भाव चित अरुझाव ।
भीखा फिर नहिं कबहुँ पैहौ, बहुरि ऐसो दाव ॥५॥

(१) छिछला पानी (२) उपमा । (३) सिर अर्थात अहं । (४) बाणी ।

॥ रेखता ॥

(२)

करो विचार निर्धार[1] अवराधिये[2],
सहज समाधि मन लाव भाई ।
जब जक्त की आस तैं होहु नीरास,
तब मोच्छ दरबार की खबरि पाई ॥
न तो भर्म अरु कर्म बिच भोग भटकन लग्यो,
जरा अरु मरन तन वृथा जाई ।
भीखा मानै नहीं कोटि उपदेस सठ,
थक्यो बेदांत जुग चारि गाई ॥

॥ मिश्रित ॥

(१)

अगह तुम्हरो न गहना है । अकह तुम कहा कहना है ॥१॥
सबद अरु ब्रह्म अधिकारी । चेतन तुम रूप तन धारी ॥२॥
अबिगति तुम्हरी न गति पावै । कहाँ अस ज्ञान बुधि आवै ३
तुम्हरो कहिं वार नहिं पारा । केतो अनुमान करि हारा ॥४॥
अगम का गम कवन पावै । जहाँ नहिं चित्त मन जावै ॥५॥
प्रगट तुम गुप्त सब माहीं । बियापक तुम कहाँ नाहीं ॥६॥
सुनहु सब की कहहु सब से । देखहु सब को मिलो तन से ॥७॥
जहाँ लगि सकल हो तुमहीं । धोख यह बीच हम हमहीं ॥८॥
छुटै जब तैं व मैं मेरा । तहाँ ठाकुर न कोउ चेरा ॥९॥
केवल सोइ आपु आपै हो । दुइत सोइ जाय जा पैहो ॥१०॥
उभै[3] हम एक हो तुम हीं, । हमैं तुम्ह भेद कम कमहीं ॥११॥
भीखा तजो भरम के ताइ । चीन्हो निज आपनो साईं ॥१२॥

(१) निरंतर । (२) आराधना करो । (३) दो ।

(२)

कुंडलिया

जीव कहा सुख पावई बेमुख वहु घर माहिं ॥
बेमुख वहु घर माहिं एक तें एक अपबल ।
तेहू तें हैं अधिक अधिक तें अधिक महाबल ॥
तेहि में मन अरु पवन त्रिगुन कै डोरि लगाई ।
बाँधे सब जग जाल छुटै कोऊ नाहिं पाई ॥
जो भीखा सुमिरै राम को तो सकल अर्थ होइ जाहि ।
जीव कहा सुख पावई बेमुख बहु घर माहिं ॥

पलटू साहिब

[संक्षिप्त जीवन-चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ २१३]

॥ नाम ॥

अरिल

जो कोइ चाहै नाम तो नाम अनाम है ।
लिखन पढ़न में नाहिं निअच्छर क़ाम है ॥
रूप कहौं अनरूप पवन अनरेख ते ।
अरे हाँ पलटू गैब दृष्टि से संत नाम वह देखते ॥

॥ शब्द ॥

फूटि गया असमान सबद की धमक में ।
लगी गगन में आग सुरति की चमक में ॥
सेसनाग औ कमठ लगे सब काँपने ।
अरे हाँ पलटू सहज समाधि कि दसा खबर नहिं आपने ॥

॥ चितावनी ॥

(१)

कहवाँ से जिव आये, कहवाँ समाने हो साधो ।
का देखि रहेउ भुलाय, कहाँ लिपटाने हो साधो ॥१॥

निर्गुन से जिव आये, सर्गुन समाने हो साधो ।
भूलि गये हरि नाम, माया लिपटाने हो साधो ॥२॥
जैसे तुरकी घोड़ खैंचि, लट बागा हो साधो ।
ऊँच सीस भये नीच, चुगन लागे कागा हो साधो ॥३॥
आठ काठ कै पिंजरा, दस दरवाजा हो साधो ।
कौनिक निकसा प्रान, कौन दिसि भागा हो साधो ॥४॥
रोवत घर की नारि, केस लट खोले हो साधो ।
आज मँदिर भयो सून, कहाँ गये राजा हो साधो ॥५॥
आलहि[1] बाँस कटाइनि, डँडिया फँदाइनि हो साधो ।
पाँच पचीस बराती, लेइ सब धाये हो साधो ॥६॥
तीरे दिहिन उतारि, सकल नहवावैं हो साधो ।
करि सोरहो सिंगार, सकल जुरि आये हो साधो ॥७॥
आलहि चँदन कटाइनि, घेरि घर छाइनि हो साधो ।
लोग कुटुम परिवार, दिहिनि पहुडाई[2] हो साधो ॥८॥
लाइ दिहिनि मुख आग, काठ करि भारा हो साधो ।
पुत्र लिये कर बाँस सीस गहि मारा हो साधो ॥९॥
चहुँ दिसि पवन झकोरै, तरवर डोलै हो साधो ।
सूझत वार न पार, कौन दिसि जाना हो साधो ॥१०॥
इहवाँ नहिं कोइ आपन, जे से मैं बोलौं हो साधो ।
जस पुरइनि[3] कर पात, अकेला मैं डोलौं हो साधो ॥११॥
बिष बोयौं संसार अमृत, कस पावौं हो साधो ।
पुरब जनम करि पाप, दोस केहि लावौं हो साधो ॥१२॥
भौसागर की नदिया, पार कस जावौं हो साधो ।
गुरु बैठे मुख मोड़ि, मैं केहि गोहरावौं हो साधो ॥१३॥

(१) जल्दी । (२) लेटाया । (३) कोई ।

जेहि बैरिन कर मूल, ताहि हित मान्यौं हो साधो ।
पलटुदास गुरु ज्ञान सुनत, अलगान्यौं हो साधो ॥१४॥

(२)

कुंडलिया

खेलु सितावी फाग तू बीती जात बहार ॥
बीती जात बहार सम्बत लगने पर आया ।
लीजै डफ्फ बजाय सुभग मानुष तन पाया ॥
खेलो घूँघट खोलि लाज फागुन मैं नाहीं ।
जे कोउ करिहै लाज काज ना सुपनेहुँ माँहीं ॥
प्रेम की माट भराय सुरति की करु पिचुकारी ।
ज्ञान अबीर बनाय नाम की दीजै गारी ॥
पलटू रहना है नहीं सुपना यह संसार ।
खेलु सितावी फाग तू बीती जात बहार ॥

(३)

कुंडलिया

क्या सोवै तू बावरी चाला जात बसंत ॥
चाला जात बसंत कंत ना घर मैं आये ।
धृग जीवन है तोर कंत बिन दिवस गँवाये ॥
गर्व गुमानी नारि फिरै जोबन की माती ।
खसम रहा है रूठि नहीं तू पठवै पाती ॥
लगै न तेरो चित्त कंत को नाहिं मनावै ।
का पर करै सिंगार फूल की सेज बिछावै ॥
पलटू ऋतु भरि खेलि ले फिर पछितैहै अंत ।
क्या सोवै तू बावरी चाला जात बसंत ॥

(४)

कुंडलिया

माया की चक्की चलै पीसि गया संसार ॥
पीसि गया संसार बचै ना लाख बचावै ।
दोऊ पट के बीच कोऊ ना साबित जावै ॥
काम क्रोध मद लोभ चक्की के पीसनहारे ।
तिरगुन डारै झोंक[१] पकरि कै सबै निकारे ॥
दुरमति बड़ी सयानि सानि कै रोटी पोवै ।
करम तवा मैं धारि सेंकि कै साबित होवै ॥
तृस्ना बड़ी छिनारि जाइ उन सब घर घाला ।
काल बड़ा बरियार किया उन एक निवाला ॥
पलटू हरि के भजन बिनु कोऊ न उतरै पार ।
माया की चक्की चलै पीसि गया संसार ॥

॥ ध्यान ॥

कुंडलिया

कमठ दृष्टि जो लावई सो ध्यानी परमान ॥
सो ध्यानी परमान सुरत से अंडा सेवै ।
आपु रहै जल माहिं सूखे मैं अंडा देवै ॥
जस पनिहारी कलस भरे मारग मैं आवै ।
कर छोड़े मुख बचन चित्त कलसा मैं लावै ॥
फनि मनि धरै उतारि आप चरने को जावै ।
वह गाफिल ना पड़ै सुरत मनि माहिं रहावै ॥
पलटू सब कारज करै सुरत रहै अलगान ।
कमठ दृष्टि जो लावई सो ध्यानी परमान ॥

(१) मुट्ठी मुट्ठी अनाज जो चक्की में डालते हैं।

॥ विरह ॥

जेकरे अँगने नौरँगिया, सो कैसे सोवै हो।
लहर लहर बहु होय, सबद सुनि रोवै हो ॥१॥
जेकर पिय परदेस, नींद नहिं आवै हो।
चौंकि चौंकि उठै जागि, सेज नहिं भावै हो ॥२॥
रैन दिवस मारै बान, पपीहा बोलै हो।
पिय पिय लावै सोर, सवति होइ डोलै हो ॥३॥
बिरहिनि रहै अकेल, सो कैसे कै जीवै हो।
जेकरे अमी कै चाह, जहर कस पीवै हो ॥४॥
अभरन देहु बहाय, बसन धै फारौ हो।
पिय बिनु कौन सिंगार, सीस दै मारौ हो ॥५॥
भूख न लागै नींद, बिरह हिये करकै हो।
माँग सेंदुर मसि पोछ[1], नैन जल ढरकै हो ॥६॥
का पर[2] करै सिंगार, सो काहि दिखावै हो।
जेकर पिय परदेस, सो काहि रिझावै हो ॥७॥
रहै चरन चित लाइ, सोई धन आगर हो।
पलटुदास के सब्द, बिरह के सागर हो ॥८॥

॥ प्रेम ॥

(१)

गाँठि परी पिय बोलै न हम से ॥ टेक ॥
निसि दिन जागौं मैं पिया की सेजिया।
नैना अलसाने निकरि गे घर से ॥ १ ॥
जो मैं जनतिऊँ पिय रिसियैहैं।
काहे को प्रीति लगौतिउँ अस ठग से ॥२॥

(१) माँग का सेंदुर और आँख का काजल दोनों पोछ डाले जायँ। (२) किस के लिये।

अपने पिया को मैं बेगि मनैहौं ।
सो तकसीर होत प्रभु जन से ॥३॥
सुनि मृदु वचन पिया मुसुकाने ।
पलटूदास पिय मिले बड़े तप से ॥४॥

(२)

प्रेम बान जोगी मारल हो, कसकै हिया मोर ॥टेक॥
जोगिया कै लालि लालि अँखियाँ हो, जस कँवल कै फूल ।
हमरी सुरुख चुनरिया हो, दूनों भये तूल[१] ॥१॥
जोगिया कै लेउँ मिर्गछलवा हो, आपन पट चीर ।
दूनौं कै सियब गुदरिया हो, होइ जावै फकीर ॥२॥
गगना मैं सिंगिया बजाइन्हि हो, ताकिन्हि मोरी ओर ।
चितवन मैं मन हरि लियो हो, जोगिया बड़ चोर ॥३॥
गंग जमुन के बिचवाँ हो, बहै झिरहिर नीर ।
तेहि ठैयाँ जोरल सनेहिया हो, हरि लै गयो पीर ॥४॥
जोगिया अमर मरै नहिं हो, पुजवल मोरो आस ।
करम लिखा बर पावल हो, गावै पलटूदास ॥५॥

(३)

कुंडलिया

जहाँ तनिक जल बीछुड़ै छोड़ि देत है प्रान ॥
छोड़ि देत है प्रान जहाँ जल से बिलगावै ।
देइ दूध में डारि रहै ना प्रान गँवावै ॥
जा को वही अहार ताहि को का लै दीजै ।
रहै ना कोटि उपाय और सुख नाना कीजै ॥

(१) तुल्य=बराबर ।

यह लीजै दृष्टान्त सकै सो लेइ बिचारी।
ऐसो करै सनेह ताहि की मैं बलिहारी॥
पलटू ऐसी प्रीति करु जल औ मीन समान।
जहाँ तनिक जल बीछुड़ै छोड़ि देत है प्रान॥

(४)
कुंडलिया

मेरे तन तन लग गई पिय की मीठी बोल॥
पिय की मीठी बोल सुनत मैं भई दिवानी।
भँवर गुफा के बीच उठत है सोहं बानी॥
देखा पिय का रूप रूप मैं जाय समानी।
जब से भया मिलाप मिले पर ना अलगानी॥
प्रीति पुरानी रही लिया हमने पहिचानी।
मिली जोति मैं जोति सुहागिन सुरति समानी॥
पलटू सबद के सुनत ही घूँघट डारा खोल।
मेरे तन तन लग गई पिय की मीठी बोल॥

(५)
कुंडलिया

मगन भई मेरी माइजी जब से पाया कन्थ॥
जब से पाया कन्थ पन्थ सतगुरु बतलाया।
सतगुरु बड़े दयाल करी उन मो पर दाया॥
स्वस्ता[1] मन मैं आइ छुटी मेरी दुचिताई।
सोऊँ कन्थ के साथ अंग से अंग लगाई॥
अभ्यन्तर[2] जागी प्रीत निरन्तर कन्थ से लागी।
दरस परस के करत जगत की भ्रमना भागी॥
पलटू सतगुरु सब्द सुनि हृदय खुला है ग्रन्थ।
मगन भई मेरी माइजी जब से पाया कन्थ॥

---

(१) शान्ति। (२) अंतर मैं।

(६)

कुंडलिया

सोई सती सराहिये जरै पिया के साथ ॥
जरै पिया के साथ सोई है नारि सयानी।
रहै चरन चित लाय एक से और न जानी ॥
जगत करै उपहास पिया का संग न छोड़ै।
प्रेम की सेज बिछाय मेहर की चादर ओढ़ै ॥
ऐसी रहनी रहै तजै जो भोग बिलासा।
मारै भूख पियास याद सँग चलती स्वासा ॥
रैन दिवस बेहोस पिया के रँग मैं राती।
तन की सुधि है नहीं पिया सँग बोलत जाती ॥
पलटू गुरु परसाद तें किया पिया को हाथ[1]।
सोई सती सराहिये जरै पिया के साथ ॥

(७)

कुंडलिया

आठ पहर निरखत रहै जैसे चन्द चकोर ॥
जैसे चन्द चकोर पलक से टारत नाहीं।
चुगै बिरह से आग रहै मन चन्दै माहीं ॥
फिरै जेही दिसि चन्द तेही दिसि को मुख फेरै।
चन्दा जाय छिपाय आग के भीतर हेरै ॥
मधुकर तजै न पदम[2] जान से जाय बँधावै।
दीपक में ज्यों पतंग प्रेम से प्रान गँवावै ॥
पलटू ऐसी प्रीति कर परधन चाहै चोर।
आठ पहर निरखत रहै जैसे चन्द चकोर ॥

(१) बस में। (२) कँवल।

(८)

कुंडलिया

सीस उतारै हाथ से सहज आसिकी नाहिं
सहज आसिकी नाहिं खाँड़ खाने की नाहीं
झूठ आसिकी करै मुलुक मैं जूती खाही
जीते जी मरि जाय करै ना तन की आसा
आसिक को दिन राति रहै सूली पर बासा
मान बड़ाई खोय नींद भरि नाहीं सोना
तिल भरि रक्त न माँस नहीं आसिक को रोना
पलटू बड़े बेकूफ वे आसिक होने जाहिं
सीस उतारै हाथ से सहज आसिकी नाहिं

(९)

झूलना

साहिब के दास कहाय यारो,
जगत की आस न राखिये जी।
समरथ स्वामी को जब पाया,
जगत से दीन न भाखिये जी॥
साहिब के घर मैं कौन कमी,
किस बात को अंते आखिये जी।
पलटू जो दुख सुख लाख परै,
वहि नाम सुधा रस चाखिये जी॥

(१०)

झूलना

पहिले संसार से तोरि आवै,
तब बात पिया की पूछिये जी।

तरवार दोय है म्यान एकै,
किस भाँति से वा मैं कीजिये जी ॥
मीठे प्याले को दूर करौ,
कडु प्रेम पियाला पीजिये जी ।
पलटू जब सीस उतारि धरै,
तब राह पिया की लीजिये जी ॥

॥ सूरमा ॥

समुझि बूझि रन चढ़ना साधो, खूब लड़ाई लड़ना है ॥टेक॥
दम दम कदम परै आगे को, पीछे नाहिं पछरना है ।
तिल तिल घाव लगै जो तन मैं, खेत सेती क्या टरना है ॥१॥
सबद खैंचि समसेर[1] जेर करि, उन पाँचो को धरना है ।
काम क्रोध मद लोभ कैद करि, मन कर ठौरै मरना है ॥२॥
खड़ा रहै मैदान के ऊपर, उनकी चोट संभरना है ।
आठ पहर असवार सुरत पर, गाफिल नाहीं परना है ॥३॥
सीस दिहा साहिब के ऊपर, किसकी डेर अब डेरना है ।
पलटू बाना रुंड[2] के ऊपर, अब क्या दूसर करना है ॥४॥

॥ पतिव्रता ॥

कुंडलिया

पतिबरता को लच्छन सब से रहै अधीन ॥
सब से रहै अधीन टहल वह सब की करती ।
सास ससुर औ भसुर ननद देवर से डेरती ॥
सब को पोषन करै सभन की सेज बिछावै ।
सब को लेइ सुताय, पास तब पिय के जावै ॥
सूतै पिय के पास सभन को राखै राजी ।
ऐसा भक्त जो होय ताहि की जीती बाजी ॥

(१) शब्द रूपी तलवार । (२) धड़ ।

पलटू बोलै मीठे बचन भजन मेँ है लौलीन ।
पतिबरता को लच्छन सब से रहै अधीन ॥

॥ साधु ॥

(१)

कुंडलिया

बड़ा होय तेहि पूजिये सन्तन किया बिचार ॥
सन्तन किया बिचार, ज्ञान का दीपद लीन्हा ।
देवता तैंतिस कोटि नजर मेँ सब को चीन्हा ॥
सब का खंडन किहा खोजि के तीन निकारा ।
तीनौँ मेँ दुइ सही मुक्ति का एकै द्वारा ॥
हरि को लिहा निकारि बहुर तिन मंत्र बिचारा ।
हरि हैं गुन के बीच सन्त हैं गुन से न्यारा ॥
पलटू प्रथमै सन्त जन दूजे हैं करतार ।
बड़ा होय तेहि पूजिये सन्तन किया बिचार ॥

(२)

कुंडलिया

सीतल चन्दन चन्द्रमा तैसे सीतल सन्त ॥
तैसे सीतल सन्त जगत की ताप बुझावैं ।
जो कोइ आवै जरत मधुर मुख बचन सुनावैं ॥
धीरज सील सुभाव छिमा ना जात बखानी ।
कोमल अति मृदु बैन बज्र को करते पानी ॥
रहन चलन मुसकान ज्ञान को सुगँधि लगावैं ।
तीन ताप मिटि जाय संत के दरसन पावै ॥
पलटू ज्वाला उदर की रहै न मिटै तुरन्त ।
सीतल चन्दन चन्द्रमा तैसे सीतल सन्त ॥

(३)

कुंडलिया

संत सासना सहत हैं जैसे सहत कपास ॥
जैसे सहत कपास नाय चरखा में ओटै ।
रूई धरि जब तुमै हाथ से दोउ निमोटै[1] ॥
रोम रोम अलगाय पकरि के धुनिया धूनी ।
पिउनी[2] नँह[3] दै काति सूत ले जुलहा बूनी ॥
धोबी भट्ठी पर धरी कुन्दीगर मुँगरी मारी ।
दरजी टुक टुक[4] फारि जोरि के किया तयारी ॥
पर-स्वारथ के कारने दुख सहै पलटूदास ।
संत सासना सहत हैं जैसे सहत कपास ॥

(४)

झूलना

सील सनेह सीतल बचन,
यही संतन की रीति है जी ।
सुनत बात के जुड़ाय जावै,
सब से करते वे प्रीति हैं जी ॥
चितवनि चलनि मुसकानि नवनि,
नहिं राग द्वेष हार जीत है जी ।
पलटू छिमा संतोष सरल,
तिन कै गावै स्रुति नीति[5] है जी ॥

(५)

झूलना

पूरब पुन्न भये परगट, सतसंगति के बीच परी ।
आनँद भये जब संत मिले, वही सुभ दिन वहि सूभ घरी ॥

(१) नोचै । (२) रुई की मोटी बत्ती जिस में से सूत निकालते हैं । (३) नाखून ।
(४) टुकड़े टुकड़े । (५) एक लिपि में "नेत" है ।

दरसन करत त्रय ताप मिटे, बिन कौडी दाम मैं जाय तरी।
पलटू आवागवन छूटा, जब चरनन की रज सीस धरी॥

॥ दुष्ट ॥
कुंडलिया

पर दुख कारन दुख सहै सन असंत है एक॥
सन असंत है एक काट के जल मैं सारै।
कूँचै खैंचै खाल उपर से मुँगरा मारै॥
तेकर बटि के भाँजि भाँजि कै बरतै रसरा।
नर को बाँधै मुसुक बाँधते गउ औ बछरा॥
अमरजाल फिर होय बझावै जलचर[1] जाई।
खग मृग जीवा जंतु तेही मैं बहुत बझाई॥
जिव दे जिव संतावते पलटू उनकी टेक।
पर दुख कारन दुख सहै सन असंत है एक॥

॥ ज्ञान ॥
(१)
कुंडलिया

पिय को खोजन मैं चली आपुइ गई हिराय॥
आपुइ गई हिराय कवन अब कहै सँदेसा।
जेकर पिय मैं ध्यान भई वह पिय के भेसा॥
आगि माहिं जो परै सोऊ अगनी ह्वै जावै।
भृंगी कीट को भैंटि आपु सम लेइ बनावै॥
सरिता बहि के गई सिंधु मैं रही समाई।
सिव सक्ती के मिले नहीं फिर सक्ती आई॥
पलटू दिवाल कहकहा[2] मत कोउ झाँकन जाय।
पिय को खोजन मैं चली आपुइ गई हिराय॥

(१) जल के जीव। (२) एक दीवार कहानी की जिसका होना चीन देश में मशहूर है जिस पर चढ़ कर दूसरी ओर झाँकने से परिस्तान दीख पड़ता है और ऐसा हर्ष होता है कि हँसी के मारे देखनेवाला बेइख्तियार होकर उधर कूद कर गायब हो जाता है।

(२)

कुडलिया

टेढ़ सोभ मुँह आपना ऐना टेढ़ा नाहिं ॥
ऐना टेढ़ा नाहिं टेढ को टेढ़ै सूझै ।
जो कोइ देखै सोभ ताहि को सोभै बूझै ॥
जा को कछु नाहिं भेद भावना अपनी दरसै ।
जा को जैसी प्रीति सुरत सो तैसी परसै ॥
दुर्जन के दुर्बुद्धि पाप से अपने जरते ।
सज्जन के है सुमति सुमति से अपने तरते ॥
पलटू ऐना संत हैं सब देखै तेहि माहिं ।
टेढ़ा सोभ मुँह आपना ऐना टेढा नाहिं ॥

(३)

अरिल

पहिले हो वैराग भक्ति तब कीजिये ।
सतसंगति के जोग ज्ञान तब लीजिये ॥
ऐसे उपजै ज्ञान भक्ति को पाइ कै ।
अरे हाँ पलटू उपरै लीजै मारि ठीक ठहराइ कै ॥

(४)

कहिवे से क्या भया भाई, जब ज्ञान आपु से होइ ॥टेक॥
अललपच्छ को चेटुका,[१] वा को कौन करै उपदेस ।
उलटि मिलै परिवार मेँ, वा से कौन कहै संदेस ॥१॥
ज्यौँ सिसु[१] होत मराल[२] के, वा को कौन सिखावै ज्ञान।
नीर कहै अलगाइ कै, वह छीर करतु है पान ॥२॥
सिंह के बच्चा गिरि पस्यो, वह खेलत तुरत सिकार ।
ता को कौन सिखावई, वो हस्ती डारत मार ॥३॥

---

(१) बच्चा । (२) हंस ।

संत को कौन सिखावता, उन्ह अनुभव भा परकास।
सिखई बुधि केहि काम की, जो हृदय न पलटूदास ॥४॥

॥ सतसग ॥

(१)

कुंडलिया

पारस के परसंग से लोहा महँग बिकान ॥
लोहा महँग बिकान छुए से कीमत निकरी।
चदन के परसंग चँदन भई बन की लकरी ॥
जैसे तिल का तेल फूल सँग महँग बिकाई।
सतसंगति मैं पड़ा संत भा सदन कसाई ॥
गंगा मैं है सुभगंग मिली जो नारा सोती।
सीप बीच जो पड़े बूंद सो होवै मोती ॥
पलटू हरि के नाम से गनिका चढ़ी बिमान।
पारस के परसंग से लोहा महँग बिकान ॥

(२)

रेखता

बिना सतसंग ना कथा हरिनाम की,
बिना हरिनाम ना मोह भागै।
मोह भागे बिना मुक्ति ना मिलैगी,
मुक्ति बिनु नाहिं अनुराग लागै ॥
बिना अनुराग के भक्ति न होयगी,
भक्ति बिनु प्रेम उर नाहिं जागै।
प्रेम बिनु राम ना राम बिनु संत ना,
पलटू सतसंग बरदान माँगै ॥

॥ गुप्त ॥

कुंडलिया

जिन जिन पाया वस्तु को तिन तिन चले छिपाय ॥
तिन तिन चले छिपाय प्रगट मैं होय हरक्कत ।
भीड़ भाड़ से डेरै भीड़ मैं नहीं बरक्कत ॥
धनी भया जब आप मिली हीरा की खानी ।
ठग है सब ससार जुगत से चलै अपानी ॥
जो है रहते गुप्त सदा वह मुक्ति मैं रहते ।
उन पर आवै खेद प्रगट जो सब से कहते ॥
पलटू कहिये उसी से जो तन मन दै लै जाय ।
जिन जिन पाया वस्तु को तिन तिन चले छिपाय ॥

॥ वैराग ॥

(१)

अरिल

आठ पहर की मार बिना तरवार की ।
चूके सो नहिं ठाँव लड़ाई धार की ॥
उस ही से यह बनै सिपाही लाग का ।
अरे हाँ पलटू पड़ै दाग पर दाग पथ वैराग का ॥

(२)

काम क्रोध बसि किहा नींद औ भूख को ।
लोभ मोह बसि किहा दुक्ख औ सुक्ख को ॥
पल मैं कोस हजार जाय यह डोलता ।
अरे हाँ पलटू वह ना लागा हाथ जैान यह बोलता ॥

॥ उपदेश ॥

(१)

पड़ा रहु संत के द्वारे, बनत बनत बनि जाय ॥ टेक ॥
तन मन धन सब अरपन करिके, धके धनी के खाय ॥१॥

लिखा रहा कुछ आन कर्म मैं दीन्हा आनै ।
जानौं महीं अकेल कोऊ दूसर नहिं जानै ॥
पाछे भा फिर चेत देय पर नाहीं लीन्हा ।
आखिर बड़े की चूक जोई निकसा सोई कीन्हा ॥
पलटू मैं पापी बड़ा भूल गया भगवान ।
दूसर पलटू इक रहा भक्ति दई तेहि जान ॥

(२)
कुंडलिया

पतित-पावन बाना धस्यो तुमहिं परी है लाज ॥
तुमहिं परी है लाज बात यह हम ने बूझी ।
जब तुम बाना धस्यो नाहिं तब तुम कहँ सूझी ॥
अब तो तारे बनै नहीं तो बाना उतारो ।
फिर काहे को बड़ा बाच जो कहिके हारो ॥
आगहिं तुम गये चूक दोष नहिं दीजै मेरो ।
तुम यह जानत नाहिं पतित होइहैं बहुतेरो ॥
पलटू मैं तो पतित हौं कियो असुभ सब काज ।
पतित-पावन बाना धस्यो तुमहिं परी है लाज ॥

॥ दया ॥
(१)
अरिल

माता बालक कहँ राखती प्रान है ।
फनि मनि धरै उतारि ओही पर ध्यान है ॥
माली रच्छा करै सींचता पेड ज्यौं ।
अरे हाँ पलटू भक्त संग भगवान गऊ औ बच्छ त्यौं ॥

(२)
अरिल

कौन सकस करि जाय नाहिं कछु खबर है ।
बीच मैं सब के देइ बड़ा वह जबर है ॥

हरि धरि मेरो रूप करै सब काम है ।
अरे हाँ पलटू बीच मेंहै इक नाम मोर बदनाम है ॥

॥ निन्दक ॥

(१)

कुंडलिया

निन्दक जीवै जुगन जुग काम हमारा होय ॥
काम हमारा होय बिना कौडी कै चाकर ।
कमर बाँधि के फिरै करै तिहुँ लोक उजागर[१] ॥
उसे हमारी सोच पलक भर नाहिं बिसारी ।
लगो रहै दिन रात प्रेम से देता गारी ॥
भक्त कँहै दृढ़ करै जगत को भरम छुडावै ।
निन्दक गुरू हमार नाम से वही मिलावै ॥
सुनि के निन्दक मरि गया पलटू दिया है रोय ।
निन्दक जीवै जुगन जुग काम हमारा होय ॥

(२)

रेखता

देखि के निंदकहिं करौं परनाम मैं,
धन्य महराज तुम भक्ति धोया ।
किहा निस्तार तुम आइ संसार मैं,
भक्त कै मैल बिनु दाम खोया ॥
भयो परसिद्ध परताप से आप के,
सकल संसार तुम सुजस बोया ।
दास पलटू कहै निंदक के मुए से,
भया अकाज मैं बहुत रोया ॥

---

(१) रोशन, मशहूर ।

॥ तीर्थ व्रत ॥

अरिल

तीरथ व्रत में फिरे बहुत चित लाइ कै।
जल पखान को पूजि मुए पछिताइ कै॥
बस्तु न बूझी जाइ अपाने हाथ मैं।
अरे हाँ पलटू जो कुछ मिलै सो मिलै सत के साथ मैं॥

॥ मंगल ॥

जनमिउँ दुख की राति, परिउँ भौसागर हो।
सोइ गइउँ भ्रम माहिं, कुमति कै आगर हो॥ १॥
सतगुरु दिहिनि जगाइ, उठिउँ अकुलाई हो।
टूटि गइल भ्रम फंद, परम सुख पाई हो॥ २॥
पिय को दिहिनि मिलाइ, हिये मोहिं लीन्हा हो।
अपनी दासी जानि, परम पद दीन्हा हो॥ ३॥
सत्त सुकृति कै घैला[1], प्रेम कै लेजुर[2] हो।
पनियाँ भरैँ डकोरि[3], माँग भरि सेँदुर हो॥ ४॥
सासु मोरि सुतै गजओबरि[4], ननद मोरि अँगना हो।
हम धन सूतैं धवराहर[5], पिय सँग जगना हो॥ ५॥
झिरिहिरि बहै बयारि, अमी रस ढरकै हो।
बरमी[6] नौरँगिया कै डारि, चंदन गछ मरकै[6] हो॥ ६॥
तेहि चढ़ि बोलै हंस, सबद सुनि बाउर हो।
मंगल पलटूदास, जगति कै नाउर[7] हो॥ ७॥

---

(१) घड़ा। (२) रस्सी। (३) पानी को झकझोर कर जिसमें खर कतवार हट जाय। (४) इतना बड़ा कमरा जिस के दरवाजे में से हाथी चला जाय। (५) ऊपर का कोठा। (६) झुकना। (७) नाऊ जिस के शुभ अवसरों पर मंगलाचार गाने की चाल कहीं कहीं है।

॥ मिश्रित ॥

(१)

कुंडलिया

बार बार विनती करै, पलटूदास न लेइ ॥
पलटू दास न लेइ रहै कर जोरे ठाढ़ी ।
सरनागति मैं रहौं सरन बिनु लागै गाढ़ी[1] ॥
गोड़ दाबि मैं देउँ चरन धै सेवा करिहौं ।
चौका देइहौं लीपि बहुरि मैं पानी भरिहौं ॥
पैंड़ा देउँ बुहारि सबन कै जूठ उठावौं ।
जनि दुरियावहु मोहिं रहै मैं इहवाँ पावौं ॥
मुक्ति रहै द्वारे खड़ी लट से झाड़ू देइ ।
बार बार विनती करै पलटूदास न लेइ ॥

(२)

कुंडलिया

बनिया पूरा सोई है जो तौलै सतनाम ॥
जो तौलै सतनाम छिमा का टाट बिछावै ।
प्रेम तराजू करै बाट बिस्वास बनावै ॥
बिवेक की करै दुकान ज्ञान का लेना देना ।
गादी है संतोष नाम का मारै टैना ॥
लादै उलदै भजन बचन फिर मीठे बोलै ।
कुंजी लावै सुरत सबद का ताला खोलै ॥
पलटू जिसकी बनि परी उसी से मेरा काम ।
बनिया पूरा सोई है जो तौलै सतनाम ॥

---

(१) गाढ़=दुख ।

(३)
कुंडलिया

चिन्ता की लगी आग है जरै सकल संसार ॥
जरै सकल संसार जरत निरपति दो देखा ।
बादसाह उमराव जरत हैं सैयद सेखा ॥
सुर नर मुनि सब जरैं जती जोगी सन्यासी ।
पंडित ज्ञानी चतुर जरैं कनफटा उदासी ॥
जंगम सेवरा जरैं जरैं नागा वैरागी ।
कोउ न बचते भागि दुपहरी लागी आगी ॥
पलटू बचते संत जन जिन किया नाम आधार ॥
चिन्ता की लगी आग है जरै सकल संसार ॥

(४)
अरिल

सब भैंड़ी की राह चले हैं जूटि[१] के ।
आसिक बीर अकेल चला है फूटि के ॥
उलटि के खेलै खेल भया मन मगन मैं ।
अरे हाँ पलटू छुटा भुइँचपा जाय एक ठो गगन मैं ॥

(५)
अरिल

खाला[२] के घर नाहिं भक्ति है नाम की ।
दाल भात है नाहिं खाये के काम की ॥
साहिब का घर दूर सहज ना जानिये ।
अरे हाँ पलटू गिरै तो चकनाचूर बचन को मानिये ॥

(६)
अरिल

माया ठगनी बड़ी ठगे यह जात है ।
बचै न या से कोऊ लगी दिन रात है ॥
कौड़ी नाहीं संग करोरनि जोरि कै ।
अरे हाँ पलटू गये हैं राजा रंक लँगोटी छोरि कै ॥

(१) झुंड के। (२) मौसी।

तुलसी साहिब (हाथरस वाले)

—— ※※※ ——

[संक्षिप्त जीवन चरित्र के लिये देखो संतबानी संग्रह भाग १ पृष्ठ २२६]

॥ गुरुदेव ॥

(१)

कोइ सतगुरु देव री बताइ, चरन गहौं ताहि के ॥टेक॥
चहुँ दिसि ढूँढ़ि फिरी कोइ भेदी, पूछत हौं गुहराय ।
उन से कहौं बिथा सब अपनी, केहि बिधि जीव जुड़ाय ॥१
जो कोइ सखी सुहागिनि होवै, कहै तन तपन बुझाय ।
पिउ की खोलि खबर कहै मो से, मरौं री बिकल करि हाय ॥२
जो न्यामत दुनिया दौलत की, सो सब देउँ बहाय ।
बारम्बार वारि तन डारौं, यह कहा मोल बिकाय ॥३॥
बिन स्वामी सिंगार सुहागिनि, लानत तोबा ताय ।
पिय बिन सेज बिछावै ऐसी, नारि मरै बिष खाय ॥४॥
सतगुरु बिरहिनि बान कलेजे, रोवै और चिल्लाय ।
हाय हाय हिय मैं निसि बासर, हर दम पीर पिराय ॥५॥
यहि झुंड मैं कोइ पाक पियारी, पिया दुलारी आहि[१] ।
मैं दुखिया हौं दर्द दिवानी, प्रीतम दरस लखाय ॥६॥
तुलसी प्यास बुझै प्यारे से, चढ़ि घर अधर समाय ।
किरपावंत संत समझावैं, और न लगै उपाय ॥७॥

(२)

जिनके हिरदे गुरु संत नहीं ।
उन नर औतार लिया न लिया ॥ टेक ॥
सूरत बिमल बिकल नहिं जा के ।
बहु बक ज्ञान किया न किया ॥१॥

---

(१) है।

करम काल बस उद्र[१] निहारा।
जग विच मूढ़ जिया न जिया ॥ २ ॥
अगम राह रस रीति न जानी।
बहु सतसंग किया न किया ॥ ३ ॥
नाम अमल घट घोँटि न पीया।
अमल अनेक पिया न पिया ॥ ४ ॥
मोटे मात जात जिंदगी मैं।
सिर धरि पैर छुवा न छुवा ॥ ५ ॥
तुलसीदास साध नहिं चीन्हा।
तन मन धन न दिया न दिया ॥ ६ ॥

(३)

अरिल

संत मता है सार और सब जाल पसारा।
परमहंस जग भेष बहे सब मन की लारा ॥
संत बिना नहिं घाट बाट एको नहिं पावै।
अरे हाँरे तुलसी भटकि भटकि भ्रम खान संत बिन भव मैं आवै।

(४)

अरिल

भव जल अगम अथाह थाह नहिं मिलै ठिकाना।
सतगुरु केवट मिलै पार घर अपना जाना ॥
जग रचना जंजाल जीव माया ने घेरा।
अरे हाँरे तुलसी लोभ मोह बस परे करैं चौरासी फेरा ॥

॥ चितावनी ॥

(१)

रेखता

जगत मद मान मैं माता। खुदी का खौफ नहिं लाता ॥
कजा सिर पर खड़ी द्वारे। फिरिस्ते तीर तकि मारे ॥१॥

(१) पेट।

कमानो काल के हाथा। करै जम जीव की घाता ॥
पड़ा मगरूर[1] क्या सोवै। बहुर फिर सीस धरि रोवै ॥२॥
अगर योँ सोच अपने मैं। गये दिन बीत सुपने मैं ॥
बदन मही पवन पानी। मलामत[2] हाड़ मिल सानी ॥३॥
गंदगी बीच अंदर मैं। बदन बहुधोय मंदर मैं ॥
अरे नित क्या अन्हाता है। मैल मन का न जाता है ॥४॥
करेले नीम की भाई। कभी जावै न कड़वाई ॥
अरे दुरगंध का भाँड़ा। निरख कोइ संत ने छाड़ा ॥५॥
खलक दो दिन तमासा योँ। परख पानी बतासा ज्यौं ॥
अगर योँ जान जिंदगानी। अबर ओला घुलै पानी ॥६॥
अबस[3] तन योँ बिनस्ता है। इधर घर का न रस्ता है ॥
मिर्ग की नाभि कस्तूरी। भटक ढूँढै जो बन मूरी ॥७॥
तेरा महबूब तेरे मैं। वस्तु गइ ढूँढ डेरे मैं ॥
सगुनिया संत से पावै। आप मैं आप दरसावै ॥८॥
करै सतसग मन टूटै। मलामत बुद्धि की छूटै ॥
गुरू मिल मैल कूँ काढ़ै। ज्ञान की उग्रता[4] बाढ़ै ॥९॥
सुरत जब सीलता पावै। गगन की राह चढ जावै ॥
होय पति प्रीति निरधारा। मिलै तुलसी पदम प्यारा ॥१०॥

(७)

क्या सोवत गाफिल चेत, सिर पर काल खड़ा ॥टेक॥
जोर जुलम की रीति विचारी, करि माया से हेत।
जम की जबर खबर नहिं जानी, बाँधि नरक दुख देत ॥१॥
बिनसै बदन अगिन बिच जावै, खीर खाँड रस लेत।
फिरि फिरि काल कमान चढ़ावै, मार लेत खुल खेत ॥२॥

(१) अहंकारी। (२) गन्दगी। (३) व्यर्थ। (४) तेज़ी।

करम काल वस उद्र[१] निहारा।
जग विच मूढ़ जिया न जिया ॥ २ ॥
अगम राह रस रीति न जानी।
बहु सतसंग किया न किया ॥ ३ ॥
नाम अमल घट घोंटि न पीया।
अमल अनेक पिया न पिया ॥ ४ ॥
मोटे मात जात जिंदगी में।
सिर धरि पैर छुवा न छुवा ॥ ५ ॥
तुलसीदास साध नहिं चीन्हा।
तन मन धन न दिया न दिया ॥ ६ ॥

(३)

अरिल

संत मता है सार और सब जाल पसारा।
परमहंस जग भेष वहे सब मन की लारा ॥
संत बिना नहिं घाट बाट एको नहिं पावै।
अरे हाँरे तुलसी भटकि भटकि भ्रम खान संत बिन भव मैं

(४)

अरिल

भव जल अगम अथाह थाह नहिं मिलै ठि
सतगुरु केवट मिलै पार घर अपना जाना ॥
जग रचना जंजाल जीव माया ने घेरा।
अरे हाँरे तुलसी लोभ मोह बस परे करैं

॥ चितावनी ॥

(१)

रेखता

जगत मद मान में माता। खुदी का
कजा सिर पर खड़ी द्वारे। फिरिस्ते तो

(१) पेट।

बिन सतगुरु व्याकुल हिये, जियरा धरत न धीर।
पीर पिया बिन को हरै, तुलसी गगन गंभीर ।८॥

(७)

व्याकुल बिरह दिवानी, झड़ै नित नैनन पानी । टेक॥
हर दम पीर पिया की खटकै, सुधि बुधि बदन हिरानी ॥१॥
होस हवास नहीं कुछ तन मैं, बेदम जीव भुलानी ॥२॥
बहु तरंग चित चेतन नाहीं, मन मुरदे की बानी ॥३॥
नाड़ी वैद बिथा नहिं जानै, क्यों औषद दे आनी ॥४॥
हिये मैं दाग जिगर के अंदर, क्या कहि दरद बखानी ॥५॥
सतगुरु बैद बिथा पहिचानैं, बूटी है उनकी जानी ॥६॥
तुलसी यह रोग रोगिया बूझै, जिस को पीर पिरानी ॥७॥

(८)

प्रीतम पीर पिरानी, दरद कोइ बिरले जानी ॥ टेक ॥
डसत भुवंग चढ़त सननननन, जहर लहर लहरानी ॥१॥
घनन घनन घन्नाटी आवै, भावै अन्न न पानी ॥२॥
भँवर चक्र की उठत घुमेरैं, फिरै दसो दिसि आनी ॥३॥
अंदर हाल बिहाल हलावत, दुरगम प्रीति निभानी ॥४॥
आसिक इसक इसक आसिक से, करना मौत निसानी ॥५॥
मुरदा है करि खाक मिली अब, जब पद अमर लिखानी ॥६॥
पिय को रोग सोग तन मन मैं, सतगुरु सुधि अलगानी ॥७॥
तुलसी यह मारग मुस्किल का, धड़ बिन सीस बिकानी ॥८॥

॥ विनय ॥

कुंडलिया

बार बार बिनती करूँ सतगुरु चरन निवास ॥
सतगुरु चरन निवास बास मोहिं दीन्ह लखाई।
नित नित करूँ बिलास पास घर अपने आई ॥

मैं अति पत मत हीन दीन देखा मोहिं साईं ।
लीन्हा अंग लगाय कहूँ अस कौन बड़ाई ॥
तुलसी मैं अति हीन हूँ दीन्हा अगम अवास ।
बार बार बिनती करूँ सतगुरु चरन निवास ॥

॥ भेद ॥

(१)

रेख़ता

पैठ मन पैठ दरियाव दर आप में ।
कँवल बिच झाज[१] में कमठ राजै ॥
होत जहँ सोर घनघोर घट में लखै ॥
निरख मन मौज अनहद्द बाजै ॥
गगन की गिरा पर सुरत से सैल कर ।
त्रिकुटी तिल तोड़ घर अगम साजै ॥
दास तुलसी कहै पछिम के द्वार पर ।
साहिब घर अद्भुत बिराजै ॥

(२)

कुंडलिया

सुत चढ़ि गई अकास में सोर भया ब्रह्मंड ॥
सोर भया ब्रह्मंड अंड में धधक चढ़ाई ।
जब फूटा असमान गगन में सहज समाई ॥
सुन्न सहर के बीच ब्रह्म से भया मिलापा ।
परमातम पद लेख देख कर भया हुलासा ॥
तुलसी गति मति लखि पड़ी निरखि लखा सब अंड ।
सुत चढ़ि गई अकास में सोर भया ब्रह्मंड ॥

(१) जहाज ।

॥ उपदेश ॥

होली

कैसे जल भरत गगरिया, तेरी भींजी न नेक अँगुरिया ॥टेक
सतगुरु घाट गई बिन जाने, पैरी न चीन्ह पकरिया ।
सागर थाह अथाह अगम को, कोइ भर नहिं जात अनरिया ॥१॥
सासु ननद के अनँद पिया मोरे, डारेंगे फोड़ गगरिया ।
रीती[1] जाति फिरी बिन पानी, मानत नाहिं बहुरिया ॥२॥
सासू ससुर जेठ जुलमाई, साईं ने सील सँवरिया ।
बीतत दिवस रही अब रजनी, खुलत न प्रेम किवरिया ॥३॥
तुलसी ताव दाव यहि औसर, पिय सँग पैठ नगरिया ।
सूरति साज सजो नभ मंदर, अंदर बीच डगरिया ॥४॥

॥ मूर्त्ति पूजा ॥

(१)

सवैया

नर को यही ठाठ बैराट बनो ।
अस स्रीमत[2] में कह्यो व्यास बखाना ॥ १ ॥
दुतिया असकध में बूझ बिचारि ।
नहीं कह्यो पूजन काठ पषाना ॥ २ ॥
गीता में भाखि कही भगवान ।
सो धरम तजा जिन मोहिं पिछाना ॥ ३ ॥
पूरन ब्रह्म बेदांत कहे ।
तुही आप अपनपौ आप भुलाना ॥ ४ ॥
पाहन पूजत जन्म गयो ।
कछु सूझि परी नहिं लाभ न हाना ॥ ५ ॥
आसा जाइ बसे जड़ में ।
जब अंत समय जेहि माहिं समाना ॥ ६ ॥

---

(१) खाली । (२) भागवत ।

मैं अति पत मत हीन दीन देखा मोहिं साईं।
लीन्हा अंग लगाय कहूँ अस कौन बड़ाई॥
तुलसी मैं अति हीन हूँ दीन्हा अगम अवास।
बार बार बिनती करूँ सतगुरु चरन निवास॥

॥ भेद ॥

(१)

रेखता

पैठ मन पैठ दरियाव दर आप में।
कँवल बिच भाज[१] में कमठ राजै॥
होत जहँ सोर घनघोर घट में लखै।
निरख मन मौज अनहद्द बाजै॥
गगन की गिरा पर सुरत से सैल कर।
चढ़ै तिल तोड़ घर अगम साजै॥
दास तुलसी कहै पच्छिम के द्वार पर।
साहिब घर अद्‌भुत बिराजै॥

(२)

कुंडलिया

सुत चढ़ि गई अकास में सोर भया ब्रह्मंड॥
सोर भया ब्रह्मंड अंड में धधक चढ़ाई।
जब फूटा असमान गगन में सहज समाई॥
सुन्न सहर के बीच ब्रह्म से भया मिलापा।
परमातम पद लेख देख कर भया हुलासा॥
तुलसी गति मति लखि पड़ी निरखि लखा सब अंड।
सुत चढ़ि गई अकास में सोर भया ब्रह्मंड॥

---

(१) जहाज।

॥ उपदेश ॥

होली

कैसे जल भरत गगरिया, तेरी भींजी न नेक अँगुरिया ॥टेक
सतगुरु घाट गई बिन जाने, पैरी न चीन्ह पकरिया ।
सागर थाह अथाह अगम को, कोइ भर नहिं जात अनरिया ॥१॥
सासु ननद के अनँद पिया मोरे, डारैंगे फोड़ गगरिया ।
रीती[1] जाति फिरी बिन पानी, मानत नाहिं बहुरिया ॥२॥
सासू ससुर जेठ जुलमाई, साईं ने सील सँवरिया ।
बीतत दिवस रही अब रजनी, खुलत न प्रेम किवरिया ॥३॥
तुलसी ताव दाव यहि औसर, पिय सँग पैठ नगरिया ।
सूरति साज सजो नभ मंदर, अंदर बीच डगरिया ॥४॥

॥ मूर्त्ति पूजा ॥

(१)

सवैया

नर को यही ठाठ बैराट बनो ।
अस स्रीमत[2] मैं कह्यो ब्यास बखाना ॥ १ ॥
दुतिया असकंध में बूझ बिचारि ।
नहीं कह्यो पूजन काठ पपाना ॥ २ ॥
गीता में भाखि कही भगवान ।
सो धरम तजा जिन मोहिं पिछाना ॥ ३ ॥
पूरन ब्रह्म बेदांत कहे ।
तुही आप अपनपौ आप भुलाना ॥ ४ ॥
पाहन पूजत जन्म गयो ।
कछु सूझि परी नहिं लाभ न हाना ॥ ५ ॥
आसा जाइ बसे जड़ में ।
जब अंत समय जेहि माहिं समाना ॥ ६ ॥

---

(१) खाली । (२) भागवत ।

मैं अति पत मत हीन दीन देखा मोहिं साईं ।
लीन्हा अंग लगाय कहूँ अस कौन बड़ाई ॥
तुलसी मैं अति हीन हूँ दीन्हा अगम अवास ।
बार बार बिनती करूँ सतगुरु चरन निवास ॥

॥ भेद ॥

(१)

रेख़ता

पैठ मन पैठ दरियाव दर आप में ।
कँवल बिच झाज[१] में कमठ राजै ॥
होत जहँ सोर घनघोर घट में लखै ॥
निरख मन मौज अनहद्द बाजै ॥
गगन की गिरा पर सुरत से सैल कर ।
चढ़ै तिल तोड़ घर अगम साजै ॥
दास तुलसी कहै पछिम के द्वार पर ।
साहिब घर अद्भुत बिराजै ॥

(२)

कुंडलिया

सुत चढ़ि गई अकास में सोर भया ब्रह्मंड ॥
सोर भया ब्रह्मंड अंड में धधक चढ़ाई ।
जब फूटा असमान गगन में सहज समाई ॥
सुन्न सहर के बीच ब्रह्म से भया मिलापा ।
परमातम पद लेख देख कर भया हुलासा ॥
तुलसी गति मति लखि पड़ी निरखि लखा सब अंड ।
सुत चढ़ि गई अकास में सोर भया ब्रह्मंड ॥

(१) जहाज ।

॥ उपदेश ॥

होली

कैसे जल भरत गगरिया, तेरी भींजी न नेक अँगुरिया ॥टेक
सतगुरु घाट गई बिन जाने, पैरी न चीन्ह पकरिया ।
सागर थाह अथाह अगम को, कोइ भर नहिं जात अनरिया ॥१
सासु ननद के अनँद पिया मोरे, डारेंगे फोड़ गगरिया ।
रीती[1] जाति फिरी बिन पानी, मानत नाहिं वहुरिया ॥२॥
सासू ससुर जेठ जुलमाई, साईं ने सील सँवरिया ।
बीतत दिवस रही अब रजनी, खुलत न प्रेम किवरिया ॥३॥
तुलसी ताव दांव यहि औसर, पिय सँग पैठ नगरिया ।
सुरति साज सजो नभ मंदर, अंदर बीच डगरिया ॥४॥

॥ मूर्त्ति पूजा ॥

(१)

सवैया

नर को यही ठाठ वैराट बनो ।
अस स्रीमत[2] में कह्यो व्यास बखाना ॥ १ ॥
दुतिया असकंध में बूझ बिचारि ।
नहीं कह्यो पूजन काठ पषाना ॥ २ ॥
गीता में भाखि कही भगवान ।
सो धरम तजा जिन मोहिं पिछाना ॥ ३ ॥
पूरन ब्रह्म बेदांत कहे ।
तुही आप अपनपौ आप भुलाना ॥ ४ ॥
पाहन पूजत जन्म गयो ।
कछु सूझि परी नहिं लाभ न हाना ॥ ५ ॥
आसा जाइ बसे जड़ में ।
जब अंत समय जेहि माहिं समाना ॥ ६ ॥

---

(१) खाली । (२) भागवत ।

मैं अति पत मत हीन दीन देखा मोहिं साईं ।
लीन्हा अंग लगाय कहूँ अस कौन बड़ाई ॥
तुलसी मैं अति हीन हूँ दीन्हा अगम अवास ।
बार बार बिनती करूँ सतगुरु चरन निवास ॥

॥ भेद ॥

(१)

रेखता

पैठ मन पैठ दरियाव दर आप में ।
कँवल बिच भ्माज[१] में कमठ राजै ॥
होत जहँ सोर घनघोर घट में लखै ॥
निरख मन मौज अनहद्द बाजै ॥
गगन की गिरा पर सुरत से सैल कर ।
चढ़ै तिल तोड़ घर अगम साजै ॥
दास तुलसी कहै पच्छिम के द्वार पर ।
साहिब घर अद्भुत बिराजै ॥

(२)

कुंडलिया

सुत चढ़ि गई अकास में सोर भया ब्रह्मंड ॥
सोर भया ब्रह्मंड-अंड में धधक चढ़ाई ।
जब फूटा असमान गगन में सहज समाई ॥
सुन्न सहर के बीच ब्रह्म से भया मिलापा ।
परमातम पद लेख देख कर भया हुलासा ॥
तुलसी गति मति लखि पड़ी निरखि लखा सब अंड ।
सुत चढ़ि गई अकास में सोर भया ब्रह्मंड ॥

---

(१) जहाज ।

॥ उपदेश ॥

होली

कैसे जल भरत गगरिया, तेरी भींजी न नेक अँगुरिया ॥टेक
सतगुरु घाट गई बिन जाने, पैरी न चीन्ह पकरिया ।
सागर थाह अथाह अगम को, कोइ भर नहिं जात अनरिया ॥१
सासु ननद के अनँद पिया मोरे, डारैंगे फोड़ गगरिया ।
रीती[1] जाति फिरी बिन पानी, मानत नाहिं बहुरिया ॥२॥
सासू ससुर जेठ जुलमाई, साईं ने सील सँवरिया ।
बीतत दिवस रही अब रजनी, खुलत न प्रेम किवरिया ॥३॥
तुलसी ताव दाव यहि औसर, पिय सँग पैठ नगरिया ।
सूरति साज सजो नभ मंदर, अंदर बीच डगरिया ॥४॥

॥ मूर्ति पूजा ॥

(१)

सवैया

नर को यही ठाठ वैराट बनो ।
अस स्रीमत[2] में कह्यो ब्यास बखाना ॥ १ ॥
दुतिया असकंध में बूझ बिचारि ।
नहीं कह्यो पूजन काठ पषाना ॥ २ ॥
गीता में भाखि कही भगवान ।
सो धरम तजा जिन मोहिं पिछाना ॥ ३ ॥
पूरन ब्रह्म वेदांत कहे ।
तुही आप अपनपौ आप भुलाना ॥ ४ ॥
पाहन पूजत जन्म गयो ।
कछु सूझि परी नहिं लाभ न हाना ॥ ५ ॥
आसा जाइ बसे जड़ में ।
जब अंत समय जेहि माहिं समाना ॥ ६ ॥

(१) खाली । (२) भागवत ।

वेद की प्रीति की रीति करी ।
कर्म कांड रचे भव जन्म सिराना ॥ ७ ॥
यह तत ज्ञान कहै तुलसी ।
तैं पत्थर में परमेसुर जाना ॥ ८ ॥

(२)

तन के तत मंदर को देखौ जाई ।
आतम सा देव जाहि पूजौ भाई ॥
पाहन की मूरत का झूठ पसारा ।
तुलसी पूजै चेहोस जन्म विगारा ।

॥ निन्दा ॥

(१)

रेखता

निंद्रा साध संत की नित्त करै,
काला मुँह कर काल घुमावता है ॥
जुग जुग नरक की खानि पड़ै,
जम जाल जंजीर फिर पावता है ॥
तुलसी कुवास वेहाल मरै,
दर हाल का स्वाल कहावता है ॥

(२)

कवित्त

साध संत से उपाध रहत वेसवा[१] के साथ
बड़े कुटिल हैं कुपाथ चलैं पंथ ना निहारि के ॥ १ ॥
कर्मन के मैले और विषरस के पेले ।
सो ऐसे हरामखोर दोजख में परत हैं ॥ २ ॥
देखत के नीके और करनी के फीके ।
सो काढ़ि काढ़ि टीके उपद्रव को खड़े हैं ॥ ३ ॥

---

(१) कसबी ।

खोट मोट मानो आठो गाँठ के हरामी।
सो ऐसे कुटिल कामी काम राग हू मैं भरे हैं ॥ ४ ॥
देखत के ज्ञानी कूर खान को निसानी।
अधम ऐसे अभिमानी सो जानि हानि करत हैं ॥ ५ ॥
साचे संसार लार संतन से फेर फार।
तुलसी मुख परत छार[1] छली छिद्र भरे हैं ॥ ६ ॥

अरिल

इंद्री रस सुख स्वाद वाद ले जन्म बिगारा।
जिभ्या रस बस काज पेट भया बिष्टा सारा ॥
टुक जीवन के काज लाज मन मैं नहिं आवै।
अरे हाँरे तुलसी काल खड़ा सिर ऊपर घड़ी घड़ियाल बजावै ॥

॥ चितावनी ॥

कुंडलिया

जग जग कहते जुग भये जगा न एकौ बार ॥
जगा न एकौ बार सार कहो कैसे पावै।
सोवत जुग जुग भये सत बिन कौन जगावै ॥
पड़े भरम के माहिं बंद से कौन छुड़ावै।
जो कोइ कहै बिबेक ताहि की नेक न भावै ॥
तुलसी पंडित भेष से सब भूला संसार।
जग जग कहते जुग भये जगा न एकौ बार ॥

॥ बारहमासा लावनी ॥

आली असाढ़ के मास बिरह उठि बादल घहराने।
चहुँ दिस चमकै बीज बिकल पिया के बिन हैराने ॥
खबर बिन धीरज नहिं आवै।
तन मन बदन बेहाल बिपति मैं नहिं कोइ कुछ भावै ॥

---

(१) धूल।

कहूँ नहिं दिल टारुन अटकै ।
हर दम पिय की पोर टरस बिन मन मोरा भटकै ॥ १ ॥
सखि सावन के मास सोक मैं सुन्दर घबरानी ।
रिमझिम बरसै मेघ मोर दादुर की सुन बानी ॥
जिगर अन्दर जिय लहरावै ।
तड़पै तन के माहिं हाय पिय खोजै कहँ पावै ॥
रही हिये मैं पिय की रट कै । हर दम पिय० ॥ २ ॥
भर भादोँ झड़ मेघ अखंडित बरसै जल धारा ।
आवै पिय की पीर नीर नैनों बहै जस धारा ॥
सुरख सब अँखियन मैं लाली ।
मारै गोसा तानि तीर हिये ज्याैं कसकै भाली ॥
कलेजे अन्दर मैं खटकै । हर दम पिय० ॥ ३ ॥
ऋतु कुआर के मास आस कागा सँग सुध बिसरी ।
हंस सिरोमनि मूल भूल से तजि मेवा मिसरी ॥
मरम संगत बिन कहँ पाऊँ ।
बिन सतगुरु के बाट घाट घर चढि कैसे जाऊँ ॥
सुरत मन क्याैंकरके लटकै । हर दम पिय० ॥ ४ ॥
कातिक तिल के माहिं जाय सोइ सुधि बुधि दरसावै ।
अष्ट कँवल दल द्वार पार पद हद सब समझावै ॥
सरन ह्वै सतगुरु की चेली ।
मैली बुद्धि निकारि सार पावै जब लखि हेली ॥
चाँदनी हियरे मैं छिटकै । हर दम पिय० ॥ ५ ॥
अघ अघहन के मास पाप-पुन सब जब जरि जावै ।
निर्मल नीर बनाय जाय सोइ तिरबेनी न्हावै ॥

करम का भोग भरम छूटै ॥
बिन बेनी असनान पकड जम घर घर के लूटै ॥
बचै नहिं कोइ सब को पटकै । हर दम पिय० ॥ ६ ॥
पूस पुरुष की आस बास बिन नहिं जिव निस्तारा ।
सतगुरु केवल गैल गवन करि जब जावै पारा ॥
मिलै जब पिउ परसै प्यारी ।
सुन्दर सेज बिछाय पिया सँग सोवै कर यारी ॥
अरज करि प्रीतम से हटकै । हर दम पिय० ॥ ७ ॥
माघ मनोरथ प्रीति परम पद को सुधि संम्हारी ।
ऐसी है कोइ नारि जगत तजि तन मन से न्यारी ॥
सुरत की डोरी लो लावै ।
मूल मुकर[1] की राह दाव करि सहजहि चढ़ि जावै ॥
कुमति कुनबे की बुधि झटकै । हर दम पिय० ॥ ८ ॥
फागुन फरक निकारि यार सँग खेलै खुल होली ।
आस अबीर उड़ाय गुनन की भर मारै झोली ॥
अरगजा घिसि चन्दन लेपै ।
नील सिखर की राह सुरत चढि सुन्दर में चेपै[2] ॥
चरन में हित चित से गठि कै । हर दम पि० ॥ ९ ॥
चतुर सहेली चेत हेत हियरे से मन लावै ।
पल पल पाले प्रीति रीति पिया को जो रस चावै ॥
अमल करि होवै मतवारी ।
नसा नैन के माहिं बिसरि गइ सुधि बुधि सब सारी ॥
गरक[3] डोरी बाँधे बटि कै । हर दम पिय० ॥ १० ॥

(१) दर्पन । (२) चिपक जाय । (३) डूबी हुई, मतवाली ।

बुन्द वैसाख की साख सिन्ध गति सन्तन ने गाई ।
सुनि के सज्जन होय समझ करि छोड़ै चतुराई ॥
दीन दिल दुरमत को छोड़ै ।
मन मकरन्द[1] को जानि मानि तन मन को सब तोड़ै ॥
लहर सतसँग की जब चटकै । हर दम पिय० ॥ ११ ॥
जबर जेठ की रीति करै कोइ किंकर जब होवै ।
मन के विषम विकार काढ़ि के तुलसी सब धोवै ॥
भरम तजि भक्ति भजन करना ।
मन मूरख को बाँधि पकड़ कर जीवतही मरना ॥
निकल घट न्यारी है फटकै ।
हर दम पिय की पीर दरस बिन मन मेरा भटकै ॥१२॥

काष्ठ जिह्वास्वामी (देव)

जीवन समय—सं० १८३४ से १९०९ तक । जन्म स्थान—काशी । सतसंग स्थान—काशी और रामनगर । जाति—सरजूपारी ब्राह्मण भीटी मिश्र शाखा के।

इन का विवाह काशी ही में हो गया था परंतु वैराग्य उपजने पर गृहस्थ आश्रम को त्याग कर सन्यास ले लिया और देवतीर्थ स्वामी नाम हुआ ।

आप बड़े पंडित थे और एक बार अपने गुरू से विवाद किया जिस के प्रायश्चित में अपनी जीभ पर काठ की खोल चढ़ा कर सदा को बोलना बंद कर दिया और तख्ती पर लिख कर बात चीत करने लगे । यह केवल साग पात खाते थे । महाराज ईश्वरी प्रसाद नारायणसिंह काशिराज के आप दीक्षा-गुरु थे। लगभग ७५ बरस की अवस्था में कुआर बदी १२ सम्वत १९०९ को चोला छोड़ा । इन्हों ने विनयामृत और कई छोटे छोटे ग्रंथ लिखे हैं।

॥ प्रेम ॥

(१)

बसो यह सिय रघुबर को ध्यान ।
स्यामल गौर किसोर बयस[2] दोउ, जे जानहुँ की जान ॥१॥

---

(१) भँवरा । (२) युवा अवस्था ।

लटकत लट लहरत स्रुति कुन्डल, गहनन की भमकान।
आपुस मैं हँसि हँसि कै दोऊ, खात खियावत पान ॥२॥
जहँ बसत नित महमह महकत, लहरत लता वितान[१]।
बिहरत दोउ तेहि सुमन बाग मैं, अलि कोकिल कर गान ॥३॥
ओहि रहस्य सुख रस को कैसे, जानि सकै अज्ञान।
देवहु की जहँ मति पहुँचत नहिं, थकि गये वेद पुरान ॥४॥

(२)

चीखि चीखि चसकन से राम सुधा पीजिये।
राम चरित सागर मैं रोम रोम भींजिये ॥१॥
राग द्वेस जग बढ़ाइ काहे को छीजिये।
परदुक्खन देखत हीं आप सों पसीजिये ॥ २ ॥
तोरि तारि खैंचि खाँचि स्रुति को नहिं मींजिये।
जा मैं रस बनो रहै वही अर्थ कीजिये ॥ ३ ॥
बहुत काल सन्तन के दोऊ चरन मींजिये।
देव दृष्टि पाइ विमल जुग जुग लौं जीजिये ॥ ४ ॥

॥ विनय ॥

मैं तो मन ही मन पछिताय रह्यौ ॥ टेक ॥
साज समाज सरस पायहु के, कर से रतन गंवाय रह्यौ ॥१॥
यह नर तन यह काया उत्तम, बिन सतसंग नसाय रह्यौ ॥२॥
पढ़यौ गुन्यौ सिखयौ औरन को, आप विषय लपटाय रह्यौ ३
चित्र विचित्र करम को धागा, जनम जनम अरुझाय रह्यौ ॥४
काहे को कबहूँ यह सुरझहि, दिन दिन अधिक फँसाय रह्यौ ५
सदा मुक्ति को ज्ञान अगम लखि, गले हार पहिराय रह्यौ ॥६
जिव को सूत सिवहि से अरुझै, विनती देव सुनाय रह्यौ ॥७

(१) मंडप।

॥ उपदेश ॥

(१)

कोई सफा न देखा दिल का, साँचा बना भिलमिल का ॥टेक
कोइ बिल्ली कोइ बगुला देखा, पहिरे फकीरी खिलका[1]।
बाहर मुख से ज्ञान छाँटते, भीतर कोरा छिलका ॥ १ ॥
भजन करन मैं गजब आलसो, जैसे थका मँजिल का।
औरन के पीसन मैं सुरमा, जैसे बट्टा सिल का ॥ २ ॥
पढ़े लिखे कुछ ऐसेहि वैसे, बड़ा घमड अकिल का।
जहरी बचन योँ मुख से निकलें, साँप निकलता बिलका ॥३
भजन बिना सब जप तप भूठा, भूठ तवक्का फजल[2] का।
क्या कहिये गुरुदेव न पाया, महरम[3] आँख के तिल का ॥४

(२)

समुभ बूभ जिय मैं बन्दे, क्या करना है क्या करता है।
गुन का मालिक आपै बनता, अरु दोष राम पर धरता है ॥१
अपना धरम छोड़ि औरों के, ओछे धरम पकेरता है।
अजब नसे की गफलत आई, साहिब को नहिं डरता है ॥२॥
जिनके खातिर जान माल से, बहि बहि के तू मरता है।
वे क्या तेरे काम पड़ैंगे, उनका लहना भरता है ॥ ३ ॥
देव धरम चाहे सो करि ले, आवागमन न टरता है।
प्यारे केवल राम नाम से, तेरा मतलब सरता है ॥ ४ ॥

फुटकर

कवित्त

काहू के अधार सेवा बनिज व्योपार को है,
काहू के अधार थित वित खेत गाम को ॥

---

(१) खिरका=गुदड़ी। (२) बड़ाई की आशा। (३) भेदी।

काहू के अधार तन सार भ्रात बंधुन को,
काहू के अधार प्रिय सार निज नाम को ॥
काहू के अधार विद्या बुद्धि अरु बल को है,
काहू के अधार हाथी घोड़ा धन धाम को ॥
मैं तो निराधार मेरी हरिहि करैंगे सार,
मेरे तो अधार एक जानो हरि नाम को ॥

कवित्त

कब को पुकारत हौं सुनौ नहीं एको बात,
एहो नँदलाल तुम कैसे प्रतिपाल हो ॥
कहैं हैं दयाल सो तो दया हू न देखियत,
मेरी मति ऐसी ओछी नीके पसुपाल हो ॥
धर्यो हो नृसिंह रूप तबहीं प्रह्लाद काज,
अब तो न लाज कछू गोधन में ग्वाल हो ॥
डार्यो तेल कान में कि बस्यो जाय कानन[1] में,
सेस सेज लेटि कि धौं पौढ़े जा पताल हो ॥

सवैया

आईं सबै ब्रज गोप लली, ठिठकीं ह्वै गली जमुना जल न्हाने १
औचक आय मिले रसखान, बजावत बेनु सुनावत तानैं ॥२
हाहा करी सिसकीं सिगरी, मति मैन[2] हरी हियरा हुलसाने ३
घूम दिमाने[3] अमाने चकोर से, ओर से देऊ चलैं दृग बानैं ॥४

सवैया

सुनिये सब की कहिये न कछू, रहिये इमि या भव बागर[4] में १
करिये व्रत नेम सचाई लिये, जिन तें तरिये भव सागर में ॥२
मिलिये सब सों दुरभाव बिना, रहिये सतसंग उजागर में ३
रसखान गुविंदहि यों भजिये, जिमि नागरि[5] को चित गागर में ॥४

(१) वन। (२) कामदेव। (३) दीवाने। (४) झाड़ी। (५) चतुर स्त्री।

सवैया

वह साँवरो नन्द को छैल अली, अब तो अति ही इतरान लगो १
नित घाटन बाटन कुंजन मैं, मोहिं देखत हो नियरान लगो २
रस खान बखान कहा कहिये, तकि सैनंन सों मुसकान लगो ३
तिरछी बरछी सम मारत है, दृग बान कमान सु कान लगो ४

शब्द

कहँ गये प्यारे, झलक दिखा के ॥ टेक ॥
हिरदे बसी माधुरी मूरत, कस जाव प्रीतम खूँट छुड़ा के ॥१
विरह अगिन ने तन मन फूँका, हिया जुड़ावो अमी चुवा के २
भई बावरी इत उत डोलौं, तन मन की सब सुद्धि भुला के ३
मैं तो हौं पतितन को नायक, कैसे बचिहौ पन[1] बिसरा के ४
अब तो कर मैं लीन्ह सिंधोरा, तुम से मिलिहौं देह जरा के ५
बाँह गहे की लाज तुम्हीं को, का पै जावौं तुम्हरो कहा के ६
प्रेम प्रसाद देहु निज स्वामी, मोको दासनदास बना के ॥७॥

रुबाई

ख़ाक आप को समझना, इक्सीर[2] है तो यह है।
इख़लाक़[3] सब से रखना, तसख़ीर[4] है तो यह है ॥
सब काम अपना करना, तक़दीर के हवाले।
नज़दीक आरिफ़ों[6] के, तदबीर है तो यह है ॥

रुबाई

वीरॉ किया जब आप की बस्ती नज़र पड़ी।
जब आप नेस्त हम हुए हस्ती नज़र पड़ी ॥
देखा तो ख़ाकसारी ही आली मुक़ाम है।
ज्यों ज्यों बलंद हम हुए पस्ती नज़र पड़ी ॥

॥ इति ॥

---

(१) पतित-पावन होने का प्रण। (२) रसायन। (३) आदर सत्कार। (४) वशी करन। (५) मोज। (६) साधों।

शुद्धि पत्र

शब्द संग्रह

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	४	लघा	लह्यो
६	२ (फुटनोट)	उन्हों	उन्हें
७	५	नावह धुअटाना	ना वह कुअटा ना
१२	५	फग	फाग
१८	३	मं	मँ
२०	१६	घर	घर
२७	२	कोटि	कोटि
३२	(संक्षिप्त जीवन)	कग्रह	सग्रह
४६	१७	रेन	रेन
५८	११	इस्थि	इस्थिर
६५	६	जगजीस	जगदीस
७१	९	म	मँ
७३	१४	वरि	करि
७८	९ (जीवन चरित्र)	कया	कथा
८०	१० (फुटनोट)	हँसगे	हँसेंगे
८०	१५ फुटनोट	मसा	मनसा
८४	१६	ताहि	ताहि[1]
८७	१	द्रयों	ज्यों
८७	२	ज्टत	टूटत
८७	२	की	की[1]
८८	२१	वानर	वानर[1]
८९	१८	हेय	होय
८९	२ (फुटनोट)	म	मैं
९०	३	जेति	जोति
९७	७१	रह्या	रह्यौ
१०३	२	वाव,	वाघ

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१०७	१८	वरधार	वारवार
११६	१३	नोर	नार
१२०	१	वासना,	वासना'
१२८	३	मॅझारे हे	मॅझारे हो
१२९	५	घरनी	वरनी
१३२	१०	ह	है
१३६	१७	विसा	विसारी
१४३	९	ससुझि	समुझि
१४४	२	म	में
१५३	६	फनपनि'	फनपति'
१६२	३	क्राध	क्रोध
१७३	२ (फुटनोट)	साग	आग
१८३	१	तुआ	हुआ
१८४	२ (फुटनोट)	कीति	कीर्ति
१९०	४	काजा	काजी
१९०	८	[ल	जितवल²
१९१	१	मे	में
२०५	१०	लन	मन
२०७	२	स्रदर	सुदर
२०९	१९	उक्ता	उक्ती
२१०	८	विसाहन	विसाहन१
२१५	१८	तुम्ह	तुम्हें
२१५	१९	ताइ	ताईं
२१९	१ (फुटनोट)	म	में
२२१	१४	मोरा	मोरी
२२६	४	दीपद	दीपक
२५०	२	पार	पीर
२५१	९	सम्हारी	सम्हारी४
२५६	१५	तकदीर	तकदीर६

फ़िहरिस्त छपी हुई पुस्तकों की

जीवन-चरित्र हर महात्मा के ठन की बानी के आदि में दिया है

कबीर साहिब का साखी संग्रह १=)
कबीर साहिब की शब्दावली, भाग पहला ॥), भाग दूसरा ।।।)
" " भाग तीसरा ।≈), भाग चौथा ≡)
" " ज्ञान गुदड़ी, रेख़्ते और झूलने ।=)
" " अखरावती =)
धनी धरमदास जी की शब्दावली और जीवन-चरित्र ॥-)
तुलसी साहिब (हाथरस वाले) की शब्दावली और जीवन-चरित्र भाग प० १≈)
" " भाग २, पद्मसागर ग्रंथ सहित १≈)
" " रत्न सागर मय जीवन-चरित्र १।-)
" " घट रामायन मय जीवन चरित्र, भाग १ १॥)
" " " भाग २ १॥)
गुरु नानक की प्राण-संगली सटिप्पण, और जीवन चरित्र, भाग पहिला १॥)
" " भाग दूसरा १॥)
दादू दयाल की बानी, भाग १ 'साखी' १॥) भाग २ "शब्द" १)
सुंदर विलास १-)
पलटू साहिब भाग १—कुंडलियाँ ।।।)
" भाग २—रेख़्ते, झूलने, अरिल, कवित्त, सवैया ।।।)
" भाग ३—भजन और साखियाँ ।।।)
जगजीवन साहिब की बानी भाग पहला ॥-) भाग दूसरा ।।।-)
दूलन दास जी की बानी ।)॥
चरनदासजी की बानी और जीवन चरित्र, भाग प० ॥-), भाग दू० ।।।
गरीबदास जी की बानी और जीवन-चरित्र १।-
रैदास जी की बानी और जीवन-चरित्र ॥
दरिया साहिब (बिहार वाले) का दरिया सागर और जीवन चरित्र -।≡)।
" के चुने हुए पद और साखी ।-
दरिया साहिब (मारवाड़ वाले) की बानी और जीवन चरित्र ।≡
भीखा साहिब की शब्दावली और जीवन चरित्र ॥≈)
गुलाल साहिब (भीखा साहिब के गुरु) की बानी और जीवन चरित्र ।।।
बाबा मलूकदास जी की बानी और जीवन चरित्र
गुसाईं तुलसीदास जी की बारहमासी

यारी साहिब की रत्नावली और जीवन-चरित्र	≈)
बुल्ला साहिब का शब्दसार और जीवन-चरित्र	।)
केशवदास जी की अमीघूँट और जीवन-चरित्र	-)॥
धरनीदासजी की बानी और जीवन-चरित्र	।≈)
मीरा बाई की शब्दावली और जीवन-चरित्र	॥)
सहजो बाई का सहज-प्रकाश और जीवन-चरित्र	।≡)॥
दया बाई की बानी और जीवन-चरित्र	।)
संतबानी संग्रह, भाग १ [साखी]	१॥)
[प्रत्येक महात्मा के संक्षिप्त जीवन-चरित्र सहित]	
संतबानी संग्रह भाग २ [शब्द]	१॥)
[ऐसे महात्माओं के संक्षिप्त जीवन-चरित्र सहित जो भाग १ में नहीं दी हैं]	
	कुल ३३।-)

दूसरी पुस्तकें

लोक परलोक हितकारी सपरिशिष्ट [जिसमें ऐतिहासिक सूची व १०२ स्वदेशी और विदेशी संतों, महात्माओं और विद्वानों और ग्रंथों के अनुमान ६५० चुने हुए वचन १६२ पृष्ठों में छपे हैं] तसवीर सहित — सजिल्द १।), बेजिल्द ॥≈)

(परिशिष्ट) बेजडेनगीने	≥)
अहिल्याबाई का जीवन चरित्र अँग्रेजी पद्य में	≥)

नागरी सीरीज

सिद्धि	॥)
उत्तर ध्रुव की भयानक यात्रा	॥)
"सावित्री गायत्री"	॥)
करुणा देवी (स्त्री शिक्षा का अपूर्व उपन्यास)	॥=)
महारानी शशिप्रभा देवी (अनूठा उपन्यास)	१।)
द्रौपदी (चित्र सहित छप रही है)	

दाम में डाक महसूल व रजिस्टरी शामिल नहीं है वह इसके ऊपर लिया जायगा। ग्राहकों से निवेदन है कि अपना पता साफ लिखें।

[सन् १९२७ ई०] मनेजर, बेलवेडियर प्रेस, इलाहाबाद।